Shree PAHARI

शेषनाग की थाती

[तेरह कहानियां]

श्री 'पहाड़ी'

प्रकाशगृह, इलाहाबाद

प्रकाशकः प्रकाशगृह, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : मई १९४८
मूल्य : तीन रुपया, बारह आना

मुद्रकः—शारदा प्रसाद, देश सेवा प्रेस, इलाहाबाद

लगभग डेढ़ साल के बाद मैं अपने पाठकों को अपना नया कहानी संग्रह दे रहा हूँ। इसमें तेरह कहानियां हैं। युद्ध काल के बाद मध्यवर्ग की स्थिति, साम्प्रदायिक-झगड़े, जहाजियों का विद्रोह, पहाड़ी समाज के चित्र के साथ-साथ दो कहानियाँ 'मौत की घाटी' तथा 'सीमान्त का पथिक' ऐसी हैं, जिनका सम्बन्ध न आज के समाज से है, न आज के युग से है। अँग्रेजी में 'अद्भुत कहानियां' का जो स्थान है, वही मात्र इनका भी है।

आज हमारे देश में ऐसे परिवर्तन हो रहे हैं कि सामयिक-वातावरण को लेकर रचनाएँ करने के लिए लेखक विवश है। मैं उस ओर सचेष्ट होकर भी अपनी पुरानी कमजोरियों के कारण अपना पुराना 'मोह' नहीं छोड़ पाता हूँ।

कहानी-लेखक बन जाने के बाद ही मैं प्रगतिशील लेखकों के आन्दोलन में आया हूँ। उस आन्दोलन से मैंने नए प्राण पाए और आज जो कुछ लिख पाता हूँ, यह सब उसी आन्दोलन का फल है।

१५ अगस्त को हमें 'कथित स्वतंत्रता' मिली है, हमारा कर्त्तव्य है कि उसे 'सही' बनावें। नया राष्ट्र, नया विधान बन रहा है; लेखक उससे अलग नहीं रह सकता है। पूँजीवादी प्रकाशक ने सदा से प्रगतिशील साहित्य की धारा को रोकने की चेष्टा की है; लेखक का शोषण किया है और वे इसके विरोध में आज नया गठबन्धन कर रहे हैं। अतएव आज हमें जनता के समीप पहुँच कर उनको साहित्य देना है। तथा

कल उनको साथ लेकर पूँजीवादी प्रकाशकों के मोर्चे को तोड़ना है। हमारा आन्दोलन अजेय है, क्योंकि हम ईमानदारी के साथ अपने पाठकों में जीवन और समाज के कल्याण की भावना जाग्रत करते हैं। यदि इस दृष्टि से केवल 'प्रचारक' भर कहे जायँ तो हमें शर्म नहीं है।

इन कहानियों में जो सबल हैं वही प्रगतिशील हैं और जिनमें मेरी पिछली कमजोरियाँ हैं, वे मेरी 'अपनी' हैं। प्रगतिशील साहित्य से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

१ मई, १६४८ पहाड़ी

साथी नागेन्द्रदत्त सकलानी को

"लाल झंडा पहले सुफेद था। वह तो मज़दूरों के खून से रंग कर लाल हुआ है।"

आज से लगभग दो साल पहले सकलानी ने गढ़वाल में एक सभा में ग्रामवासियों को यह बताया था।

साथी सकलानी सामन्तवादी टेहरी रियासत के विरुद्ध छिड़े जन आन्दोलन में किसानों के एक मोर्चे का नेतृत्व करते हुए, छाती पर गोली खाकर शहीद हो गए।

इतिहास की गति

दमयन्ती बड़ी सुबह उठी और बच्चों को ठीक तरह से कपड़े उढ़ा कर दरवाजे की ओर बढ़ गई। उसने सावधानी से चटखनी खोली और चुपचाप बाहर आंगन में खड़ी हो गई। अभी सुबह के पांच बजे थे। नल से टप, टप कर के पानी बहने लगा। वह बरांडे में पड़ी हुई कुरसी पर बैठ कर न जाने अपने में क्या-क्या सोचने लगी। वह आठ साल के बाद पिछले दिनों अपने मायके लौट कर आई है। यहां आकर उसने पाया कि इस बीच जमाना बड़ी तेजी से बदल गया है। घर का बूढ़ा नौकर जिसने उसे बचपन से पाल-पोष करके एक दिन ससुराल विदा किया था वह पिछले जाड़ों में मर गया है। उसे उस परिवार में उसका अभाव अखरा। इधर तो परिवार के जीवन में बड़े-बड़े परिवर्तन हो गए हैं। उसे तो यह जान कर आश्चर्य सा हुआ कि तीनों भाई बँटवारा करवा कर के अलग हो गए हैं। जो संयुक्त चूल्हा परिवार में सुबह से शाम तक सुलगता रहता था, तथा जिसे संभालने में मिसरानी और तीन-चार कहार थक जाते थे, उसमें आज वह आंच नहीं बची हुई थी। पिताजी परम्परा को निभाने के लिए उस चूल्हे का मोह आज भी नहीं छोड़ पाए हैं और उनका अपना नौकर उसे चालू किए हुए रखता है। फिर भी रात्रि को उसके समीप पूरा परिवार कभी नहीं बैठता है। पिताजी को परिवार की घटनाओं से भले ही कोई दिलचस्पी न हो, पर अपने पोतों के प्रति वे कभी उदासीन नहीं रहते हैं। खिलोने, टॉफी, लेमनड्राप, चाकलेट आदि चीजें प्रति दिन मंगवाना नहीं भूलते। हठी बच्चों का दल भी पिताओं से खिंचा रहता है पर दादाजी के प्रति बहुत मोह बरतता

है। इसके विपरीत उनके बेटों को उनके प्रति कोई अपेक्षित कर्तव्य नहीं मिलता है। अतएव उस ओर कोई विशेष ध्यान नहीं देता है। वह तो अपने भाइयों में भी स्नेह की पहली वाली भावना नहीं पाती है। तीनों भाभियाँ भी अपने तक ही सीमित रहती हैं। उनका जीवन पति और बच्चों की दुनिया से बाहर नहीं दीख पड़ता है। जिस मायके के लिए वह एक कौतूहल बटोर कर लाई थी; उसे उसके भीतर का ज्ञेय अभाव अखरने लगा। वह अपने को भूल कर सी परिवार की घटनाओं पर विचार करने लगी। उसे तो लगा कि वह परिवार की विभिन्न धाराओं के बाहर बिलकुल अलग सी खड़ी है। उसका वहाँ अपना कोई अधिकार ही आज कब था! वह अपनी पिछली स्वतंत्रता के साथ वहां नहीं बैठ सकती है। उसे इस घर का पिछले कई वर्षों का जीवन याद है। शादी के बाद भी वह यहां आती-जाती रही है। लेकिन जो फीकापन उसे यहां इस बार मिला है, वह पहले कदापि नहीं था। आज तो उसे परिवार में कहीं जीवन नहीं दीख पड़ता, मानों कि सब लोग किसी भारी संघर्ष के बाद थकान मिटा रहे हों।

जब वह यहां आकर अपनी भाभियों से मिली थी तो सब में उसने एक दूरी सी पाई। कहीं अपनपा नहीं था। छोटी भाभी का चेहरा बदला हुआ मिला। चेहरे पर नीली झाइयां पड़ी हुई थीं। वह पीली पड़ गई थी। कहीं भी पुरानी कोमलता और स्वस्थता नजर नहीं पड़ती थी। बच्चों में भी नीरसता मिली। पिताजी का वह निखरा हुआ व्यक्तित्व कहीं नहीं दीख पड़ता था। पहले तो वे परिवार के साथ बैठ कर सबकी बातें सुन, उनसे सवाल पूछा करते थे। उनका परिवार के रोजाना जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध था। महरी ने बताया था कि अब वे अपने कमरे से बाहर बहुत कम निकलते हैं। सुबह-शाम घूमने के लिए जाना इतनी ही पिछली आदत बाकी बची हुई है; अन्यथा परिवार से उनका कोई जीवित सम्पर्क नहीं है। न घर

के लोगों को इसकी खास अपेक्षा ही है। तीनों भाइयों ने मिल कर परिवार के जीवन को आपस में बांट लेने की निरर्थक सी चेष्टा की है। वे संयुक्त परिवार की पिछली मान्यताओं की मखोल उड़ाते हुए, उसे अस्वीकार करके अपने तक सीमित रहते हैं। अपने व्यक्तिगत सुख-दुख के बाद उनको परिवार की सहानुभूति की भूख नहीं है। सामूहिक सहयोग की भावना उनमें नहीं मिलती है। वे आपस में साधारण व्यवहार भर बरतते हैं। परिवार की शाखाओं से दूर पड़ोसियों को समझने वाली व्यवहार कुशलता उनमें आ गई है। परिवार की किसी पिछली मान्यता का लोभ नहीं बचा हुआ है। उसकी भाभियों की स्वागत करने की चेष्टा में समीपता नहीं थी, बल्कि दूर का सहेली भाव सा उसे मिला। उस सबको देख कर वह अचरज में पड़ गई और एक सामान्य अतिथि का बाहरी दरजा पाकर चुप रह गई थी।

अब उसे अपनी माँ का अभाव अखरने लगा। यह बात सी याद आई कि माँ के साथ ही मायके का सारा नाता भी टूट जाता है। लेकिन माँ तो बचपन में ही मर गई थी। उसे उसकी कोई ठीक सी याद नहीं है। परिवार में माँ की कोई तसवीर नहीं थी कि वह उसी को देख लेती। उसका हृदय भर आया और आँखों की पलकें भीग गईं। वह अपनी भावुकता को बटोर कर मन्थर गति से भीतर चली आई और टकटकी लगा कर अपने बच्चों को निहारती रह गई। अब एकाएक किसी की आहट पाकर चौंकी। उसके पिताजी आए थे। वह अवाक् सी उनको देखती रह गई। वे चुपचाप कुछ देर खड़े रहे और बाहर जा रहे थे कि पूछ बैठी दमयन्ती, "बाबूजी घूमने जा रहे हो।"

उन्होंने सिर हिलाया। पिताजी के साथ बचपन में अक्सर दमयन्ती घूमने जाया करती थी, किन्तु आज वह उत्साह नहीं है।

वह भी इधर अपने को बहुत थकी हुई पाती है। पिछले छै साल के युद्ध ने उस पर गहरा प्रभाव डाला है। नौकर नहीं मिला। महरी सात रुपये में मिली भी तो वह सन्तोषजनक कार्य नहीं करती थी। फिर शहर के एक मोहल्ले में चार-पांच कमरों की चाहरदीवारी वाले मकान से बाहर वह कभी नहीं निकल सकी थी। उस मोहल्ले का जीवन स्थिर सा हो गया था। मानो कि समूचा जीवन जम गया हो। गृहस्थी की रोजाना झंझटें! फिर जरा-जरा सी बात पर उनकी गृहस्थी अटक जाती थी। लेकिन वह युद्धकाल तो बीत चुका था। दुनिया एक नई दिशा में करवट बदल रही थी। उसका ख्याल था कि मायके वाला परिवार उसी पुरानी व्यवस्था को अपनाए हुए होगा। वह बात झूठी निकली। संयुक्त परिवार की परम्परा नष्ट होकर नए-नए परिवारों के टुकड़ों में सी बंट चुकी थी।

उसका बड़ा भाई रेविन्यू आफिसर हो गया था। बड़ी भाभी अफसराना ढंग से बातचीत करती सी लगी। बार-बार वह अपनी उन सहेलियों का हाल सुनती थी जिनके यहां वह जाया करती है। शहर में कोई औरतों का क्लब था। वह उसकी सदस्या थी। अगले सालाना जलसे के अवसर पर वह दमयन्ती को वहां ले जाने का न्योता दे चुकी है। उसने उसे समझाया था कि छोटी सरकारी नौकरी से कोई लाभ नहीं होता है। उसके साहब तो बड़े अफसर हैं। वह एक अधिकारी की पत्नी है। इस बात को तो वह कई बार दुहरा चुकी थी। फिर उसका तो रोना था कि वे कोई अलग बंगला लेकर नहीं रहते हैं, अतएव वह अपनी सहेलियों का दावत नहीं दे सकती है। पुराने जमाने का मकान है, एक बैडमिन्टन कोर्ट बनाने तक के लिए तो ठीक सी जगह नहीं है। उधर बाहर लाउन पर ससुरजी मोहल्ले के बुड्ढों की चौकड़ी जमाए रहते हैं। वहाँ निकलना भी कठिन हो जाता है। उनके बच्चे किसी अंगरेजी मदरसे में

पढ़ते हैं। वह उन बच्चों के भविष्य की सुन्दर झांकियाँ देने में नहीं चूकी थी। तथा बात की बात में यह भी सुनाया था कि उनके सोहन, जिसकी उम्र तेरह साल की है, से डिप्टी साहब की बीबी ने अपनी सात साल की लड़की की मंगनी अभी से तय सी करली है।

अपनी मझली भाभी की बातों की ओर भी वह ध्यान देने लगी। वह बहुत कम बातें करती थी। उसके पिता डाक्टर थे और वह एम० ए० तक पढ़ी थी। मझले भइय्या ने पिछले दिनों व्यापार शुरू किया था। चोर बाजार के बल पर सुना कि काफी रुपया कमाया है। परिवार के बंट जाने पर भी उनकी आमदनी का थोड़ा थोड़ा हिस्सा सबको मिला करता है। उनका कहना था कि मर्द का काम तो रुपया कमाना और खर्च करना भर है। भाभी ने भी कभी उनको रोकने की चेष्टा नहीं की। उसे अपनी किताबों की दुनिया अधिक पसन्द थी। नौकर गृहस्थी चलाते थे। इस भाभी में फिर भी उसे एक अभाव दीख पड़ा। उसकी अवस्था पच्चीस पार कर चुकी थी, पर अभी तक गोद सूनी थी। दमयन्ती ने भाभी से इसकी चर्चा की तो वह हँस कर बोली थी कि उसकी कमी को भी दमयन्ती पूरी कर बैठी है। इसके बाद भी भाभी में एक बेचैनी उसने पाई थी। एक दिन रात को वह उसी के साथ सो गई थी। भाभी ने बताया था कि वे बाहर से तीन-तीन, चार-चार बजे रात से पहले लौट कर नहीं आते हैं। शराब पीना तो आसान सी बात है। भाभी ने अपना दिल खोल कर रख दिया था कि परिवार की अकेली लड़की होने के कारण उसके साथ एक लड़के का सा सलूक रखा गया था। वह शादी करने के पक्ष में नहीं थी। इसीलिए एक इन्टर कालेज में प्रिन्सिपल की नौकरी उसने स्वीकार करली थी और छै महीने वहाँ उसने काम किया था। पिताजी के कहने पर परिवार की मर्यादा की रक्षा करने के लिए उसने यह बन्धन स्वीकार किया था। पति की

कोई खास निन्दा न कर सामाजिक व्यवस्था की उसने आलोचना की थी। भाग्य को दोष भी उसने नहीं दिया था। यह भेद की बात बतादी थी कि उसने फिर नौकरी करने का विचार कर लिया है तथा तीन-चार जगह दरख्वास्तें भेज दी हैं। वह शीघ्र ही नौकरी पर चली जावेगी। इस भाभी की ममता उसके बच्चों पर बहुत थी। आते ही उसने उनको अपनी संरक्षता में ले लिया था। मसीन पर उनके लिए नए-नए डिजाइन के कपड़े भी सिले थे। सुन्दर गुड्डे बनाए थे। उनके लिए खिलौने मंगा-मंगा कर ढेरी लगा दी थी। जब कभी परिवार में गुड्डे-गुड़िया की शादी होती थी तो वह चाव से उनमें शामिल होकर उसे सुचारु रूप से निपटा देती थी। वह क्लब नहीं जाती थी। उसे तो अपनी किताबों की दुनिया बहुत पसन्द थी। पति से वह कभी नहीं झगड़ती थी। न बड़ी भाभी वाला बड़प्पन ही उसमें था। वह तो बहुत सरल थी। दिन भर रेडियो के पास बैठ कर गाने सुनती थी। पति से कोई खास नाता भी उसका नहीं था।

दमयन्ती का तीसरा भाई बैंक में एकाउन्टेंट है। उनके ससुर कलक्टरी में नाजिर थे। वह भाभी अपने मिजाज में ही फूली रहती थी। उसका रोना परिवार की छोटी आमदनी के लिए था। वह प्रति दिन अपने पिता के ऐश्वर्य का बखान किया करती थी। उसका ख्याल था कि भगवान् किसी को रुतबा दे तो नाजिर का। तनख्वाह भले ही थोड़ी हो, बाहरी आमदनी तो है। अफसर तो आते-जाते रहते हैं। लोगों का काम तो बस पेशकार और नाजिर से ही पड़ता है। कुछ बातों में वह भले ही पिछड़ी हुई हो, पर प्रति वर्ष सोने का एक अंडा दे देना उनका धर्म था। वे अब तक पांच कन्याएँ आसानी से प्रदान कर चुकी थीं। वह बात-बात पर अपनी जिठानियों से झगड़ा मोल ले लेती थी। साधारण बोलचाल से गालियों पर

चुपचाप उतारू हो जाती थी। यह सब उसके लिए बहुत आसान था। पति के घर लौटने पर रात को सदा ही वह उन पर ताना मारा करती थी कि घर में भूँजी-भांग नहीं थी तो ब्याह करके क्यों लाए थे। दमयन्ती के आगे वह अपनी गरीबी का विस्तार से वर्णन करने में नहीं हिचकती थी कि उनका खर्चा आमदनी से तिगुना-चौगुना बढ़ गया है। पहले तो वह अपने मायके से चीजें ले आती थी, पर अब बच्चों के मारे वहां भी नहीं जा पाती है। मझले जेठ थोड़ी बहुत मदद कर देते हैं, पर उससे परता पूरा नहीं पड़ता है। फिर बड़ी लड़की की उम्र ग्यारह हो गई है। तीन-चार साल में उसकी शादी का प्रबन्ध भी करना होगा। दमयन्ती को याद आता कि उसकी यह भाभी पहले बहुत उदार थी। अब वह कितनी बदल गई है। उम्र में सबसे छोटी होने पर भी वह सबसे बूढ़ी लगती है। सुबह से शाम तक घर के काम पर जुटी रहती है। इधर दो साल से बीमार रहने लगी है। कमर में दर्द रहता है। साथ ही इस बात का भी दुख है कि कन्या पराया धन होती है। यदि एक लूला ही लड़का होता तो अपना सहारा होता। उसे छोटे भैय्या से सहानुभूति मिली थी। उन्होंने दमयन्ती से परिवार की छोटी-बड़ी सब बातें ब्योरेवार पूछ कर आज तक न बुलाने के लिए माफी मांगी थी। उनकी बातें आसानी से हृदय को छू लेती थीं।

वह तो चुपचाप परिवार के भीतर दिन व्यतीत करने लगी। पिताजी ने ही उसका समस्त भार उठाया था। वे नहीं चाहते थे कि वह परिवार के बँटवारे से उलझ जाय। दमयन्ती अपने बाबूजी के बहुत समीप रहने लगी। सुबह उठ कर वह बाबूजी के साथ घूमने के लिए जाती थी। दिन भर वह उनकी बातें सुनती। बाबूजी खुद अखबार नहीं पढ़ पाते थे। मझली भाभी उनको सुनाया करती थीं। कभी-कभी बाबूजी सुनाते थे कि आज उनको किसी बेटे पर विश्वास नहीं

रह गया है। एक भी लायक नहीं निकला है। दमयन्ती स्वयं अनुभव कर रही थी कि सच ही आज वह पुराना मायका नहीं रह गया है। वह कभी-कभी अपने भाइयों के आमंत्रण पर बच्चों के साथ उनके पास जाती थी। अन्यथा रोजाना जीवन में किसी से खास सम्बन्ध नहीं है, तीनों भाभियां और भाई अपनी-अपनी दुनिया में रहा करते थे। लेकिन बच्चे फिर भी संयुक्त परिवार की मर्यादा की रक्षा करने के लिए बाहर बाग में शाम को इकठ्ठा होकर खेला करते हैं। कभी-कभी उनका झगड़ा भीतर भाभियों तक पहुँच जाता था। बस देवरानी-जेठानी के बीच शुद्ध सांस्कृतिक गालियां चालू हो जाती थीं। एक बार दमयन्ती के बच्चे भी बाहर झगड़ पड़े थे। दूसरे दिन से उसकी बड़ी भाभी ने अपने बच्चों को खेलने के लिए नहीं जाने दिया था। बच्चों ने कितनी ही चेष्टा की पर असफल रहे। पुचकारने पर भी जब बच्चे नहीं माने तो मारपीट कर उनको कमरे के भीतर बन्द कर दिया गया। दमयन्ती ने मझली भाभी से जब यह बात सुनी तो ऊपर जाकर बड़ी भाभी से बिनती की, पर वह नहीं मानी। दमयन्ती अपना सा मुँह लेकर लौट आई और छोटी भाभी के ताने पाकर तो वह आश्चर्य चकित रह गई। यह कैसी नई व्यवस्था समाज के भीतर आ रही थी? वह इसका अनुमान नहीं लगा सकी। मानव के वे सुन्दर माया-ममता वाले बन्धन इतनी आसानी से टूट सकते हैं, उसे इसका अनुमान नहीं था। उसे तो लगा कि उनका शहर के मोहल्ले वाला नया जीवन, इस जर्जर पुराने परिवार से ज्यादा स्वस्थ है। वहां के लोग आपस में एक-दूसरे से सहानुभूति तो बरतते हैं। वहां बड़ी-बड़ी इमारतों में पार्टिशिन हैं, जिनमें कई-कई परिवार आश्रय पाते हैं। लेकिन वहां कोई बड़ा और छोटा नहीं है। न किसी को साधारण दंभ ही छू पाता है। जब कि इस परिवार में लगता है कि उसके भाई एक दूसरे से बड़ी दूर हट गए हैं।

दमयन्ती का दिल कुछ दिनों के बाद ही इस परिवार में घुटने लग गया। आपसी झगड़ों, तानों तथा अन्य बातों से वह ऊब सी गई। बड़ी भाभी रोज सुनाती थी कि ससुरजी ने बंटवारा ठीक तरह से नहीं किया है। छोटे लड़के को जान बूझ कर ज्यादा दिया है। यह सा भी उसने कहा था कि छोटी भाभी उससे डाह रखती है। भगवान सोहन को अच्छा रखे। वही तो उनका सहारा है। फिर वही मान-सम्मान वाली बातें आगे लाई थीं। बड़े भाई साहब ने तो यह सा कहा था कि हमने अपनी हैसियत से बड़े घर में शादी की, अब निभाना ही पड़ता है। लेकिन छोटे घर की लड़कियां लाना तो शोभनीय नहीं होता। उनका यह इशारा छोटी भाभी की ओर था। वे तो कहते थे कि आपसी झगड़ों के मारे परिवार में कहीं शान्ति नहीं है। उन्होंने चुपके यह भी बताया था कि चार-पांच रोज में वे किराये के बंगले में जाने वाले हैं। फिर सच ही एक दिन संध्या को अपने सेट पर एक बड़ा ताला डाल करके वे सब चले गये थे। उस दिन बड़ी भाभी बहुत खुश थी। उसने बार-बार दमयन्ती से अनुरोध किया था कि वह उनके यहां जरूर आए। वह तांगा भेजेगी। वे वहां से घूमने जावेंगी। कम्पनी बाग बहुत नजदीक है। कई सिनेमा भी शहर में चल रहे थे। वह घर को ठीक करके आदमी भेजेगी। वहां दमयन्ती को हफ्ते भर रहना होगा। वह तैयार रहे।

दमयन्ती ने भाभी की सारी बातें स्वीकार कर ली थीं। वे लोग चले गए तो घर में एक अजीब सी उदासी छा गई। रात को वह बाबू जी के पास बैठी हुई थी। बाबूजी चुप थे। उनके ऊपर उक्त घटना का कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा था। दमयन्ती तो चुपचाप बैठी ही हुई रही। अब बाबूजी बोले, "बेटी समझ में नहीं आता कि आज दुनिया किस ओर बढ़ रही है। बुद्ध का वह महामंत्र ! आज तो लड़ाई ने हमारे हृदय को बिलकुल पत्थर बना दिया है। प्रकृति ने क्या-क्या खेल

संसार में नहीं खेले। पहले बड़े-बड़े जानवर होते थे। प्रकृति रुष्ट हो गई। वे भूख से तड़प तड़प करके मर गए। प्रकृति ने उनके खाने की कोई व्यवस्था नहीं की और वे अपनी चरबी खा करके ही अधिक दिनों तक जीवित नहीं रह सकते थे। फिर कुछ भयंकर जीव पैदा हुए, जो कि उतने विशाल नहीं थे पर बहुत क्रोधी, खूँखार और लड़ाकू थे। उनकी गतिशीलता ने उनको आपस में ही लड़ा कर नाश करवाया। आदि मानव और आज का उसका स्वरूप कितना भिन्न सा है। आज एक जाति तो दूसरी जाति के ऊपर प्रभुत्व जमा ही रही है और व्यक्तियों में भी कोई आपसी स्नेह की डोरी नहीं बची हुई है। छै साल के इस महायुद्ध ने हमें क्या सिखलाया है—झूठ, फरेब और जाल रचना! हर एक जाति ने अपने शत्रु के विरोध में प्रति दिवस कितना झूठा प्रचार नहीं किया है। दूसरी जाति से हम मानो कि और कुछ भी नहीं सीख सकते हैं। जो बच्चे तब दस साल के थे वे आज सोलह और बारह साल वाले अठारह के हो गए हैं। उन बच्चों के मन और मस्तिष्क पर इसका जरूर असर पड़ा होगा। कल इन बच्चों से समाज क्या आशा कर सकता है ?"

वे चुप हो गए। दमयन्ती टकटकी लगाकर पिताजी की ओर देख रही थी। मां की मृत्यु के बाद उन्होंने लोगों के दबाव डालने पर भी दूसरी शादी नहीं की थी। साथ ही बच्चों की देखभाल में स्वयं ही बड़ी दिलचस्पी ली थी। दमयन्ती की शादी के अवसर पर वे एक एक चीज स्वयं लाकर दमयन्ती से पसन्द करवाते थे। उसे साथ लेकर वे बार-बार बाजार जाते थे। नए डिजाइनों को देख कर हँसते हुए कहते थे कि अब नया जमाना आ गया है। पहले यह सब नहीं था। कभी-कभी उस पिछले युग की चर्चा भी करते थे। शादी के बाद जब वह विदा हुई तो वे फूट-फूट कर रोये थे। उनके हृदय की उस कोमलता को दमयन्ती ने पहले-पहले पहचाना था। पिताजी आज तो अब उसी

भांति बैठे हुए थे। दमयन्ती उनको देखती देखती रह गई। उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता है। आज वे अपने लड़कों की बातों से खास दिलचस्पी नहीं रखते हैं। लेकिन लड़कों की उपेक्षा अखरती है। बड़े भइय्या पर उन्होंने हजारों रुपये बहाए थे। उम्मेद थी कि वे बड़े अफसर बनेंगे, पर वह बात झूठी निकली। भइय्या लुढ़कते-पुढ़कते बड़ी कठनाई से बी० ए० और वकालत तीसरी श्रेणी में पास हुए थे। अफसरों की खुशामदें करने के बाद आजकल टेम्परेरी रेविन्यू अफसर बन गए हैं।

वहां की चुप्पी अखरने लगी तो दमयन्ती उठी और बोली, "आप सो जावें बाबूजी !"

बूढ़े ने एक बार खुली आंखों से उसे देखा और आंखें मूँद लीं। वह चुपचाप बाहर आकर अपने सोने के कमरे की ओर जा रही थी कि मझली भाभी उसे अपने कमरे में ले गई। वहां बैठा कर उसने सूटकेश खोला और ढेर सारी चिठ्ठियां मेज पर रख दीं और सुनाया कि वे अलग-अलग वेश्याओं और एंग्लोइण्डियन छोकरियों के उसके भाई के नाम लिखे प्रेम-पत्र हैं। कई पत्र उसने पढ़ कर भी सुनाए थे। यह भी बतलाया था कि उसके भाई साहब एक वेश्या को घर में बैठाने की बात सोच रहे हैं। बातचीत करीब-करीब तय हो चुकी है और लड़की के अभिभावकों को पांच हजार रुपया दिया जा चुका है। तथा सौ रुपया माहवारी बाद को दिया जायगा। साथ ही उसने उस युवती की तसवीर भी दिखाई थी, जो बहुत सुन्दर लग रही थी। उसका रूप देख कर दमयन्ती दंग रह गई। लेकिन भाभी की बात पर उसे एकाएक विश्वास नहीं हुआ, तो भाभी ने वे पत्र पढ़ कर सुनाए जिनमें वह सब विस्तार से लिखा हुआ था। साथ ही यह भी बताया कि उसके रहने के लिए अभी हाल में एक बंगला खरीद लिया गया है। उसके भाई साहब अपना अधिक वक्त भी वहीं व्यतीत किया करते हैं।

वह तो अवाक् सी सब कुछ सुनती रह गई। वह न समझ सकी कि मझले भइय्या को क्या हो गया है। उसकी यह भाभी बहुत सुन्दर और सुलझी हुई थी। लेकिन वह भाभी बोली, "दमयन्ती, हम आखिर कब तक दासी ही बन कर रहेंगी। सात भंवरें कर लेने का अर्थ तो यह नहीं होता कि मैं अपना समस्त जीवन और आशाओं को नष्ट करदूं। मैंने ससुरजी से साफ-साफ कह दिया है कि मैं अगले महीने नौकरी पर चली जाऊँगी। मैं अपना उपयोग जानती हूँ और गृहस्थी की इन कच्ची दीवारों को तोड़ कर निकल जाने में मुझे कोई कठिनाई नहीं होगी।"

दमयन्ती कुछ नहीं बोल सकी। यह घर की कैसी मर्यादा और संघर्ष था? पति की एक चिट्ठी आई थी। लिखा था कि माथुर साहब की लड़की की शादी तक उसे जरूर लौट आना चाहिए, तथा पास-पड़ोस के घरों की कई बातें लिखी थीं। वह स्वयं भी वहां चली जाना चाहती है, पर पिताजी के आगे कहते हुए हिचकती है। यहां उसे कुछ नहीं भाता है। मायका क्या हुआ कि वह तो यहां पग-पग पर उलझ जाती है। उसे कहीं समीपता नहीं मिलती है। यहां जो कुछ वह देख रही है, उससे मन लज्जा से भर जाता है। क्या इसी मायके का उसे गर्व था। लोग कहते थे कि मझले भइय्या ने लड़ाई के जमाने में लाखों रुपया कमाया है। लेकिन उसे यह मालूम नहीं था कि लड़ाई ने उनको मनुष्य से पशु भी बना दिया होगा। समाज और गृहस्थी की सीमा के बाद उन लोगों ने एक नई दुनिया का निर्माण कर लिया है। उस बस्ती का जीवन……! वहां समाज का यह नया वर्ग शायद आगे उस पर एक भार बन जायगा। पग-पग पर हर एक किस तरह संघर्ष करता है, उसे समझने की उसे एक नई दृष्टि मिली है।

भाभी से कुछ अधिक बातें न करके वह चुपचाप अपने कमरे में लौट आई। लेकिन उसे नींद नहीं आई। क्या उसने एक लंबा अरसा इस परिवार में नहीं काटा था। वह कई पिछली बातों पर सोच रही थी। उसकी ये भाभियां! वे परिवार के आपसी स्नेह-बन्धन!! आज वह यह

सब क्या देख रही थी। वह बड़ी देर तक करवटें बदलती रही और फिर उठ कर खिड़की के पास खड़ी हुई। आसमान पर तारे टिमटिमा रहे थे! कुछ देर खड़ी रह कर वह लौट आई। उसने सोने की चेष्टा की पर असफल रही। वह चुपके उठी और बाहर आंगन में खड़ी हो गई। एकाएक किसी के सिसकने की आवाज कानों में पड़ी। कुछ ऐसा सा लगा कि वह स्वर मझली भाभी के कमरे से आ रहा था। वह चुपके उस ओर बढ़ी। दरवाजे पर कान लगाया। वे ही सिसकियां, सिसकियां! उसने दरवाजा थपथपाया। सिसकियां बन्द हो गई थीं। उसने अब जोर से दरवाजा खटखटाया तो भीतर की रोशनी बुझ गई। अब उसने साहस बटोर करके पुकारा, "भाभी! भाभी!!"

फिर वही चुपी रही। वह एकाएक भय से कांप उठी। एक अजीब सी सिहरन सारे बदन पर फैल गई। उसकी आंखों के आगे धुँध छा गया। वह बड़ी देर तक वहीं दीवार के सहारे खड़ी रह गई। जब वह अपने कमरे में लौटी तो बहुत थक गई थी। चुपचाप कुछ देर तक लेटी रही और फिर उठ कर सुराही से लेकर पानी पिया। नींद फिर भी नहीं आई। बस वह कुरसी पर बैठ गई और पुलओवर बुनने लगी। न जाने वह कितनी देर तक बुनती ही रही। मुर्गे की बांग कानों में पड़ी। सुबह हो आई थी। वह उठ कर खिड़की के पास खड़ी हो गई। बाहर ओस गिरी हुई थी। वह फूल और पत्तों को निहारती रही। एक मच्छर कहीं से आकर उसके कानों में पिंग, पिंग, पिंग कर रहा था। अब तक बिस्तर पर लेटी हुई बिल्ली उठी, उसने अंगड़ाई ली और उसके पावों में म्यॉऊ, म्यॉउ कर के सिर रगड़ने लगी। छोटी मुन्नी जाग गई थी। वह वहां पहुँच गई। उसका मन बिलकुल खाली हो रहा था। वह दूर अपने शहर में अपने पति के पास चली जाना चाहती थी। वह बहुत घबरा गई थी। उसके लिए परिवार के इन बलवान शहतीरों का एक-एक कर के टूट जाना नई बात थी। वह स्वयं बहुत शक्तिशाली कब थी! अब वह

अपने बिस्तर पर आकर लेट गई। मुन्नी को अपनी छाती से चिपका लिया। उसे नींद आ गई थी। वह उसी तरह सोई हुई रही।

"दमयन्ती ?"

"बाबूजी !" उसने आंखें खोलीं।

"आज घूमने नहीं चलेगी बेटी ?"

"बाबूजी।"

"तबीयत खराब है क्या !" कह करके उसके पिताजी पास आए। दमयन्ती की आंखें लाल थीं। वे चुपचाप उसका माथा दबाते रहे। दमयन्ती उसी भांति पड़ी रही। वे सब भाई-बहन पिताजी की छत्रछाया में पले और बड़े हुए थे। आज उसी स्नेह को पाकर वह फिर स्वस्थ हुई। बाबूजी बड़ी देर तक बैठे रहे। फिर मझली भाभी को बुला कर कहा, "दमयन्ती की तबीयत ठीक नहीं है। माली को डाक्टर साहब के पास भेज देना।"

"मैं ठीक हूँ बाबूजी" दमयन्ती बोली। वह तो उलझन में सी मझली भाभी की ओर देख रही थी। उसका धुला हुआ चेहरा और सूजी आंखें बतला रही थीं कि भाभी रात्रि भर किसी बड़े मानसिक कष्ट में रही है। ठोड़ी के पास एक नीला दाग सा पड़ा हुआ था। हाथ की काँच की चूड़ियां भी कम लगीं। वह चुपचाप वैसी ही लेटी रही। भाभी और पिताजी चले गए थे। नौकरानी ने बताया कि कल मझले भैया ने बहू को बहुत मारा। भाभी ने इसकी शिकायत बाबूजी से की थी। मझले भइया कल बहुत पीकर आए थे। भाभी ने अपने जाने की बात उठाई थी। बातें बढ़ गईं। भइया ने अपने सनातन वाला पुरुष अधिकार का पूरा-पूरा उपयोग किया था। समझाया था कि यदि वह ठीक तरह रहना चाहे तो रहे। अन्यथा वे औरतों को सिर पर चढ़ाने के पक्षपाती नहीं हैं।

मझले भइय्या परिवार में सब से सहृदय गिने जाते हैं। उनकी उदारता की कहानियां नौकर और नौकरानी सब सुनाती हैं। पर भाभी के प्रति उनका यह व्यवहार असह्य था और भाभी अपने भविष्य के लिए चिन्तित रहा करती है तो उचित ही है। क्या वह सच ही कहीं जाकर नौकरी करेगी ? नारी जिस आर्थिक दासता की बात को सोच कर चुपचाप घर में पड़ी रहती है, यह भाभी उस खाने-पीने और पालन-पोषण वाले अधिकार को चुनौती देकर शीघ्र ही कहीं नौकरी पर चली जाना चाहती है। उसने पढ़-लिख कर ही यह अधिकार प्राप्त किया है। यदि वह शक्तिशाली नहीं होती तो शायद इस परिवार में शराबी और वेश्यागामी पति के साथ जीवन भर बंध कर रहना पड़ता। वह इस भाभी के ज्ञान भंडार से सदा ही प्रभावित हुई है। आज वह भाभी पुरानी मान-मर्यादा को छोड़ कर उस सामाजिक-परम्परा को तोड़ने तुली है। एक अंधे पति के साथ लूली बन कर चलना उसे स्वीकार नहीं है।

"दमयन्ती !" बाबूजी घूम कर लौट आए थे। उसने आंख खोल लीं, और उठ बैठी। ठीक तरह से रजाई ओढ़ ली। उसे साधारण सी हरारत थी।

"डाक्टर आया था बेटी ?"

"नहीं बाबू जी ! मैंने मना कर दिया है।" कह कर वह टकटकी लगा, उनको देखती रही ! पिताजी बहुत थके हुए और सुस्त लगते थे। फिर भी उनके चेहरे पर एक नई ज्योति चमक रही थी। वह कुछ भी ठीक सा न सोच कर एकाएक बोली, "बाबूजी आप मझले भइय्या को क्यों नहीं समझाते हैं। बेचारी भाभी ?"

लेकिन वे चुप रहे। मानों कि इसका उत्तर उनके पास नहीं था। वे उसी भांति बैठे-बैठे न जाने क्या सोचते रहे। दमयन्ती जानती है कि आज बाबूजी का अनुशासन नहीं चलता है। कोई उनकी बातें नहीं सुनता है। न वे खुद ही इन सब बातों की ओर विशेष ध्यान देते हैं।

आजकल इमरसत की किताबें, तिलक की गीता और कभी-कभी अरविन्द की किताबें उठा कर चाव से पढ़ते हैं। वेदान्त की बातें वे दमयन्ती को भी समझाते हैं। भले ही दमयन्ती की समझ में कोई बात न आवे, फिर भी वह चाव से सब कुछ सुनती रहेगी। उसे डर लगता है कि कहीं बाबूजी समझेंगे कि वह नहीं सुन रही है तो उनके मन पर ठेस लगेगी।

कुछ दिन और कट गए। बड़ी भाभी का बुलावा आया था, पर दमयन्ती वहाँ नहीं जा सकी। और इसी बीच एक नई घटना परिवार में हुई। एक दिन शाम को मझले भइया ने सुनाया कि उन्होंने एक दोस्त से सस्ते दामों पर एक जीप मोटर खरीद ली है। फिर कुछ दिन तक तो नई गाड़ी में सब लोग खूब घूमे। बड़ी भाभी भी कभी-कभी सुबह दल-बल सहित आ धमकती थीं। मझली भाभी के घर मानो कि कोई उत्सव मनाया जा रहा हो। भाभी ने बिना किसी खिंचाव के सारा आतिथ्य स्वीकार कर लिया था। आगे यह नया शौक धीरे-धीरे पुराना पड़ गया। अब भाभी और दमयन्ती कभी-कभी घूम आती थीं। पहले भैया खुद खुशामद करके सब को तैयार करके ले जाते थे, किन्तु अब कई बार तकाजा करना पड़ता था और फिर उनको यह भी सोचना पड़ता था कि वे कब खाली रहेंगे। कई बार तो दमयन्ती और भाभी कपड़े पहन कर तैयार रहे, किन्तु गाड़ी आज चार बजे के बजाय दूसरे दिन चार बजे तक भी नहीं आई। भैया ने आसानी से माफी मांगली कि वे काम में इतने व्यस्त रहते हैं कि बिलकुल भूल गए और आगे से सावधानी बरतने का वादा किया था। लेकिन वह भूल आगे आदत बन गई और किसी ने उस ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया।

दमयन्ती बार-बार मझले भइया से कई बातें करना चाहती थी, पर अवसर ही नहीं मिलता था। लेकिन एक दिन भैया पकड़ में आ गए और दमयन्ती ने कहा, "भैया आज हम सब नई भाभी को देखने बंगले चल रहे हैं।"

भैया ने तो हँस कर स्वीकृति दे दी कि शाम को चार बजे सब तैयार रहें। दमयन्ती ने मझली भाभी को तैयार कर लिया था। मन में एक कौतूहल था। बच्चों को छोटी भाभी के पास छोड़ दिया गया। कार एक बंगले के भीतर पहुँची। दमयन्ती ने देखा कि भैया ने जिस नारी को वहां बसाया था, उसमें असाधारण आकर्षण था। वह सांवली थी पर बड़ी लुभावनी बातें करती थी। उसके कहने पर उसने एक गीत सुनाया था। उसके गले में एक नया कम्पन और लोच था। उसका गहरा प्रभाव उस पर पड़ा। भाभी ने उस रमणी से कोई खास दिलचस्पी नहीं ली, फिर भी दमयन्ती के मन पर कोई विकार अनायास उठ गया। भैया को उसने देखा। उनमें काफी उत्साह उसे मिला। भाभी की इस हार पर सोच कर वह घबरा गई। यह गृहस्थी की नारी से तुलना करने का कौन सा हथियार था? वह पुरुष के इस अधिकार को कदापि स्वीकार नहीं कर सकती है। वह उस रमणी का दरजा जान कर भी चुप रही। लौटते समय उस रमणी ने दमयन्ती के पांव छूकर अनुरोध किया था कि वे कभी-कभी आया करें। वह वहां बाग में अकेले-अकेले ऊब जाती है। दमयन्ती को तो उस युवती की बेबसी पर भी दुःख हुआ। उसका नारी हृदय पिघल आया। यह एक खरीदी हुई दासी थी। परिवार में उसका अपना कोई दरजा नहीं है। उसका कोई अधिकार भी नहीं है। वह युवती तो बार-बार भाभी से ठठोली करती थी कि वह तो उनकी भी दासी है। वह उनकी सेवा करेगी। भाभी से चुटकी लेकर कहती थी कि अब वह भी पुरानी पड़ गई है, कोई आकर्षण नहीं बचा हुआ है। यह भी सुझाती थी कि उनको अब तो समझदारी से काम लेना चाहिए। उनकी आवारागर्दी की शिकायतें उसने की थीं। भैया सब कुछ सुन कर औरतों की जात की हँसी उड़ाते रहे। उनकी डाह करने वाली प्रकृति की मखौल उड़ाई। लेकिन इसी तरह की किसी साधारण बात पर एक दिन भाभी की मरम्मत की थी। उसकी चूड़ियों को तोड़ कर उसकी झोंटी पकड़, उसका सिर फर्श पर पटका था।

उसके सुहाग की उपेक्षा कर हँसी उड़ाई थी।

लौटने पर भाभी ने चुपके उसे सुनाया था कि अब उसे सोहर गाने का प्रबन्ध कर लेना चाहिए। उस युवती का पाँचवाँ महीना चल रहा था। भाभी फीकी हँसी हँसी थी। नारी के उस सुहाग की हँसी उड़ाई थी कि घर की चाहरदिवारी के भीतर बन्द कर उसके आगे चारा डाल करके ही पुरुष की जिम्मेदारी खत्म हो जाती है। भाभी ने यह कहा था कि वह लड़की बहुत घबराई हुई थी। उसकी तबीयत ठीक नहीं रहती है। फिर वे हफ्तों तक वहां जाने का नाम नहीं लेते हैं। उसे तो विश्वास है कि वह मर जायगी। वह बार-बार विनती करती थी कि उसे हम अपने साथ ले चलें। वह तो यह भी कहती थी कि वे आज कल एक एंग्लो इन्डियन लड़की के चंगुल में फंसे हुए हैं। उसे यह भी डर है कि कहीं उन्होंने उसे छोड़ दिया तो उसकी क्या गति होगी। नारी की इस विवशता पर दमयन्ती दंग रह गई। उसने सोचा कि वह बाबूजी से सारी बातें कहेगी। लेकिन भाभी ने मना कर दिया। उसके बाबूजी भेद की सारी बातें उसे बता देते थे कि किस तरह वे वसीयतनामा में बँटवारा करेंगे। बड़े भइया ने पढ़ने में बहुत सा रुपया फूँका था, अतएव बाबूजी उनको कुछ न दे कर उनके लड़कों के नाम पर कुछ रुपया बैङ्क में जमा कर देना चाहते थे। मझले भइया की खास फिक्र उनको नहीं थी। भाभी को कुछ देने का विचार उनका था। छोटे भइया की लड़कियों की शादी का प्रबन्ध करने के लिए वे कुछ अलग रुपया रखना चाहते थे। दमयन्ती की ससुराल की गिरी हालत भी वे नहीं भूले थे और कुछ उसे भी देना चाहते थे। दमयन्ती को यह बात मान्य नहीं; पर बाबूजी का कहना था कि उसका अधिकार किसी लड़के से कम नहीं है। वह अपनी बड़ी भाभी के ताने इस पर सुन चुकी थी। वह बार-बार कहती थी कि ससुरजी की मति बुढ़ापे में सठिया गई है। घर के लड़कों का विश्वास न कर के वे बाहर वालों पर ज्यादा विश्वास करने लगे हैं। उसकी छोटी भाभी अपने

फटे हाल और गरीबी का विस्तार से बखान कर दमयन्ती को अपने पक्ष की बातें ससुरजी के सामने रखने की बात कहती थी। बड़े भइया को भले ही इस सब से खास दिलचस्पी न हो, पर भाभी बार-बार चक्कर लगाया करती थी। नौकरानियों से जांच-पूछ कर पता लगाती थी कि वकील तो नहीं आए। वसीयतनामे की रजिस्ट्री कब तक होगी? वह उनको इनाम आदि देने की बातें करती थी तथा यह आश्वासन भी देती थी कि यहां कष्ट हो तो वे निसंकोच बंगले पर चले आया करें।

दमयन्ती का दिल मायके में ऊब उठा था। वह वहाँ अपने घर की स्वामिनी थी। यहां उसे नौकरों पर आश्रित रहना पड़ता था। वहां मोहल्ले में उसकी कई सहेलियां थीं, जिनके साथ वह हँस खेल लेती थी। मोहल्ले की छोटी-बड़ी घटनाओं से उसके परिवार का घनिष्ट सम्बन्ध था। वे मोहल्ले के एक बड़े परिवार में छोटे कुनबे की भांति रहते थे और उसके सजीव अंग भी थे। उसके सुख-दुःख में सक्रिय भाग लेते थे। वहाँ एक से आर्थिक दरजे वाले परिवार रहते थे। सबकी समस्याएँ एक सी थीं। सबका आपस में अपना ही नाता था। मायके के संयुक्त परिवार की मृगतृष्णा पूरी हो गई थी। आगे भविष्य में वह कभी यहाँ आवेगी तो इस टूटे हुए परिवार के ढाँचे में न आकर किसी भाई के नई धरती वाले अकेले परिवार में आवेगी। उसे इस आश्चर्यजनक परिवर्तन का कोई अनुमान नहीं था। वह इस सबको देख लेने के लिए नहीं आई थी। एक कठोर सत्य की भाँति सारी घटनाएँ उसके आगे आईं तो वह दंग रह गई। उसका हृदय मुरझा गया था। उसकी मझली भाभी ने सहारा न दिया होता तो चटख जाती। उसे भाभी ने समझाया था कि समय बलवान हथियार है। सामाजिक स्थिति बदल रही है। नए तरीके से पुरानी समस्याओं का मूल्यांकन करना पड़ेगा। दादा-पड़दादा वाली रिश्ते की डोरियाँ कच्ची पड़ गई थीं। पहले शायद ये सब बातें उसके हृदय को आसानी से डस लेती थीं। आज वह बात नहीं थी। युद्धकाल

में रोजाना जीवन पग पग पर जिन कठिनाइयों के बीच से गुजरा था, उसका असर उस पर पड़ चुका था और सस्ती भावुकता जीवन से हट गई थी। युद्धकाल के बाद आज जिस धरती पर वह अपने परिवार के साथ चल रही थी, वह और भी अनिश्चित था। आज युद्ध समाप्त होने पर भी चीजों के दाम बढ़ रहे थे। उनका छोटा परिवार सारी परिस्थितियों पर फिर से विचार कर रहा था।

दमयन्ती ने कई बार पिताजी से अनुरोध किया था कि उसे दो महीने से अधिक हो गए हैं, पर वे बिदा करने का नाम नहीं लेते थे। उसने कई बहाने बनाए पर पिताजी फिर भी नहीं माने और बोले थे, "सात-आठ साल में बड़ी कठिनाई से तो अब की आ सकी है, कुछ महीने और रहना होगा। जब तक मैं हूँ तब तक तो आना ही चाहिए।" उनकी आँखों में आँसू भर आते थे। पिताजी अक्सर उसकी बुनी हुई चीजों की बड़ी तारीफ करते थे। सावधानी से उसे भाँप कर कहा करते थे कि वह अपनी माँ की तरह ही लगती है, तथा उसी का सा स्वभाव लाई है। वे माँ की कई बातें भी सुनाया करते थे। उनका कहना था कि आज बुढ़ापे में उसका अभाव अखरता है। बातें करते करते उनकी आँखें गीली हो आती थीं। वे दमयन्ती के साथ एक बार उसके मामा के घर जाना चाहते थे। यह भी बताया था कि उसके नानाजी की इच्छा थी कि उसकी मौसी से शादी कर ली जाय। वे नहीं माने। वह माँ की बातों को बड़े चाव से सुनती थी। उसका पिताजी द्वारा खींचा गया खाका बहुत सुन्दर लगता था। माँ की बीमारी की बातें गद्गद् होकर सुनाई थीं। जिस दिन माँ मरी, उस दिन की घटनाएँ विस्तार से बताई थीं। उनका गला भर आया था। अपनी गीली आँखें बार बार उसने पोंछी थीं। पिताजी का मन आज चिड़िया की बच्ची की भाँति आकाश में उड़ कर जीवन की पिछली घटनाओं की छानबीन करने तुल जाता था। दमयन्ती उन सब बातों को चाव से सुनती थी।

मझले भइया से उसने एक बार उस भावी भतीजे की बात कहा थी तो वे ध्रुपद में हँस पड़े थे। मानो कि कोई खास महत्व की बात न हुई हो। वह फिर वहाँ नहीं जा सकी थी। मझली भाभी ने उसके प्रति कभी खास उत्साह नहीं दिखाया था। वह युवती कई बार अपनी नौकरानी भेज कर अनुरोध कर चुकी थी। मझली भाभी फिर भी नहीं पिघली। बड़ी भाभी कभी-कभी आकर उस युवती के बेहयापन की हँसी उड़ाती हुई कहती थीं कि उसके साहब का कहना है कि इस घटना से उनके परिवार की बड़ी बदनामी हो रही है। सारे शहर के लोग इस बात को जान गए हैं। क्लब में तथा और जगह इसकी चर्चा रहती है। इस तरह एक बाजारू औरत को घर में डाल लेना एक सामाजिक अपराध है। कल यदि उस औरत ने दावा कर दिया तो क्या होगा? बड़े भइया एक बार पिताजी के पास आए थे और इस विषय पर उनकी सलाह ली थी। उन्होंने मझले भइया को समझाया था कि किसी तरह रुपया-पैसा देकर उससे पीछा छुड़ाना ही हितकर है। लेकिन वे इस बात पर राजी नहीं हुए थे। इधर कारोबार ढीला पड़ गया था और वे ज्यादातर घर पर ही बैठे हुए रहते थे। पैट्रोल की कमी के कारण 'जीप गाड़ी' चुपचाप खड़ी रहती थी। कभी कभी कोई यार चले आते थे तो उनसे भी नहीं मिलते थे। मझली भाभी आज कल बहुत उदास रहती थी। उधर बंगले से रोज नौकरानी आकर कुछ सुना जाती थी। मझले भइया फिर भी वहाँ जाने का नाम नहीं लेते हैं।

—उस दिन बाबूजी ने बुलवाया था। वे आराम कुर्सी पर लेटे हुए थे। मझली भाभी अखबार पढ़ कर सुना रही थी। दमयन्ती चुपचाप एक ओर खड़ी हो गई। वे तो बोले, "बैठ जा।"

दमयन्ती चुपचाप कुरसी पर बैठ गई तो वे बोले, "यह जाने के लिए कह रही है। समझ में नहीं आता कि क्या कहूँ।"

"कहाँ बाबूजी ?"

"अपनी नौकरी पर।"

तभी मझली भाभी ने कहना शुरू कर दिया, "रोज के झगड़ों से तंग आ गई हूँ। पहले बाहर रहते थे तो कुछ चैन था। अब तो दिन भर कैद हो गई हूँ। उस पर मायके और तमाम लोगों को गालियाँ देते हैं। उनको पीना है तो किसी होटल में जाकर पीवें। कोई मेरे भाग्य से तो कत्थे के व्यापार में नुकसान नहीं हुआ है। यदि मिलिटरी के ट्रक मुनाफा नहीं लाए तो मैं क्या करूँ?"

यह कह कर वह चुप हो गई थी और फिर अखबार पढ़ कर सुनाने लगी। यह परिस्थिति दमयन्ती के लिए बिलकुल नई थी। उसे बाबूजी ने बुलाया था। वह भाभी तो आज बहुत बदली हुई मिली। वह कुछ देर के बाद अखबार एक ओर रख कर बोली, "आप जो कुछ कहेंगे मुझे मान्य होगा। मैं यह जीवन किसी तरह स्वीकार नहीं कर सकती हूँ। मैंने आपके कारण ही अब तक यह अन्याय सहा है। आप आदेश दें।"

उसकी आँखों से झर, झर, झर करके आँसू की बूँदे टपक पड़ीं। बाबूजी न जाने किस चिन्ता में डूबे हुए थे। उनके चेहरे से लगता था कि कोई गंभीर निश्चय कर रहे हैं। वह इस नई स्थिति को बार-बार समझ लेना चाहती थी। भाभी ने फिर अखबार पढ़ना शुरू कर दिया था। उसके रुँधे हुए स्वर में एक छुपी हुई पीड़ा साफ-साफ व्यक्त हो रही थी।

आखिर बाबूजी बोले, "जो ठीक समझे करले। मैं सोचता था कि ऐसी सुन्दर बहू लाकर......।" वे आगे नहीं बोल सके। कहा, "दमयन्ती मैं कुछ दिनों के लिए बाहर जा रहा हूँ।"

"बाबूजी।"

"एक सप्ताह में लौट कर आ जाऊँगा। मुझे कहीं शान्ति नहीं

है। सोचा था कि पेन्शन के बाद गृहस्थी के झगड़ों से दूर रहूँगा, पर......।"

"तीसरा महीना चल रहा है। मुझे भी अब जाना चाहिए।"

"मैं लौट कर इन्तजाम कर दूँगा।" कह कर वे उठे और बोले, "जरा घूम आऊँ बेटी।" चुपचाप कोने में धरी हुई लाठी उठाई और चले गये।

दमयन्ती अवाक रह गई। मझली भाभी उठ कर चली गई थी। दमयन्ती को लगा कि बाबूजी का वैराग्य उभर आया है। उनकी बुद्धि समय के साथ चल कर कोई नया रास्ता नहीं दिखला पा रही थी। उनका चौसठ साल का जीवन! इस बीच दुनिया में बड़ी-बड़ी तब्दीलियां हो गई हैं। वह भी अपने बच्चों की दुनिया में चली आई, और सारी बातें भूल गई। वह आज मायके की सीमाओं के बाहर की बातें नहीं सोच पाती है, क्षण भर बाहर इधर-उधर झाँकती है और फिर समस्त विचारधारा परिवार की चहारदीवारी के चक्कर लगाती रहती है।

—दोपहर को बाबूजी चले गए थे। अब सारा घर सूना-सूना सा लगने लगा। मझली भाभी अपने भावी जीवन का ढाँचा बना कर आश्वासन देती थी कि वह उसे अपने पास बुलावेगी। उसके बच्चों को पढ़ाने की बात भी कही थी। यह भी सुझाया था कि छुट्टियों में वह उसके पास आया करेगी। उधर बड़ी भाभी ने आना बन्द कर दिया था। छोटी भाभी अपनी दुनिया में ही फँसी रहती थी उसे इधर-उधर की बातों के लिए समय नहीं मिलता था। बाबूजी की कमी किसी तरह पूरी नहीं हो रही थी। मझली भाभी के ग्रामोफोन के रिकार्ड और रेडियो के गाने फीके पड़ गए। मझले भइया सबको एक दिन सिनेमा दिखलाने के लिए ले गए थे। वहाँ भी किसी का मन नहीं लगा।

बाबूजी सात दिन में लौट कर नहीं आ सके। उनकी चिट्ठी आई थी कि गुरु महाराज ने उनको कुछ दिनों के लिए रोक लिया है।

इधर दमयन्ती बड़ी-बड़ी रात तक सो नहीं पाती थी। वह वेश्या एक दिन चुपके आई थी और मझले भइया को अपने साथ मना-बुझा कर ले गई थी। उन्होंने पहले तो आनाकानी की पर फिर जो गए तो लौटने का नाम ही नहीं लिया। भाभी ने सुनाया था कि बड़ा मंहगा सौदा उस युवती ने किया था। उसने आश्वासन दिया है कि वह एंग्लोइण्डियन छोकरी और उनके बीच की बातों में कोई दखल नहीं डालेगी।

दमयन्ती बड़ी रात तक इस बात को सोचती हुई सो गई थी। एकाएक मध्य रात्रि को उसकी नींद टूटी थी। वह चुपचाप बाहर निकल कर जंगले के पास खड़ी हुई। आसमान पर सुन्दर चाँदनी खिली हुई थी। वह उसे देखती रही। एकाएक उसकी नजर ऊपर छत पर पड़ी। देखा कि वहाँ कोई रमणी खड़ी थी। वह वहाँ क्या कर रही थी उसकी समझ में नहीं आया। वह कौतूहल के साथ उसे देखने लगी। उस लड़की ने तो धोती का एक फन्दा ऊपर छत पर लगे लोहे के छड़ से बाँध लिया। फिर एक बार चुपचाप खड़े रह कर अपने चारों ओर देखा। अब वह स्टूल पर खड़ी हो गई थी। उसने अपने गले पर भी दूसरे किनारे का फन्दा बना कर डाल लिया। हाथ जोड़ कर खड़ी-खड़ी न जाने क्या गुनगुनाने लगी। दमयन्ती चौंकी। वह तेजी से सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर पहुंची। देखा कि वह छोटी भाभी थी। जोर से पुकारा, "भाभी!"

छोटी भाभी सिर झुकाए खड़ी थी। अब संभल कर दमयन्ती से लिपट फूट-फूट कर रोने लगी। दमयन्ती कुछ समझ नहीं सकी। यह भाभी उम्र में उसी के बराबर है। पहले दोनों आपस में बहुत घुलमिल कर रहती थीं। आज वही भाभी आत्महत्या करने के लिए उतारू हो गई थी। जीवन की इतनी उपेक्षा! क्या भाभी पागल हो गई है? भाभी की आँखें लाल थीं। वह उसी भाँति बड़ी देर तक दमयन्ती की छाती से चिपकी रही। आखिर बोली, "हमारी जिन्दगी तो पशुओं के जीवन से

भी बदतर है। पेट भर कर खाना नहीं मिलता है। जो जेवर था वह युद्धकाल में खा गए हैं। इधर दूकानदारों का कर्जा चढ़ा हुआ है कहीं मुँह दिखलाने लायक नहीं रहे हैं। वक्त पर फीस न देने के कारण बड़ी लड़की का नाम कट गया है। अपने लिए न सही बच्चों के लिए तो सब कुछ चाहिए। ऐसी जिन्दगी से जितनी जल्दी छुटकारा मिल जाय उचित होगा।"

दमयन्ती ने उस टूटते हुए परिवार की अन्तिम झाँकी देखी और काँप उठी। वह उन सबसे सुखी है। उनको भले ही बहुत पैसा न मिले, पर उस मोहल्ले में जहाँ कि वे रहते हैं खान्दानी परम्परा को निभाने के लिए झूठी हैसियत लेकर नहीं चलना पड़ता है। भाभी तो बोली, "उनसे बार-बार कहती हूँ कि अपने हिस्से का सेट किराये पर दे दो। आसानी से साठ-सत्तर रुपए मिल जावेंगे। शहर के किसी मोहल्ले में दस-पन्द्रह का मकान लेकर रह सकते हैं, पर वे मानते ही नहीं हैं। सोचा था कि लड़ाई के बाद चीजें सस्ती हो जावेंगी, पर……!"

परिवार का वह आखिरी सपना भी टूट गया था। वह दमयन्ती अपने सोने के मायके की बात सोचती थी। वह तो रावण की लंका की तरह मिट गया। वह फिर-फिर यहां के बारे में सोचती है। कहीं भी उसे निर्माण की सुनहरी रेखा दृष्टिगोचर नहीं होती है। वह संयुक्त परिवार कल अलग-अलग मोहल्लों में बँट जावेगा। मायका, भैय्या-भाभी की दुनिया, वह आपसी नाता, स्नेह बन्धन……!

इतिहास की गति के साथ, सही समय पाकर परिवार अपनी पुरानी केंचुली उतार कर नई बदल रहा था।

मौत की घाटी

मुझे उस पड़ाव पर आये पांच रोज हो चुके थे। कुछ अजीब निर्जन सी वह घाटी, जिसके दोनों ओर वीरान से ऊँचे ऊँचे पहाड़ खड़े थे। बीच में जो छोटी सी नदी बहती थी, उसमें दिन को भी धुन्ध छाया रहता था। दो-तीन कच्ची दूकानें थीं, जिनमें साधारण दीवारों के बीच लकड़ी के तख्तों से हिस्से किये गये थे। ऊपर बेडौल से पेड़ों के तनों के ऊपर घास-फूस छाकर पत्थर की चौड़ी चौड़ी पाटियां छाई हुई थीं। कुछ दूरी पर फूस की कच्ची झोपड़ियाँ थीं। सामने ही एक चौड़ा पड़ाव बना हुआ था, जिसमें भेड़ें, लद्दू घोड़े या किसी गिरोह के लोग बसेरा लेते थे। इस समय भी वहां की भेड़ों के गले की घण्टियां तथा उनका मिमियाना सुनाई पड़ रहा था।

मैं चुपचाप अपने कमरे से बाहर निकला और लकड़ियों की सीढ़ी से नीचे उतर कर पास की सड़क पर खड़ा हो गया। मेरा मन उदास था। जिस तहकीकात के सिलसिले में आया था, उसमें काफी उलझन पड़ती जा रही थी। अब मैं उस संकरी सी सड़क पर निरुदेश्य-सा घूमने निकल पड़ा। बसंत की आखिरी छटा चारों ओर बिखरी थी। धरती गुलाबी, बैगनी, लाल, नीले, पीले आदि विभिन्न रंगों से फूलों से भरी हुई थी। सुन्दर रंग बिरंगे पक्षी इधर उधर उड़ रहे थे। नदी की घाटी से घना कुहरा बार बार ऊपर उठ रहा था।

पड़ाव में भेड़ों के गिरोह के पास मैं रुका। उनके मुलायम काले-सफेद रेशों को सहलाने लगा। तीन चार सौ भेड़ें थीं और बीच पड़ाव में नमक, गुड़ आदि सामान से भरी हुई चमड़े की थैलियों की ढेरी लगी हुई थी। उनसे लगे हुये चार-पांच तम्बू खड़े थे। उसके बाहर आग सुलगी थी,

जिसे घेर कर स्त्री-पुरुष ताप रहे थे। इन भेड़ों को मैं ऊँची ऊँची भयंकर पहाड़ियों पर चढ़ते देख चुका हूँ। चुपचाप सिर झुकाये चलती रहती हैं। इतनी सीधी प्रकृति के और किसी अन्य पशु का परिचय मुझे नहीं है। मैं चुपचाप उनको देख रहा था उनके गले की घण्टियाँ बीच में अनायास ही बज कर, उस निर्जीव वातावरण में प्राणों का संचार कर रही थीं। वे चुपचाप हरे पत्तों को चबाती हुई बीच बीच में जुगाली लेने लगती थीं। कुछ की आंखें मुंदी हुई थीं, कई चुपचाप खड़ी थीं और बहुत सी भूमि पर लधरी हुई पड़ी थीं। मेरी दृष्टि आग के चारों ओर बैठे हुये व्यक्तियों पर अटक गयी। एकाएक औरतें उठ कर खेमों के भीतर चली गयीं। अब दो व्यक्ति एक मोटे ताजे भेड़ को पकड़ करके ले आये। तीसरे ने तेज गंड़ासे से भेड़ की गरदन काट डाली। वह बड़ी देर तक भूमि पर तड़पता रहा, पांवों को तेजी से पटकता हुआ वह एकाएक गतिहीन हो गया। पहला व्यक्ति कटी गरदन से टपकता हुआ खून एक कड़ाही में बटोरता रहा। जिसमें पहले से ही सरसों का तेल और पिसी हुई नमक मिर्च पड़ी थी। अब एक युवती उस कड़ाही को ले गयी और उसने उसे आग पर रख दिया।

उन लोगों ने अब तेज छुरी से सावधानी के साथ धड़ का पेट चीर डाला। गुरदा, कलेजा, फेफड़ा पत्तलों पर रख एक व्यक्ति पेट और अंतड़िया पास के झरने के पास धोने के लिये ले गया। खाली लोथड़े में घास भर कर उसकी अगली और पिछली टांगे हरी मोटी लताओं से बाँध उनके बीच एक मोटी सीधी लकड़ी डाल कर, दो उसे आग में भूनने लगे, एक अजीब सी बदबू चारों ओर फैल गयी। बड़ी देर तक वे उसे भूनते रहे। बीच बीच में देखते जाते थे कि कहीं बीच में छूट तो नहीं गया है। अब सब ने पैने पत्थरों से जले हुये बालों को हटाया और फिर बाहर की काली चमड़ी निकाल ली। तेज चाकू से एक रान का मांस निकाल कर छोटे २ टुकड़े करके तेल, नमक और मिर्च डालकर वे उसे खाने लग गये।

एक युवती भीतर से काले आटे की बड़ी बड़ी गोलियां बनाकर ले आयी आग में पड़े हुए गोल लाल लाल गरम पत्थर निकाल कर दो पत्थरों के बीच वे उन आटे की गोलियों को रखने लगे। वे स्वयं ही फूलने लगती थीं। इसी भाँति वे बड़ी देर तक खाना बनाते रहे।

मैं चकित सा वह सब देखता ही रह गया। अब चुपचाप आगे बढ़ा। धीरे धीरे रात पड़ रही थी। दूर की चीजें आंखों से ओझल सी होने लगीं चलते-चलते मैं एक जगह पर खड़ा हो गया, जहां पीले नीले लोहे की भांति कड़े पत्थर वाला ऊँचा सीधा पहाड़ खड़ा था। मैंने उसे छूकर देखा, वह बहुत ठंडा था। नीचे नदी काले धुंध में बिलकुल छुप गयी थी। वह काला सफेद कुहरा ऊपर उड़ कर इधर उधर छा रहा था। यहीं हमारी सरहद समाप्त हो जाती थी। आगे नदी पर रस्सियों का बना हुआ एक झूला था। जिसे पार करना आसान नहीं था। मैं वहीं बैठ गया। चुपचाप उस जगह की छानबीन सा करने लग गया। एकाएक तभी कोई मेरी पीठ के पीछे आकर खड़ा हो गया आहट पा, मुड़कर देखा की कोई अज्ञात युवती मेरे कंधों से हाथ टिकाये हुए मुसकरा रही थी। मैंने उसकी ओर सावधानी से देखा। उसके ओंठ फटे हुये थे। चेहरा पीला पड़ गया था और कनपटी के पास एक नीला सा धब्बा था। उसके ओंठ बारबार खुलते थे। और वह कुछ कहती हुई सी लगती थी। उसकी बड़ी बड़ी आंखों में कौतूहल के साथ किसी भारी विषाद की स्पष्ट झांई चमक उठती थी। वह बार बार कुछ समझाने की चेष्टा करती हुई सामने की ओर उंगली से इशारा करती थी।

उस एकान्त में एक युवती को पाकर मुझे बहुत प्रसन्नता नहीं हुई। कारण कि उसके चेहरे के सौन्दर्य में मौत की सी परछाईं चमक रही थी। मैंने उसकी झोंटी की लटों में बंधी हुई रंगीन कपड़े की किनारी से लटकते हुए चांदी के सिक्कों और फिरोजों को देखा, जो उसकी एड़ी तक लटक रहे थे। कानों में मूँगे और नकली मोतियों के झुमके थे। गले

में ताबीज थी। पांव सुन्दर कढ़े हुए ऊनी जूतों से ढके थे। वह सुन्दर रंगीन ऊनी घाघरा पहने थी। लगता था कि वह किसी धनी गृहस्थ की लड़की है। उसका म्यान में रखा हुआ चाकू भी मैंने देखा। वह दस बारह इञ्च लम्बा होगा। मैंने अपनी घड़ी देखी, आठ बजने वाले थे। सोचा, जो काफिला कल से पड़ाव पर टिका है, यह युवती उसी की होगी। मैं उठ बैठा और चुपचाप लौटने वाला था कि वह मेरे आगे रास्ता रोक कर खड़ी हो गयी। मैं उसकी उस सरलता पर मुग्ध हो गया। एक अधिकारी वाली हैसियत से मैंने उससे पूछा "पड़ाव की ओर चलोगी ?"

उसके ओंठ खुले और वह कुछ बोली, किन्तु उन अस्पष्ट अक्षरों को समझने का ज्ञान मुझे नहीं था। मैंने उसे इशारे से समझाया कि मुझे पड़ाव पर जाना है। यदि वह रास्ता भूल गयी हो तो मेरे साथ चली चले। मैं उसे पहुँचा दूंगा। फिर एकाएक एक अज्ञेय सी भावना मेरे मन में उठी कि यह किसी प्रेम कहानी की शुरुआत तो नहीं है। ये स्त्रियां साधारण बन्धनों की परवा नहीं करती हैं। मर्यादा की किसी कसौटी पर उनको विश्वास नहीं है। स्नेह भिक्षा में भी वे कंजूस नहीं होती हैं। यह सब अपने मित्रों से सुना था। उनकी प्रेम कहानियों के पीछे होने वाली हत्याओं से परिचित था।

वह फिर बुदबुदायी और नदी के उस पार की ओर उसने इशारा किया, जो कि रात होने के कारण अन्धकार में छुप गया था। वह स्थिति मेरी समझ में नहीं आयी। सोचा कि कुछ देकर उस युवती से छुटकारा पा जाऊँ। अतएव अपना बटुआ खोलकर मैंने चांदी के सिक्के अपनी हथेली पर रख करके उसकी ओर बढ़ाये, वह अप्रतिभ-सी उन सबको देखती रह गयी और फिर कुछ बुदबुदा कर मलिन हंसी हंसी। उस क्षीण अन्धकार में उसकी अनार जैसी दांतों की पांती चमकी! यह जानकर भी कि वह बहुत दुःखी है उसे समझाने में असमर्थ सा पाकर मैं चुप ही रहा। चारों ओर सन्नाटा था। काली रात्रि अपनी चादर

फैला चुकी थी। घना-सा धुंध फैलता जा रहा था। बीच बीच में पड़ाव से भूटानी कुत्तों के भूकने का तेज स्वर कानों के परदों पर प्रतिध्वनित हो रहा था। मैं देर तक उसी स्थिति में खड़ा रहा। वह युवती तो टकटकी लगाकर मुझे निहार रही थी। यह प्रश्न बार-बार मन में उठता था कि वह मुझसे क्या चाहती है? वह उसी भांति खड़ी थी, न जाने एकाएक कैसे उसके चेहरे पर किसी अज्ञेय प्रसन्नता की थिरकन छा गयी। उसने मेरा हाथ पकड़ा और चुपचाप आगे की ओर बढ़ गयी। मैं मन्त्रमुग्ध सा उसके साथ चलने लग गया। वह तो एक टेढ़ी पगडंडी से नीचे उतर कर झूले के पास खड़ी हो गयी।

उस झूले को पार करने की बात सोच कर मेरे शरीर में कंपन आ गया। नीचे एक मोटी-सी रस्सी पर पांव रख कर, ऊपर सिर के पास की रस्सी को हाथ से पकड़ वह उस नदी को पार कर रही थी। मुझे चुपचाप खड़ा देख कर वह हंसी और बीच में खड़ी होकर, साथ चलने का अनुरोध किया। वह तो उन दोनों रस्सियों के बीच बिचित्र सी झूल रही थी। मैं आंखें फाड़-फाड़ कर उसे देख रहा था। अब वह उस पार ओझल हो गयी थी।

अपने प्राणों का मोह छोड़ कर मैंने भी उस झूले को पार करने का निश्चय किया। मैं उस ओर किसी अनजान प्रेरणा से बढ़ रहा था। यह बात मन में उठती थी कि मृत्यु अब दूर नहीं है। नीचे की ओर निपट अंधकार था; ऐसा कि मानों मैं किसी भयानक गहराई के बीच चुपचाप खड़ा हूँ। ऊपर भी कुहरा छाया हुआ था, जो यदाकदा गालों पर हलके थपेड़े मार कर बढ़ जाता था। चारों ओर कुछ दीख नहीं पड़ता था। मैं बार बार सोच रहा था कि मैं पागल हो गया हूँ, अन्यथा यह कठिन खेल न खेलता। कभी उस युवती के प्रति आकर्षण पर सोचता तो हृदय की गति में कोई जीवन नहीं पाता था। लगता कि मानो किसी भीषण कठोर चट्टान पर कोई सुन्दर फूल बेकार सा पड़ा है, उस नारी के प्रति फिर एक विश्वास उठा। उसके आग्रह को सोच करके ही मैं आगे बढ़

गया। एक बार मेरा पांव फिसला और मैं झूलने लग गया। तभी मैंने एक क्षीण किलकारी सी सुनी, शायद वह उस युवती की ही थी। उसने अनुमान लगाया होगा कि मैं नदी की गोदी में सदा के लिए समर्पित हो चुका। लेकिन कुछ देर के बाद मैं संभल गया और सावधानी से रस्सी पर पांव रखता हुआ आगे बढ़ गया।

अब मैं उस पार पहुँच चुका था। वह युवती मुझे देख कर खिल उठी। एक बार तो उसने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया और ओठों से लगा कर हथेली चूम ली। उसकी सांस की गरमी से सारे शरीर में गुदगुदी की एक लहर दौड़ गयी। उस अपरचित युवती के इस सहृदय व्यवहार को पाकर प्राणों का संचार हुआ। मैं सोचने लगा कि यदि मेरी मौत उस नदी के बीच हो जाती तो! उस झूले में पिछले साल कई युवक-युवतियां आंधी के एक भारी झोंके के आने पर नीचे गिर कर मर गये थे। अब मुझे अपने प्राणों का मोह हो उठा। तभी मुझे ज्ञात हुआ कि उस युवती ने अनजाने ही न जाने कब मेरे ओवरकोट की जेब से मेरी पिस्तौल निकाल ली है। उस हथियार के सम्मुख प्राणों का कब कोई मोल हुआ है। वह उसे चाव से देख रही थी। मैं चौकन्ना हो उठा। क्या उसने मेरी हत्या करने के लिए यह खेल खेला था? आज यह नयी बात कब थी। ये युवतियां जीवन मुक्त होती हैं। समर्थ हैं। फिर तो मैं अपने को धिक्कारने लगा कि कितनी आसानी से उसके हाथ पड़ गया। अब वह आसानी से मुझपर हमला कर सकती है।

उसने उसे सावधानी से देख कर मुझे दे दिया। अबोधता से जिज्ञासा की कि वह क्या है? मैंने तब उसे खोल कर समझाया कि वह उस छुरी की भांति रक्षा करने का हथियार है। दस की दस गोलियां निकाल कर उसकी हथेली पर रख कर समझाया कि दस को मार सकती हैं। उसका चेहरा तभी खुशी से चमक उठा। एक नूतन सी थिरकन में मेरी हथेली लेकर उसने अपनी छाती से लगायी।

उसकी सांस तेज चल रही थी। उस धड़कन की प्रतिध्वनि में मुझे भारी निराशा मिली। लगा कि वह बहुत दुखी है। एक भारी जम्हाई लेकर उसने मेरा हाथ छोड़ दिया। फिर सावधानी से कुछ सुनने लगी। चौंक कर उसने अपनी छूरी निकाली और हमला सा करने को तैयार हो गयी। मैं उसके इस व्यवहार पर मग्न रह गया। तभी मुझे किसी बड़े से पशु की आहट मिली। वह हमारे समीप से निकल कर नीचे नदी की ओर भाग गया। उसकी बड़ी-बड़ी आंखों की चमक मैं भूल नहीं सकता। वह सम्भल गयी और छुरी पेटी में रख ली। ठीक तरह से कमरबन्द कसा और आगे बढ़ गयी।

अब मैंने अपना 'पाइप' निकाल कर चमड़े की थैली से उसमें तम्बाकू भरी। उसे सुलगाने के लिए 'स्पार्कर' तलाश किया। उसे तो मैं डेरे पर ही भूल आया था। अतएव हताश वैसे ही 'पाइप' मुँह पर लगाये हुए कुछ देर तक अपने में ही न जाने क्या क्या सोचता रह गया। शायद वह बात समझ गयी। उसने अपने बटुये से कपास निकाली और पाइप में रख कर चकमक पत्थर की चिनगारियों से उसे सुलगाय। मैं उसे इतमीनान से पीने लगा। उसके धुँए में सब कुछ भूल गया। फिर चुपचाप उसके पीछे पीछे बढ़ चला। उस युवती के साहस की मैंने मन ही मन बार बार सराहना की, किन्तु उस अन्धकार में आगे बढ़ना सम्भव नहीं था। वह पगडंडी अब ऊपर चढ़ाई की ओर बढ़ गयी। वह मेरे साथ साथ चल रही थी। उसने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया था। कभी कभी उसकी झोंटी मेरी पीठ से टकराती थी। उसके गले में पड़ा हुआ तावीज भी चमक उठता था। हम पगडंडी पर चढ़ रहे थे। मैं बहुत थक गया था। अब तो हांफने लगा। दम फूल रहा था बस एक चौड़ी चट्टान पर बैठ गया। कुछ देर सुस्ताकर फिर उस सीधी चढ़ाई पर चढ़ने लग गया। मेरा गला सूख गया था। मैं थककर चूर हो गया था। वह संभवतः मेरी स्थिति को समझ गयी, अतएव उसने अपने चोली के

भीतर से एक शीशी निकाल कर मुझे दी, मैंने थोड़ी सी मदिरा पी और नवजीवन पाकर फिर ऊपर चढ़ने लगा।

कुहरा छँट रहा था। ऊपर चांदनी चमक रही थी। नीले आकाश पर तारे झिलमिला रहे थे। वे बीहड़ नीली चट्टानें न जाने कहां ओझल हो गयी थीं। चारों ओर घनी हरियाली छायी हुई थी। छोटे छोटे पीले फूल खिले हुए थे। वह रमणीक दृश्य हृदय में फैल गया। धरती पर लाल मिट्टी थी। मैं कुछ देर तक अवाक् सा वह सब कुछ देखता रहा। फिर मैंने उस युवती की ओर देखा। उसका वह निखरा हुआ सौन्दर्य, वह रूप! वह फिर मलिन हंसी हंसकर कुछ बुदबुदायी। मैं उसे निहारता ही रह गया। उसके उस सौन्दर्य में एक गहरी वेदना छिपी हुई मिली। उस हँसी में मौत की सी शांति थी। उसकी मुस्कान गतिशील नहीं थी। मैं कभी उस धरती की ओर देखता था, तो फिर उस युवती के चेहरे को। वह तुलना मैं स्वयं बूझ नहीं पा रहा था।

मैंने अपनी घड़ी देखी। दस बज चुके थे। आकाश पर एक बार सप्तऋषियों को पहचानने की चेष्टा की पर असफल रहा। वे तारे तो अभी उसे भांति टिम-टिमा रहे थे। एकबार मैंने अपने हृदय को टटोला और पाया कि वह मेरे हृदय पर पसर रही है। इन चन्द घन्टों में ही वह मेरे जीवन में एक नशासा उड़ेलने में सफल हो गयी थी। मैं उसे अपना समस्त विश्वास सौंपकर ही तो साथ आया था। उस निर्जन प्रदेश में उस युवती के साथ इस भांति चले आने पर मुझे स्वयं अपने ऊपर क्रोध आने लगा। कई बातें स्मृति में तेजी से करवटें बदलने लगीं। पड़ाव के लोग क्या सोच रहे होंगे? वे भेड़ें चुपचाप सो गयी होंगी। काफिले वाले गोश्त खा, शराब पीकर नाच-गा रहे होंगे। उनका जीवन कैसा मस्ती से भरा हुआ है। वे फक्कड़ से अपने भेड़ तथा खच्चर के गिरोहों के साथ घूमते हैं। उन तम्बुओं में ही अपना समस्त जीवन भी व्यतीत कर देते हैं। इस जीवन के प्रति सदा से ही मुझे स्पर्द्धा रही है। मुझे भले ही बन्धन वाला जीवन

पसन्द नहीं; अपने उन पांच घंटों के उच्छृंखल जीवन पर मैं विचार करने लगा। अपनी नारी-कोमलता के प्रति सहज ही ढल जाने वाली भावुकता के लिए धिक्कार करके भी कोई समाधान नहीं कर पाया। यदि वे लोग मुझे दण्डित करना चाहें तो कब अस्वीकार कर सकता हूँ? यहां लोग साधारण सामाजिक न्यायपूर्ण व्यवस्था की परवा नहीं करते हैं। फिर कौन जाने इस यात्रा के पीछे कोई गहरा राजनीतिक भेद छुपा हुआ ही हो। सरहद के पीछे उठने वाले कई बवंडरों से मैं परिचित था। किन्तु एक बार उसे देखकर ही समस्त सन्देह मिट गया। फिर भी मैंने पूछा "तुम कौन हो, कहां की रहने वाली?"

वह फीकी सी हंसी हंसकर कुछ बुदबुदायी।

कुछ न समझ सकने के कारण टूटी-फूटी सी उनकी ही बोली में मैंने वे ही बातें दुहरायीं। लेकिन वह तो फिर कुछ बुदबुदाकर चुप हो गयी। उसके पूरे ओंठ नहीं खुले।

मैंने अब इशारे से समझाया कि मुझे लौटना है। वह मुझे नीचे पुल तक छोड़ दे तो उचित होगा। साथ ही मैंने उसे बहुत इनाम देने का वादा भी किया। इस पर वह मलिन हँसी हँस करके चुप हो गयी। उसके चेहरे पर उदासी छायी हुई थी। लेकिन अब मैं अधिक मूर्ख बनने के लिए तैयार नहीं था। फिर भी अकेले लौट जाना आसान बात न थी। अपनी इस बेवसी पर मुझे गुस्सा चढ़ा। उसके प्रति सारी उदारता को भूल करके मैंने उलझन में पिस्तौल निकाली और उसकी ओर करके तेजी से पूछा, "तुम मुझसे क्या चाहती हो?"

यह भी साफ साफ समझा दिया कि यदि तुम मुझे नीचे तक नहीं पहुँचा देती हो तो मैं तुम्हारी हत्या कर डालूंगा। अब मेरा नशा उतर चुका था। मेरे मन में रह रहकर कई विचार उठ रहे थे। अपनी भूलपर सोचकर मैं भय से कांप उठा।

लेकिन वह युवती तो उसी तरह ज्यों की त्यों निर्भीक सीधी खड़ी रही। उसकी आखें भर आयीं। उसने मुझे मौनभाव से सुझाया कि मैं उसके साथ चलूँ। वह कुछ बुदबुदायी। उन शब्दों से किसी गहरी वेदना का आभास व्यक्त हो रहा था। उसने चुपचाप मेरा हाथ उठाकर अपने हृदय से लगा, विश्वास दिलाना चाहा कि वह मुझे धोखा नहीं दे रही है। उसने किसी भारी आश्वासन के साथ अपनी छुरी निकालकर मुझे सौंप दी। उसकी मूठपर कुछ सुन्दर नीले तथा लाल मणि जड़े हुए थे। ऐसा लगता था कि वह किसी पुराने राजपरिवार का स्मृतिचिन्ह है। मैंने उसे लौटाना चाहा, पर उसने उसे स्वीकार नहीं किया।

वह छुरी मेरे हाथ पर ही रही। उस युवती से झगड़ने की सामर्थ्य नहीं थी। उसकी उस सरलता का गहरा प्रभाव मुझ पर पड़ा। मैंने निश्चय किया कि भविष्य को उसी के हाथ सौंप देना चाहिये। जहाँ वह चाहे ले जाय; मुझे यह स्वीकार है। उसके साथ किसी प्रकार का झगड़ा मोल लेना नहीं जंचा, कई बार पिछले जीवन की कुछ झांकियां याद आती थीं, फिर वे स्वयं ही ओझल हो जातीं। लगता था मैं अब एक नया जीवन आरम्भ कर रहा हूँ, जिसका पूर्ण संचालन आगे वह युवती ही करेगी। नारी का वास्तविक सामीप्य पाने का यह मेरा पहला अनुभव था।

एकाएक धीमी सी हवा बहने लगी। चारों ओर खिले हुए केसर के फूलों की गन्ध फैल गई। कहीं कहीं इकले दुकले भोजपत्र के पेड़ खड़े थे। अन्यथा चारों ओर रंगीन फूलों के अतिरिक्त और कुछ भी दीख नहीं पड़ता था। अब मुझे जाड़ा लगने लगा था। बरफ से ढकी हुई चोटियों से बहने वाली बयार की ठंड से हाथ सिकुड़ रहे थे। वह तो उन फूलों के बीचवाली पगडंडी पर चुपचाप चली जा रही थी। मैं दूर दूर देख रहा था। पहाड़ों की चोटियों पर बरफ़ पड़ी हुई थी, पर भोजपत्र के पेड़ों के समूहों का काला स्वरूप दीख पड़ता था। पास ही कुछ

देवदारु की ऊँची ऊँची डालियां चुपचाप खड़ी थीं। हम हरीभरी झाड़ियोंके बीच से गुजर रहे थे।

मैं चुपचाप उन फूलों से भरी हुई क्यारियों के बीच बैठ गया। वह युवती आगे बढ़ गयी थी। मैंने उसे पुकारा। वह रुक गयी। मैं दौड़ा दौड़ा उसके पास पहुँचा। उसके मुंह को उठाकर निहारा। बड़ी देर तक उसके सौन्दर्य को देखता ही रह गया। उसकी बड़ी बड़ी आँखों की काली पुतलियों से मैं न जाने क्या क्या सवाल पूछना चाहता था। पर उस मूक प्रतिमा के हृदय को पहचान लेना आसान न था। वह तो गूंगी थी। उसमें प्राण थे, बस एक यही सन्तोष था। अब मैंने उसके गले में पड़े हुए तावीज को देखा। उनमें चांदी, मूँगे तथा अन्य कई चमकीली धातुएँ चमक रही थीं। एक बार मैंने उसकी झोंटी को उठाकर उसमें कई सुन्दर फूल तोड़ तोड़कर खोंसे। उसके उन ओठों को देखा, किन्तु उसकी उन आंखों की किसी अपरिचित जिज्ञासा के भावोंको समझने में असमर्थ सा ही रहा। उस युवती से कई सवाल पूछना चाहता था। नया तर्क और भावुकता मनमें उठ रही थी। मन उमड़ रहा था। कभी कभी तो लगता कि उसने समीप आकर नारी कोमलता का नया सबक मुझे पढ़ाया है। जिसे शायद आजीवन समझ न पाऊँगा। वह कोमलता केवल नारीकी भावुकता मात्र ही नहीं है; न वह नारी का अभिमान ही व्यक्त करती है। यह तो नारी का प्रकृति से पाया हुआ सरल स्वभाव है कि उसके लिये बदले की कोई माँग पेश नहीं करती।

न जाने कब तक मैं उसी स्थिति में बैठा रहा। वह तो चुपचाप मुझे निहार रही थी। मैं उससे क्या चाहता था स्वयं अपने मनमें नहीं सुलझा सका। फिर उसका नारीत्व एक सधारण खेल भी तो नहीं था। लेकिन मनमें एक पगली सी भावना उठी कि शायद मैं उस अज्ञात देश में जा रहा हूँ, जहां की कहानियाँ बचपन से सुनता आया हूँ। जहाँ महाऔषधियां उत्पन्न होती हैं; जहाँ कस्तूरी- मृग, चंवरी गाय, सुन्दर पक्षी रहते हैं; जहाँ

तालों में लाल बतखें गोता लगाती हैं; जहाँ रेशम जैसी मुलायम घास उगती है; जहां इतनी सर्दी पड़ती है कि जाड़ों में तेल तक जमकर कड़ा हो जाता है। इन पहाड़ों का भीतरी ज्ञान मुझे नहीं है। शायद अपने परिवार के साथ भविष्य में लद्दू घोड़ों, भेड़ोंके गिरोह और तम्बुओं के डेरों के साथ आवारागर्दों का सा जीवन व्यतीत करूँगा। उस युवतीके साथ शुरू में आने में जो कौतूहल था, वह धीरे धीरे जीवन के 'कैनवस' पर विस्तार के साथ फैलने लग गया। मैं कई अजनबी से ढांचे निर्माण करने लग गया। मेरा मन न जाने क्यों बहुत चंचल हो उठा। उस मन मोहक सुन्दर वातावरण ने एक नयी स्वस्थता मुझे प्रदान की। मेरे मनमें उठी शंकाएँ हट गयीं। हृदय की उस सूनी जगह में मैंने अपने साथ उस युवती का समूचा जीवन संवार लेने का निश्चय कर लिया। मैं उसी भांति उस हरी घास पर लेटा रहा। ऊपर आकाश में वे तारे उसी भाँति चुप-चाप टिमटिमा रहे थे। चांद भी सामने के पहाड़ के पीछे से उठकर उसकी चोटीपर पहुँच गया था। उसका धुंधला प्रकाश उस घाटी के कुहरे के ऊपर तैरने लगा। नीचे वह घाटी काले सफेद कुहरे से घिरी हुई बड़ी भयावह लग रही थी। मैंने अपनी आँखें मूँद लीं।

एकाएक उसने मुझे झकझोरा और फिर मेरी उंगलियों को पकड़ कर उठाने की चेष्टा की। मुझमें चेतना आयी। मैं उठ बैठा। फिर एक लोभी की भांति ललचायी हुई दृष्टि से उसे देखा और उसके साथ चुप-चाप चलने लगा। मैं कहां जा रहा हूँ, इसकी कोई चिन्ता मुझे नहीं थी। मैं बिलकुल जीवनमुक्त था। वह युवती चुपचाप चली जा रही थी। कभी कभी वह रुककर सुन्दर सुन्दर फूल तोड़ती उनको मुझपर बिखेर देती। मैं फूलों की मादकता में उसके उत्साह पर सोच रहा था। उसका वह खेल भला लगा।

न जाने हम कितनी दूर चले आये थे। मैंने घड़ी देखी। दो बज चुके थे। सप्तऋषि दूर पहाड़ों की चोटी के पीछे छिपने लगे। अब तो मैं

बहुत थक गया था। तभी मैंने देखा कि एक कुत्ता भोंकता हुआ हमारी ओर आया और उस युवती के पावों में लोटने लगा। तभी मैंने अनुमान लगाया कि सम्भवतः हम अपने गन्तव्य स्थान से दूर नहीं हैं। अब वह युवती सावधानी से चल रही थी। उसने मुझे समझाया कि होशियारी से चलना चाहिए। वह स्वयं दबे पांव आगे बढ़ रही थी। सामने चरागाह में कई खेमे लगे हुए थे। वहां भेड़ों के गले की घण्टियां यदाकदा टन, टन, टन, बज उठती थीं। लद्दू घोड़े भी चुपचाप सो रहे थे। हम आगे बढ़ते ही चले गये। अब मेरी दृष्टि दो मकानों पर पड़ी। वह युवती एक मकान की ओर बढ़ी। कुछ देर पिछवाड़े खड़ी रही और सावधानी से दरवाजा खोलकर भीतर चली गयी। मैं कुछ देर तक दरवाजे पर ही खड़ा रहा, फिर चुपचाप भीतर पहुँचा। वहां निपट अंधियारा था। एकाएक मुझे लगा कि उस युवती ने दोनों हाथों से मुझे जकड़ लिया है। फिर अपने ओठों पर मैंने उसके ओठों का खुरखुरापन पाया। अब वह हट कर भीतर चली गयी थी। मैं अकेला असमंजस में पड़ा बड़ी देर तक वहीं खड़ा रह गया।

वह फिर लौट कर नहीं आयी। मैं घबड़ा उठा। मैंने उस कमरे की छानबीन करनी शुरू की। वह एकदम खाली था। एकाएक एक दरवाजा मेरी पकड़ में आ गया। उसके दूसरी ओर की रोशनी की रेखा दरवाजे के छेद से चमक रही थी। मैंने समझा कि किसी ने मजाक करने के लिए दरवाजा बन्द कर दिया है। वह वहीं छिप गयी है। अतएव मैंने दरवाजा खटखटाया। भीतर से किसी पुरुष की आवाज पाकर मैं चौंक उठा। फिर सावधानी से संभल कर अपनी पिस्तौल निकाल ली। अब मैं किसी भी घटना के लिए तैयार था।

दरवाजा खुल गया था। दो नवयुवक वहां चुपचाप खड़े थे। मुझे इस भांति पाकर वे भयभीत हुए। आपस में एक दूसरे की ओर देखने

लगे, फिर आहिस्ते से कुछ बातचीत की। एक ने मुझे भीतर आने के लिए निमन्त्रित किया। कमरे में सुन्दर ऊनी गलीचे बिछे हुये थे, जिन पर सफेद रंग के मोटे कम्बल पड़े थे। एक नीची पटरी पर लकड़ी के तीन चार प्याले थे तथा पास वाली लकड़ी की सुराही पर मदिरा। कुछ बर्तनों में खाना ढका हुआ था। वह सब कुछ देख कर मैं चकित सा रह गया।

वे दोनों चुपचाप बैठ गये। मैंने देखा कि एक किनारे दीवार से लगी बारूद भरने वाली बन्दूक खड़ी थी। वे दोनों युवक चुपचाप बैठे ही रहे। उनके चेहरे से परेशानी टपक रही थी। मैंने उनकी टूटी फूटी बोली में पूछा कि वह कौन सा स्थान है। एक शायद मेरी बात समझ गया। उसने उस स्थान का नाम बताया। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि मैं अपने डेरे से बारह मील दूर चला आया हूँ।

फिर मैंने उससे पूछा कि जो युवती अभी मेरे साथ आयी है, वह कौन है?

यह सुनकर दोनों आपस में न जाने क्या बातें करते रहे। जब मुझे कोई उत्तर नहीं मिला तो मैंने फिर पूछा।

वे दोनों आपस में कुछ सलाह करते रहे। मैंने देखा कि दोनों के चेहरे सफेद पड़ गये हैं। उन्होंने मेरी ओर देखा और न जाने क्या सोचते ही रह गये।

अब एक उठा और उसने मेरे आगे चौकी बिछा दी। दूसरा मेरे लिए खाना ले आया। पहले ने चांदी के एक प्याले में मदिरा ढाली और फिर दो प्यालों में अपने लिए निकाली। मुझे सौंप कर अपने अपने प्याले ले लिए और चुपचाप चुस्कियां लगाने लगे।

मेरा मन तो उस युवती के बिना बेचैन सा था। मैंने फिर उस युवती के बारे में पूछा और बताया कि वह मुझे किस भांति मिली थी और वह कैसे मुझे यहां ले आयी।

मेरी बात सुन कर वे भय से कांप उठे। मेरा मन उमड़ रहा था। वह चुप्पी खलने लगी। मैंने पिस्तौल एक की ओर बढ़ा, कर तेजी से पूछा—वह युवती कहां है ?

वह युवक उठा। उसने चिराग हाथ में ले लिया और उस कमरे की ओर बढ़ा जहां उस युवती ने मुझे एक मधुर चुम्बन सौंपा था।

मैं उसके साथ आगे बढ़ा। चिराग की रोशनी में मैंने उस कमरे में देखा कि वह युवती चुपचाप एक कोने में घास के ऊपर लेटी हुई है। मैं उसके पास पहुँचा और उसे जगाने की निरर्थक सी चेष्टा की। वह उठी नहीं।

तभी उस युवक ने बताया, "वह हम दोनों भाइयों की पत्नी है। उसका चरित्र ठीक नहीं था। अतएव हम दोनों भाइयों ने आज शाम को उसकी हत्या कर डाली।"

मैंने सब कुछ सुना। उस युवती की ओर देखा और उस अन्तिम चुम्बन की याद आयी !

भय से मेरा सारा शरीर कांप उठा !!

जय हिन्द

उस सैनिक की ओर मैंने देखा। वह 'जय हिन्द' के नारे से अपने साथियों का अभिवादन कर रहा था। अधेड़ पैंतिस साल का व्यक्ति; लम्बा शरीर; चेहरे पर सात-आठ रोज़ की उगी हुई दाढ़ी; जिसमें हड्डियाँ उभरी हुई साफ़ साफ़ दीख पड़ती थीं। उसकी गड्ढे में बैठी हुई छोटी-छोटी आँखों में एक नवीन पैनापन था। उन पर निराशा और घृणा के धुंधले बादल छाए दीख पड़ते थे, जिनको वह अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से बार-बार हटाने के लिए प्रयत्नशील था। उसकी खाकी वरदी शायद तीन-चार महीने से नहीं धुली थी। वह बहुत मैली थी। वह बातें करते-करते बीच-बीच में गुस्से में भर कर तेजी से बोलने लगता था; "साथियों, हमने नेताजी के सामने खून से लिख कर प्रतिज्ञा की थी कि भारत को आजाद करेंगे या मर जावेंगे।"

उसकी आँखों से एक क्रान्तिकारी की सी तेज़ चिनगारियां निकल रही थीं। ऐसा लगता था कि उसके साथी और वह किसी आनेवाली क्रान्ति के बारे में कोई फैसला कर रहे हों, जिसकी लहरें शीघ्र ही फूट कर बह निकलेंगी! तब स्वतंत्रता का रास्ता खुल कर आसान हो जायगा। बातों के बीच-बीच में वह दुहराता था— हमारे नेताजी ने कहा था। 'नेताजी' शब्द का उच्चारण करते समय आत्माभिमान से उसकी छाती फूल उठती थी और आजाद-देश के सैनिक की चेतना पाकर गर्व से वह सिर ऊपर उठाता था।

एकाएक उसके चेहरे पर निराशा के बादल छा गए। उसने घृणा से मुंह बिचका लिया। मानों अपमान का कोई सोता फूट निकला हो या स्मृति ने किसी पिछली घटना का कड़ुआ पाठ याद दिलाया हो। उसने सावधानी से अपने कमीज की जेब पर से माचिस

और बीड़ी का बण्डल निकाला। सबको बीड़ियाँ बांट कर खुद भी एक सुलगा ली। लगता था कि वह उस धुएं के साथ अपने जीवन की कुछ सोई हुई निर्बलताओं को भी बाहर निकाल फेंक देने के लिये संघर्ष कर रहा हो। वह बड़ी देर तक चुपचाप अपने में ही खोया रह गया। उसके हृदय पर फैलती हुई घृणा, चेहरे पर प्रतिबिम्बित हो उठी। उस ज्वार-भाटे से वह संघर्ष कर रहा था।

मेरे हाथ में उसके 'डिसचार्ज' का पट्टा था, जो कि उसे सुबह सैनिक-दफ्तर से मिला था। उसकी खानापूरी की गई थी। सब कुछ पढ़ कर मैंने वह उसे लौटा दिया। उसे हाथ में लेते ही उसका चेहरा लाल पड़ गया। वह उत्तेजित होकर बोला, "अजी साहब, हमारे हाथ की बात होती तो हम एक-एक बारिक को तोड़ डालते, उनका एक-एक टीन उखाड़ कर फेंक देते। खून की कड़वी घूँट पीकर ही हमने सारा अपमान सहा है। अगर आज हमारे पास हथियार होते तो हम एक-एक अंग्रेज को हिन्दुस्तान से निकाल कर ही दम लेते।"

चारों ओर एक गम्भीर चुप्पी छा गई। वे बारिकें, उनके टीन, वहाँ अंग्रेज की हुकूमत का प्रतीक वह युनियन जैक! आजाद हिन्द फौज इम्फाल में हार गई थी। हर एक सिपाही सोचता है कि वह हार अँग्रेजों की जीत थी! आजाद फौज के कुछ सिपाही दिल्ली पहुँचे, पर अपने फौजी मोरचे के साथ नहीं। वे कैदी बनाकर लाए गए थे। सरकार ने उन पर दुश्मन की मदद करने का आरोप लगाया था। लाल किले पर आज भी अँग्रेज का झण्डा फहरा रहा था। उनके कई साथी गोली से उड़ा दिए गए; कुछ जेलों में सड़ रहे हैं; कुछ पर विद्रोह का मुक़दमा चल रहा है। जो छूटे भी हैं तो उनकी जायदाद जब्त कर ली गई हैं। उनको अपमानित करने के लिए अधिकारी वर्ग सदा सतर्क रहा करता है।

जो अँग्रेज उन सैनिकों को अपाहिज की भाँति मलाया और सिंगापुर में जापानियों की शरण में छोड़ कर भाग आया था, वही आज फौजी दफ्तर पर हुकूमत करता है। आफिसर कमांडिंग ने सुबह उससे कहा था कि उन लोगों ने दगा दी है। फौजी अनुशासन को तोड़ कर सैनिक परम्परा को नष्ट कर दिया है। सबको गोली से उड़ा दिया जाना चाहिए था। लेकिन अँग्रेज रहमदिल होता है। वह दुश्मन के साथ भी अच्छा व्यवहार करना जानता है।

कस्बे के उस छोटे से होटल में अजीब चहल-पहल थी। होटल का मालिक एक काइयाँ व्यक्ति है। वह तरकारियों में अधिक मिर्च डलवा दिया करता है कि मुसाफिर कम रोटियां खा सकें। साधारण खूराक बारह आना है। कुछ सैनिक तकरार कर रहे थे कि गोश्त की प्लेटों का शोरबा पानी की तरह है, उसमें बोटियां बहुत कम हैं! उस पर चौदह आना प्लेट, दाम बहुत अधिक है। खाने के कमरे का सामान भी अजीब सा था; कुछ पुरानी लोहे की कुरसियाँ, पांच मेजें और तीन बेंच। रसोई के कमरे से पत्थर के कोयलों की बास आ रही थी; नौकर बाबा-आदम के जमाने की खरीदी हुई अलमूनियम की कटोरियों और फूटी पीतल की थालियों पर खाना परस-परस कर ला रहे थे। उस छोटे कस्बे से पहाड़ी कैण्टूनमेंट को जानेवाली गाड़ी बदली जाती है। आने और जाने वाले सभी मुसाफिरों का पड़ाव यह होटल है। इधर होटल वाले ने चारपाई का किराया तीन आना कर दिया है। वे चारपाइयाँ वर्षों से मुसाफिरों का आतिथ्य करती रही हैं। उनका आखिरी वक्त अब दूर नहीं लगता है।

होटल के जीवन से हट, लगभग दो फलाँग की दूरी पर एक बूढ़ी खटींग ने चकला खोल रखा है। ग्राहक के पहुँचते ही वह सात-आठ लड़कियों को कतार में खड़ी करके चिमनी की रोशनी में हर एक का चेहरा दिखला कर, उनकी फीस भी बतलाती जाती

है। बुढ़िया का रोना है कि कन्ट्रोल के इस युग में कुछ नहीं बचता है। सारा व्यवसाय घाटे पर चल रहा है। लड़कियों की सजावट और उनको खाने पिलाने में ही सारी आमदनी खर्च हो जाती है। कुछ मनचले वहां से लौट कर शिकायत करते हैं कि होटल की चारपाइयों के बड़े-बड़े खटमल रंगमहल तक पहुँच गए हैं। वे वेश्याएँ साधारण मजदूर और किसानों की बेटियाँ हैं, जो परिवारों से भाग कर वहां पहुँच गई है। बुढ़िया के चंगुल से निकल भागना उनके लिए आसान काम नहीं है। हर एक मन लगा कर मेहनत करती है कि वह स्वतंत्र हो जाय। हिसाब करने पर बुढ़िया का कर्जा निकल आता है। वह चालाक औरत मटमैला रजिस्टर निकाल कर बतलाती है कि वह सही हिसाब रखने की पक्षपाती है। उनको मुसीबत के दिनों में आश्रय दिया था। पूरा हिसाब साफ कर हर एक जहाँ चाहे चली जांय, उसे कोई आपत्ति नहीं होगी। वे लड़कियाँ हताश होकर सोचती हैं कि पाँच, सात, आठ साल के इस नारकीय जीवन के बाद भी आज वे स्वतंत्र नहीं हो पाई हैं। वे नारी की उस दासता को कोसती हैं। सामन्तवाद ने एक व्यवस्था उन पर लागू करके यह व्यवसाय फैलने दिया था, पूँजीवाद ने उसे फूलने फलने में बल दिया। आगे भविष्य में शायद नई सामाजिक व्यवस्था के साथ उसका अन्त होजायगा। इतिहास और इस भविष्य की दूरी पर वे लड़कियाँ नहीं सोच पाती हैं। आज के अपने जीवन से वे परेशान सी लगती है।

उस होटल और चकले की आपसी कहानियाँ भी कई हैं। होटल के किसी मुसाफिर का लड़कियों के प्रेम-जाल में फँस जाना। किसी लड़की के भाग जाने पर मालकिन का मैनेजर को कोसने आना कि वह उसका कारबार नष्ट करने का षड्यंत्र रचा करता है। नौकरों द्वारा वहाँ की लड़कियों की सुन्दरता की बखान, मुसाफिरों के

अपने अनुभव और उन मनचली छोकरियों की रस-भरी बातों की चर्चा...............

एकाएक सैनिकों ने एक गीत गाना शुरू कर दिया—आजादी का साल आ गया, भाइयों भरती हो जावेंगे

साथियों चलो भरती हो जावेंगे
आजादी के लिए मरना पड़ेगा
साथियों चलो भरती हो जावेंगे
शेर हिन्द फौज इम्फाल पहुँच गई है
वह अब लड़ लड़ कर दिल्ली के तख्त पर पहुँच जावेगी
साथियों चलो भरती हो जावेंगे
चलो, आओ लाल किल्ले पर आजादी का झंडा लगाने बढ़ें !

वह गीत उस होटल के कोने-कोने में गूञ्ज उठा। कुछ सैनिकों ने थालियाँ बजानी शुरू कर दीं। कोई सीटी बजा रहा था। कुछ ताल देने लगे। जो बचे वे मेजों को ही थपथपाने लगे। कुछ सैनिक कतारों में खड़े होकर मस्ती से झूम रहे थे। कुछ नाचने लगे। एक नया समा बँध गया। लगता था कि आजादी का प्रलय शुरू हो गया हो। मानों सच ही वे सैनिक दिल्ली का तख्त ले लेने के लिए आगे बढ़ रहे हों। उनका वह उत्साह और कुर्बानी के लिए पिया हुआ नशा—सब नूतन और नवीन लगता था। हर एक की आँखों की लाल-लाल डोरियों में अंग्रेज के लिए नफ़रत भरी हुई थी। साम्राज्यवादी प्रतीक यूनियन जैक को हटाकर वे वहाँ आजादी का झंडा फहराना चाहते थे। अब हर एक का दिल भर आया। सब इस गीत को गा गा कर, एक बार अपने को भूल जाना चाहते थे।

एकाएक वह गीत बन्द हो गया। वे सब थक गए थे। होटल में सन्नाटा छा गया। कोने की मेज पर बैठे हुए दो साधारण मुसा-

फिर चकले की रमणियों की सौन्दर्य चर्चा वीभत्स रूप में कर रहे थे। उधर होटल का नौकर चिल्ला रहा था—पश्चिम जाने वाली गाड़ी का वक्त हो गया है। कुछ सोए लोगों को वह जगा रहा था।

दूसरा नौकर मालिक की वफ़ादारी करता हुआ, चाय के गिलास ला-ला कर कह रहा था—गरम चाय, दो आना गिलास।

एक मुसाफिर महाराज से झगड़ रहा था कि खाना ठीक नहीं बना हुआ है। रोटियों में बजरी मिली हुई है। वहाँ मुनाफ़ाखोरी होती है। ग्राहकों के आराम की किसी को परवा नहीं है। उसके समझाने पर कि कन्ट्रोल का आटा है, मुसाफिर और गरम हो रहा था कि वह मैनेजर से शिकायत करेगा। नौकर के समझाने पर कि वे ऊपर सो गए हैं, अब सुबह को आवेंगे; वह उसी समय उनसे मलने का तकाज़ा कर रहा था।

—अब कुछ सैनिक उठे। हर एक ने अपनी पाकेट-बुक पर दूसरों का पता लिखा। एक ने दूसरे को आश्वासन दिया कि वह पत्र लिखेगा और उत्तर की प्रतीक्षा करेगा। अब वे अपना अपना बँधा हुआ सामान उठा 'जय हिन्द' का अभिवादन करके चले गये। सब के चेहरे पर निराशा और बेबसी छाई हुई थी। वे हार कर अपने गाँवों को जा रहे थे। उनके पास गांव के बच्चों के लिए कोई तोहफ़ा नहीं था। परिवार तथा और नातेदार उनकी आर्थिक दशा पर खुश नहीं होंगे।

यह उनका होटल का जीवन, कुछ घंटे मेस के जीवन की तरह कटा था। जहाँ कि वे एक बार दिल खोल कर आजादी का गीत आखिरी बार गा चुके थे। आगे संभवतः वे इस भाँति एकत्रित न होंगे। वे अपने घर दूर-दूर धरती में फैले हुए गांवों को जा रहे थे, जहाँ कि उनकी गैरहाजिरी में पटवारी और महाजन ने मिल कर उनके खेतों को हड़प लेने की सारी तैयारी कर रखी होगी। वे किसान के

बेटे आज अपने-अपने घर लौट रहे थे, जहाँ वे गरीबी, कर्जा और अकाल के दलदल में फंस जावेंगे। भविष्य अंधेरा सा था। समाज का वह ढांचा जहाँ वे पैदा हुए, पनपे और बढ़े उस सब से अब तक वे दूर थे। आज तक अपने बैरीक, मेस, कवायद, युद्ध के सामान हत्या आदि से उनको वास्ता पड़ा था। कल ये साधारण जनता के बीच खो जावेंगे। पिछले चार-पांच साल में उनका स्वभाव, जीवन भावनाएँ, भावुकता आदि—सब-सब मानवीय गुण, सैनिक-मशीन के भीतर खो गए थे। आज यह दुनिया बहुत बदलती लगती है। अपने को उससे अलग पाकर वे चौंक उठते हैं। सैनिक जीवन की हँसी-खुशी, मजाक के बाद वे अपने पुराने भावुकता वाले परिवारों में लौट रहे हैं। जो बन्धन पाँच वर्ष से टूट चुके हैं, उन टूटी लड़ियों को वे फिर से जोड़ने की सोचते हैं। यह उनका प्रमाद नहीं है। सैनिक जीवन की बातें धुँधली-धुधली सी पीछे खोती जा रही थीं। आगे परिवार गांव और उनके बचपन की अपनी स्मृतियाँ हृदय में हिल्लोरें लेती जाती थीं।

वे सैनिक चले गए थे। गाड़ी भी आई और चली गई। उसकी तेज सीटी का स्वर हृदय को बेंध कर बाहर निकल गया। एक बेचैनी सी हमारे चारों ओर फैलती हुई लगी। वह मेरा साथी चुपचाप बीड़ी फूँक रहा था। धुआँ उगलते समय वह घृणा से मुँह बिचका लिया करता था। असावधानी से झड़ी राख मेज पर जम रही थी। कुछ और मुसाफिर रेल से उतर कर होटल में आ पहुँचे। दो परिवार भी साथ आए थे। नौकर आँखें मल-मल कर उठे और आगन्तुकों का प्रबन्ध करने लगे। कुछ सैनिक उस गाड़ी से उतरे थे। वे छुट्टी पर अपने घर जा रहे थे। उनमें एक जमादार था, जो आगे बढ़ कर मेरे साथी के पास आकर बोला, "क्यों जवान, अपने नेताजी के लिए रो रहे हो। उठो न बोलो—जय हिन्द!"

मेरे साथी ने आव देखा न ताव, बिना कोई उत्तर दिए ही जमादार साहब की गरदन पकड़ कर बोला, "साले तू अंग्रेज की गुलामी कर रहा है। आज हमारे पास हथियार होते तो हम एक एक अंग्रेज को हिन्दुस्तान से बाहर निकाल करके ही दम लेते। नेताजी को हमने खून से लिख कर दिया था कि अंग्रेजों को जब तक हिन्दुस्तान से नहीं निकाल देंगे चैन नहीं लेंगे। हमने प्रतिज्ञा की थी कि......... ।"

जमादार चुप हो गया। तकरार न बढ़ा कर बेशर्मी से बाहर चला गया। उसे इस घटना से कोई दुःख नहीं हुआ। वह तो खूब पिए हुए था। उसके मुंह से शराब की तेज महक आ रही थी। जब वह दूर चला गया तो मेरा साथी पास आया और गदगद स्वर में बोला, "भाई साहब, क्या आजादी जल्दी नहीं मिलेगी? यहाँ हिन्दुस्तान में तो हिन्दू, मुसलमान, हरिजन सभी आपस में लड़ रहे हैं। बड़े निकम्मे लोग हैं ये? आजाद फौज में मजहबी झगड़ा नहीं था। नेताजी ने कहा था कि सबको मिलकर अंग्रेज से हुकूमत छीननी है। यहाँ तो लोग आपस में अपना सिर फोड़ रहे हैं। क्या चुनाव होते ही हमें स्वराज्य मिल जायगा? ये अंग्रेज यहां कब तक रहेंगे? मेरा मन तो करता है कि कहीं से हथियार लाकर......... ।"

वह सीधा-साधा सैनिक कहाँ जानता था कि आजादी और नेताओं के बीच सोने का मृग इंगलैण्ड वालों ने खड़ा कर दिया है। मानवता के नाते को तोड़ कर वे आपस में झगड़ रहे हैं। स्वतंत्रता की सुबह आने से पहिले ही वे मतवाले होकर अपनी राह भूलते जा रहे हैं। करोड़ों की जनता उनकी ओर आँख उठा कर देख रही है।

मुझे चुप देखकर वह आगे कुछ पूछने का साहस नहीं कर सका। मैं स्वयं उसे उत्तर देने में असमर्थ रहा। मैं न समझ सका कि

जनता आज ब्रिटेन की हुकूमत से जितनी नफरत करती है, उतनी नेताओं के मन में क्यों नहीं है। वे आपस में झगड़ रहे हैं।

एक सैनिक ने तभी उससे पूछा, "गाँव जाओगे ?"

"गाँव ! वहाँ कुछ नहीं है। साहूकार से पचास रुपया लिया था, वह अब चार-पाँच सौ हो गया है। सुना कुड़की उसने करवाली है। अठारह रूपल्ली के नोट सुबह फौजी दफ्तर से मिले थे। उनको अफसर के सामने ही फाड़ आया, यह कह कर कि आजाद हिन्द फौज वाले उन पैसों पर थूकते हैं। अफसर गुस्से में कुछ कहना चाहता था कि मैंने तेजी से कहा; "मैं मरने से नहीं डरता हूँ। नेताजी ने कहा था कि कायर होकर जीना अच्छा नहीं होता है। मौत तो एक न एक रोज जरूरी आवेगी।"

उसका साथी बोला; "मैं रुपये तो ले ही आया। देख और चीजें पहिले ही डर के मारे एक दूकानदार के यहां छिपा आया था कि साले हरामजादे छीन लेंगे। वर्दी तक उतरवा कर फटे कपड़े देते हैं। कहता था कि माफी मांग लो।"

"तुम अपने गांव जाओगे ?"

"हां ! मैं अपनी मां का अकेला बेटा हूँ। बड़ा भाई और बाप फ्रांस की सन् १९१४ की लड़ाई में मर गये थे।"

"मौका लगा तो एक बार सब से मिलने आऊँगा।"

"तुम भी तो गांव जाओगे न !"

"नहीं, कहीं नौकरी करूँगा। आखिर पापी पेट तो भरना ही है।"

"पेट ! क्या कहा हवलदार साहब ?" मेरे मुँह से अचानक छूट गया।

"हां भाई साहब, कुछ न कुछ तो करना ही होगा। बिना नौकरी के गुजर कैसे होगी। कुछ सिलसिला चाहिये।"

मैं उसके घर के बारे में उसके और साथियों से सुन चुका था। पहिले उसका बच्चा मरा, अकेली पत्नी क्या करती। महाजन भैंस और बैलों को ले गया। पटवारी, कानूनगो और महाजन गांव की इन तीनों जोंकों ने उसका खून चूसा था। पति के पत्र और मनिआर्डर की आशा वह महीनों तक लगाती रही, फिर एक दिन एकाएक लोप हो गई थी। लोगों का ख्याल था कि वह नदी में डूब कर मर गई। कुछ किंवदंतियां फैलीं और समय के साथ साथ उनका अस्तित्व भी मिट गया।

होटल के कोने से अजीब ठहाका उठा। मैंने देखा कि जमादार साहब चकले से दो औरतों को ले आये थे। बीच मेज पर ठर्रे की बोतल सजाई गई थी। स्टेशन से खोंचे वाले से चाट मँगवाई गई और तीनों ने ढालनी शुरू कर दी। वे लड़कियां सस्ता पाउडर लगा कर आई थीं। दोनों ने नकली गहने पहन रखे थे। बार बार वे आंखें मटकाती थीं। जमादार साहब उनके साथ गन्दे गन्दे मज़ाक कर रहे थे। वे भी उत्तर देने में पटु थीं। एक तो बीच में, एक तड़फती गजल गाने लगी, और सब लोग उस ओर उपेक्षित भाव से देख रहे थे। उनकी वह अश्लीलता धीरे-धीरे असह्य हो उठी, फिर सब ने होटल के जीवन में उसे भी खो जाने दिया। होटल के विशाल व्यक्तित्व ने उन दोनों को भी आश्रय दे दिया था। हर एक विचार का व्यक्ति वहां आश्रय पा लेता है, किसी का दूसरे की बातों से खास वास्ता नहीं रहता।

मेरा साथी कह रहा था, "इम्फाल में जापानी पहिले पीछे हटे थे, हमें उनका साथ देने के लिये विवश होना पड़ा। हमारे सिपाही लड़ते-लड़ते थक गये थे। खाना नहीं, कपड़ा नहीं, युद्ध का ठीक सा सामान नहीं। इस पर अंग्रेज पर्चे फेंक कर फुसलाते थे कि हम हिन्दुस्तानी हैं। वह मोरचा! वहाँ से मुड़ जाना पहली हार थी, नहीं तो......।"

मैंने उसकी ओर देखा। उसका जोश उभर रहा था। पागलों वाली लाली मैंने उन आंखों में पाई। वह विक्षिप्त नहीं था। उसके हृदय में जिस जोश को अचैतन्य सी अवस्था में उड़ेला गया था, उसे वह कहाँ संवार पा रहा था। वह जोश साथ था, पर कोई सही सा रास्ता आज उसे आगे बढ़ने को नहीं मिला था। वह उठ बैठा और कहता रहा, "हमारे पास हथियार नहीं थे। जापानियों से छीनी हुई टामीगन, मशीनगन और निकम्मे पुराने सामान से क्या करते? अगर पूरा सामान होता तो आज लाल किला हमारा होता। एक भी अंग्रेज हिन्दुस्तान में नहीं दीख पड़ता। नेताजी ने कहा था, बहादुरों, हमारा देश सैकड़ों वर्ष से अंग्रेजों की गुलामी कर रहा है। हमें भारत माता को स्वतन्त्र करना है। हम अपने शरीर के खून की एक-एक बूँद देश की आजादी के लिए दे देंगे।"

उसकी बातों पर मैं विचार करने लगा। जापानी तानाशाही नष्ट हो चुकी थी। आजाद फौज का एक एक सैनिक अलग-अलग, अपने-अपने गाँव लौट कर जा रहा था। आज उसकी अपनी पलटन नहीं है, मेस नहीं है और न अपने बारिक हैं। वह गांव की जनता के बीच खो रहा था। हर एक नेताजी की बातें दुहराता है। मानो वे उनके जीवन के सच्चे प्रतीक हों। जनता से वह अभी अपना कोई नाता नहीं जोड़ना चाहता। वह उनके बीच अपनी जगह कहाँ बना पाता है? वह समझता है कि वह केवल नेतृत्व करेगा उन किसानों का!

कहा उसने, "ब्रह्मा आज आजादी की लड़ाई लड़ रहा है और हम सब तो उसी अंग्रेज के गुलाम हैं।"

तो बोल बैठा मैं, "जापानी ब्रह्मा को आजादी देने नहीं आए थे वे तो चक्रवर्ती सम्राट बनना चाहते थे। ब्रह्मा के निवासियों को एक नई गुलामी में जकड़ना चाहते थे। जापान हार गया और ब्रह्मा के

लोगों ने मिलकर अंग्रेज को निकालने की ठहराली है। जापान की हार अंगरेज की जीत नहीं है। जावा वालों ने आजादी की लड़ाई शुरू कर दी है।"

उसे मेरी बात पर बिश्वास नहीं आया। सन्देह पूर्ण दृष्टि से उसने मुझे देखा। कहा था फिर मैंने, "जहाँ-जहाँ अंग्रेज का राज है उन देशों की जनता ने बगावत का झंडा उठाया है।"

उसे फिर भी मेरी बात का विश्वास नहीं हुआ।

नौकर चिल्ला रहा था कि पूरब जाने वाली गाड़ी आने वाली है। कुछ और सैनिक तैयार होकर बिदा हो रहे थे। सुबह तो वे सब साथ-साथ ही भरती के दफ्तर से लौटे थे। मिलिटरी बस में एक बार सबने आजादी का गीत गाया था। फिर रेल के डिब्बे में एक बार उस पिछले जीवन की झाँकियाँ दीख पड़ी थीं। अब वे बिदाई ले रहे थे। वे दूर-दूर जा रहे हैं।

जमादार और उसकी सहेलियाँ पी कर मस्ती के साथ कोई गजल गा रही थीं। उनका बेसुरा स्वर भला नहीं लगता था। वह सैनिक उनके पास पहुँचा और जोर से बोला, "देश गुलाम है और तुम क्या कर रहे हो। नेताजी ने कहा था कि जब तक आजादी नहीं मिले, हमें चैन नहीं लेना चाहिये।"

एक युवती ने उसके गले में दोनों हाथ डाल कर कहा, "वाह मेरे राजा!"

एक झटके से उसे धकेल कर वह मेरे पास आया।

मुझे उसके व्यवहार से आश्चर्य नहीं हुआ। लेकिन उसका हृदय ग्लानि से भर गया। वह बहुत घबरा गया था। जमादार और उसकी सहेलियाँ ताली बजा बजा कर अभी गा रही थीं। वह स्तब्ध सा उनको देखता ही रह गया।

सैनिक आपस में 'जय हिन्द' के साथ विदाई ले रहे थे। वह अभिवादन हर एक के मन की व्याकुलता प्रकट कर रहा था। वे चले गये थे। मेरे साथी के चेहरे पर उदासी के बादल छा रहे थे। आज यह उनका आखिरी मेस का जीवन था। २५ अक्टूबर, १६४० को वे किसी भीतरी कैन्टूनमेंट से बम्बई के लिए रवाना हुये थे। २८ को जहाज पर चढ़े। १५ नवम्बर को सिंगापुर पहुँचे। ६ दिसम्बर कैन्टन! एक साल वहीं रहे थे। ६ जनवरी १६४१ को वे गिरफ्तार हो गये थे। फिर मोहन सिंह का आना, आजाद फौज का जन्म और नेताजी........?

वे छै वर्ष बीत चुके थे। जिनकी कुछ घटनाएँ ही अब कभी-कभी चमकती थीं। अन्यथा वह सब खो चुका था। वह भौगोलिक दुनिया भी मन में कहीं हरियाली नहीं फैला पाती थी। आजाद-फौज का जीवन आज सुपना बन गया था। हर एक का अपना जोश धीमा पड़ रहा था। मौत और मर मिटने की वह पगली भावना यदा-कदा मन में उठ कर खो जाती थी।

—अब बड़ी रात बीत चुकी थी, होटल का वातावरण शान्त हो गया था। मुसाफिर जहाँ तहाँ सो रहे थे। रसोई के कमरे में सन्नाटा था। बाहर पूस की कड़ी ठंड थी। फिर भी कुछ कुत्ते हड्डियों के लिए आपस में लड़ रहे थे। कहीं कुछ सियारों की हूआ, हूआ, हूआ कानों में पड़ जाती थी। मेरा साथी उसी भांति चुपचाप बैठा हुआ था। न जाने वह क्या सोच रहा था। वह आज अब सैनिक जीवन से छुटकारा पा गया है। अब उसे नये जीवन में प्रवेश करना है, जिसे कि छै वर्ष हुए वह भूल चुका है। वही समाज, उसका टूटता हुआ आर्थिक ढाँचा! वह पढ़ा-लिखा नहीं है, साधारण किसान का बेटा है, जिसने बचपन में नदी के किनारे गाएँ चराईं। कुछ

बड़े होने पर खेत पर हल लगाया। एक दिन भरती खुलने पर वह रंगरूट बन कर भरती हो गया।

मैं उसके मनोभावों को समझ करके भी चुप रहा। अभी भी उसकी आंखों में खूनियों वाला पैनापन था। उनमें एक नया जोश और नई चमक थी। वह एक व्यक्तिवादी क्रान्तिकारी की भांति सोचता है कि वही आजादी लावेगा। जनता उसके इशारे पर नाचेगी। लेकिन जनता तो निकम्मी है। उसका नेतृत्व वह कहाँ स्वीकार करती है!

अब वह उठ बैठा। रात के तीन बज रहे थे। जमादार और वे रमणियाँ हमारे पास आईं। तीनों ने एक साथ उस सैनिक को सलाम कर 'जय हिन्द' द्वारा अभिवादन किया और फिर वीभत्स हँसी हँसी पड़े। अब वे चले गए थे।

वह तो चुप रह गया, अवाक। कुछ नहीं बोला। उसका जोश ठंडा पड़ गया था। सारा उत्साह चुक गया था। वह उन पतितों से बातें नहीं करना चाहता था। वे उसकी दृष्टि में बेकार जीव थे। वह जमादार छुट्टी पर घर आया हुआ है। सैनिक जीवन का एक झूठा प्रदर्शन कर रहा था। उसका यह नैतिक पतन था। वे सैनिक अनुशासन अपने मालिक की भांति ही जानते हैं।

अब वह अपना सामान संभालने लगा। उसकी गाड़ी आने का वक्त हो रहा था। वह पूरी तैयारी कर चुका तो पूछा मैंने, "कहाँ जाओगे अब?"

"अपने गाँव।"

"कानूनगो, पटवारी और महाजन के राज में!"

"भाई साहब, शहर में नौकरी करना मुझे पसन्द नहीं है।"

"और गांव में......?"

"साहूकार से कर्जा लेकर बैल और हल खरीदूँगा । फिर धरती माता अन्न देगी। किसान का बेटा हूँ, धरती का मोह नहीं छूटता।"

वह 'जय हिन्द' अभिवादन करके चला गया।

जाते समय वह अपनी यादगार आजाद हिन्द बैंक का एक नोट दे गया था, जिस पर सुन्दर अक्षरों में 'जय हिन्द' लिखा हुआ था। वह नोट आज किसी मूल्य का नहीं है।

सोचा मैंने कि कहीं वह सैनिक भी.........!

भेड़िए की माँद

"तुम आज क्या सोच रहे हो कौशल ?"

आज तो कौशल का मन उड़ा-उड़ा सा फिर रहा था। चेहरा उदास था। वह चुपचाप कुरसी पर लधरा हुआ सिगरेट फूँक रहा था। मैं उसे वर्षों से जानता हूँ। पहले उसमें बहुत जीवन था और उस जीवन में प्राण थे। जो कि भावुकता से गतिवान न होकर सागर की भांति गम्भीर प्रवाह में बहते थे। भारतीय क्रान्ति के सुनहरे प्रभात में देश के प्रति मर मिटने की बावली भावना के साथ वह भी पकड़ लिया गया था। साम्राज्य के खिलाफ सशस्त्र क्रान्ति करने वाले दल पर जब मुकदमा चला, तो उसके खिलाफ सी० आई० डी० और मुखबिरों के बयान सुन कर जज और जूरी दोनों दंग रह गए थे। फांसी की सजा देने वाले अंग्रेज जज का दिल उस पन्द्रह सोलह साल के लड़के, जिसके चेहरे पर अभी तक दुनियादारी की छाप नहीं पड़ी थी, पिघल गया। उसे बारह साल की सजा देकर ही, उन्होंने अपने मन से समझौता कर लिया था। फिर जेल के जीवन में उसका व्यक्तित्व निखरता चला गया। वहां की यातनायें उसके दिल को नहीं तोड़ सकीं। उसका हृदय भले ही मोम की भांति कोमल रहा हो, उसका विश्वास फौलाद की भाँति कड़ा था। उसका फक्कड़पन तो सब में एक नया जीवन फूँकता था।

आज वह उसी भाँति बैठा हुआ अपने से झगड़ रहा था। कभी आँखें उठा कर वह सामने देखता। वहाँ दूब भरे हरे मैदान पर जाड़ों की धूप फैली हुई बहुत प्यारी लगती थी। क्यारियों में रंग-बिरंगे फूल खिले हुए थे। कभी कोई तितली उनके चारों ओर

उड़ कर ऊपर नीले आकाश में ओझल हो जाती थी। पास ही हाते की दीवार को छूती हुई, तारकोल से पुती जो चौड़ी सड़क थी, वह बिलकुल सूनी थी। लगता कि मानो वहाँ का समूचा जीवन कोई लूट कर ले गया है। कभी कभी 'स्पेशल आर्मड कानस्टवेलरी' की लारी खड़-खड़-खड़ करके उधर से गुजरती थी। उसमें खाकी वरदी वाले सिपाही बन्दूकें थामे हुए बैठे दीख पड़ते थे। या कोई मुसाफिर उधर से गुजरता तो वह डरी हुई दृष्टि से अपने चारों ओर देख लेता था। नागरिक जीवन के रक्षा वाले आपसी समझौते पर से मानो कि उसका विश्वास उठ गया हो। शहर पर 'करफ्यू' था। दिन रात्रि की भांति ही निर्जीव और सूना-सूना लग रहा था। कहीं भी जीवन भास नहीं होता था।

कौशल ने सिगरेट की अन्तिम कश लेकर, उसे दूर फेंक दिया। वहीं सामने की हरी दूब पर चुपचाप पड़ी-पड़ी धुएँ की एक रेखा सी ऊपर उड़ाने लगी। अब उसने मेरी ओर देखा और गम्भीर होकर बोला, "कास्मिक किरण की बात सोच रहा था मैं। यह 'एटम बम' तो दुनिया पर एक नई आफत ले ही आया है। जिसके पास वह होगा, वह सारी दुनिया पर हुकूमत करने के झूठे लोभ को नहीं भुला सकता है। लेकिन 'कास्मिक किरण' तो उससे भी भयंकर है। मेरा मन इन विनाशकारी आविष्कारों की बात सोचकर मुरझा जाता है। आज हम दुनिया में उन मुर्दों की भांति जी रहे हैं, जिनको चीर-फाड़ कर, 'मेडकिल कालेज' के विद्यार्थी अपना डाक्टरी ज्ञान बढ़ाया करते हैं।"

यह कह कर उसने नीचे फर्श पर पड़ा हुआ एक साप्ताहिक अखबार उठाया और मुझे दे दिया। उसमें एक व्यंग चित्र था। एक सुन्दर शहर के ऊपर एक दानव उड़ रहा था। नीचे लिखा था—'कास्मिक किरण!'

फिर वह कहने लगा, "यह एटम बम नाश करने की एक बावली

भावना को लेकर आया है। हमारे सदियों पुराने आपसी सम्बन्ध मिट गए हैं। उसे पाकर कोई भी देश पागल सा हँस उठता है। सिकन्दर ने जिस प्रकार विश्व-विजय की भावना कभी फैलाई थी। आज उसकी पुनरावृति हो रही है।"

मुझे उसकी बातें सुन कर हँसी आ गई। मजाक सा करता हुआ मैं बोला, "लगता है कि तुम कल्पना की दुनिया में आजकल रहते हो। छोटी-छोटी घटनाओं को लेकर उन पर टिक जाना और फिर भावुकता का गुबार लिए-लिए फिरना किसी कवि के लिए भले ही शोभनीय हो सकता है, तुम्हारे लिए नहीं। तुम तो उस परम्परा को अपनाने वालों में हो, जिसमें कि लाखों नौनिहाल अब तक शहीद हो चुके हैं।"

यह सुन कर वह ठहाका मारता हुआ हँस पड़ा। उसकी वह हँसी उस सुनसान मे बार-बार गूँज उठी।। मानो कि वह उस निर्जीव वातावरण के पर्दे को फाड़ने तुल गई हो। वह प्रतिध्वनि निराशा की एक कठोर भावना सी लगी। उसे सुनकर गायत्री भीतर से आई, बोली, "क्या बातें हो रही हैं।"

मैंने आसानी से कह दिया, "सोच रहे थे कि 'काफी' पीने होटल जांय या आपको कष्ट दिया जाय। कहीं आपने सुना दिया कि ग्वाला आज सुबह भी नहीं आया या चीनी का राशन कहाँ से आवे, दूकाने ही नहीं खुलती हैं, तो फिर कोई सवाल ही कब उठता है।।"

गायत्री मुझे देखकर बोली, "अमरीकन दूध का चूरा और गुड़ की 'काफी' पीनी हो तो बनवा दूँगी।"

मैंने हामी भरी और गायत्री चली गई। अब कौशल गंभीर होकर बोला, "मनोहर आया था अभी। उसका बच्चा बीमार है। उसका मन नहीं माना। कई दिनों से शहर पर 'करफ्यू' 'कास्मिक किरण' के दानव की भाँति छाया हुआ है। आज वह उसकी

सीमाएँ तोड़कर डाक्टर की तलाश में बाहर निकला था कि कानून को तोड़ने में पकड़ लिया गया। आखिर दो रुपया जुर्माना देकर छूटा ये साम्प्रदायिक दंगे कब तक चलते रहेंगे, नहीं जान पड़ता। चीजों के दाम बढ़ते ही चले जा रहे हैं। सरसों का तेल दो रुपया सेर होगया है; आलू दस आने सेर; डालडा का मिलना असंभव सा लगता है। राशन की दुकाने खुलती भी हैं तो एक सेर वाला चावल मिलता है। मध्यवर्ग का जीवन उस युद्धकाल में ही नष्ट हो चुका था, लेकिन चोर बाजार वाले आज फिर हम लोगों से मोरचा लेने लगे।"

मैंने कौशल की बात समझने की चेष्टा की। वह तो फिर कह ही रहा था, "आज लोगों के चेहरों पर पीली झाँई साफ-साफ चमकती है। उसे पाकर काँप उठता हूँ। अस्वस्थ माताएँ रोगी बच्चे...... ? कुछ ऐसा सा लगता है कि हम सब किसी घने अंधियारे में भटक रहे हैं। कोई रास्ता नजर नहीं पड़ता है।" वह अब चुप हो गया था।

उसकी बात समझ कर मैं बोला, "कौशल तुमने ठीक बात कही है। युद्धकाल में भावुकता का प्रवाह तीव्र हो उठता है। हम लोग इनसान हैं। हमारे जजबात पर समय का भारी असर पड़ता है। युद्ध समाप्त होने पर तेजी से देश में एक आन्दोलन उठा था। सब चाहते थे कि आजादी की आखरी लड़ाई लड़ी जाय। हमारी उस भावना को साम्राज्यवादी पहचान गए थे। १६४२ में जिस प्रकार वे जनता पर हमला करके सफल हुए थे, उसके विपरीत आज दूसरा हथियार अपना कर उन्होंने देश में आग सुलगा दी है। धार्मिक जिहाद के नारे आज से हजारों वर्ष पूर्व लगाए गए थे, लेकिन आज उनको फिर अपना कर देश को ज्वालामुखी में झोंक दिया गया है। यह गृहयुद्ध राजनीतिक दाँव-पेंच बन गया है। शहरों के बीच म्युनिसिपल और जिल्ले बोर्डों के चुनाव लड़ने के लिये शतरञ्ज की बाजी खेली जा रही हैं। जिसमें नीचे तबके के लोग गोटियों की तरह शेरशाह सूर की बनाई उस 'ग्रान्ड ट्रंक रोड' पर

मर जाते हैं। कभी उस सड़क पर मुगलों की सेनाएँ सामन्तवाद का पताका लेकर बढ़ी होंगी, फिर अँग्रेज सेना नायक अपना साम्राज्य स्थापित करने तोपों के साथ उधर से गुजरे थे। सन् १८५७ की गदर का भार भी उस सड़क ने उठाया। आज तो उसके दोनों ओर बनी बड़ी-बड़ी इमारतों को छूती हुई जो गलियाँ जाती हैं, वहां नर भेड़ियों ने अपनी माँदे बना रखी हैं। जहाँ कि मजहब के नाम पर भाई-भाई अंधों की तरह एक दूसरे पर हमला करते हैं।"

गायत्री काफी के प्याले ले आई थी। हम लोग चुपचाप चुस्कियाँ लगाते रहे। तभी मैंने पूछ डाला, "बच्चे लोग कहाँ हैं ?"

"भीतर खेल रहे हैं। छोटे की तबीयत इधर ठीक नहीं है। बड़े का तो खून ही नहीं बनता है।"

"यही समझ लो कि सब जिन्दा हैं। नहीं तो क्या लड़ाई एक खेल थोड़े ही है।" कौशल ने प्याला मेज पर रख कर सावधानी से कहा।

"आपकी तबीयत तो ठीक रहती है।" मैंने सहानुभूति के साथ पूछा।

"हाँ इन्जेक्सन ले रही हूँ।"

शायद बच्चे आपस में लड़ पड़े थे। गायत्री चुपचाप उठकर भीतर चली गई। मुझे लगा कि सारी गृहस्थी को अस्वस्थता की काली चादर ने ढ़क लिया है। कौशल उसी भाँति चुपचाप बैठा हुआ न जाने क्या सोच रहा था। उसकी आँखें लाल थीं। सामने का लाउन बहुत स्वस्थ लगा। प्रकृति तो सदियों से उसी स्वस्थता का पाठ पढ़ाती-पढ़ाती थकती नहीं है। वे ही सुन्दर फूल खिले हुए थे। चारों ओर एक जीवन सा उमड़ा पड़ रहा था। मैं चुपी को तोड़ते हुए बोला, "कौशल हमारे जीवन में गतिरोध आ गया है। इसी लिए हम निराशावादी हो

गए हैं। लेकिन जीवन को तोलने के ये सही बाट और तराजू नहीं है। बीस वर्ष पूर्व तुमने जिन साम्राज्यवादियों पर पिस्तोल से हमला किया था। आज वे हमारी व्यक्तिवादी आजादी की भावना को सामूहिक रूप में एकत्रित नहीं देखना चाहते थे। इससे उनको लाभ नहीं था। हमारे 'भारत छोड़ो' नारे से उनका सिंहासन डगमगा उठा। अतएव वे हमारी आजादी की व्यक्तिगत भावनाओं को आपस में लड़ा कर नष्ट कर रहे हैं। मध्यवर्ग की टूटती झाँकियाँ दीख पड़ रही हैं। वहाँ बार-बार मौत झाँकती है। उनके आपसी बन्धन तक तो टूट रहे हैं............।"

"तुम ठीक कह रहे हो।" कौशल ने मेरी बात काटी, फिर कहता ही रहा, "आज मेरी आस्था इस मध्यवर्ग पर से उठ गई है। कभी मेरा इस पर बहुत विश्वास था। आज मैं समझता हूँ कि शहर की आबहवा में चरित्र नहीं पनप रहा है और जब यहीं यह हाल है तो फिर......।"

अधिक बात न बढ़ा कर मैंने कहा "कौशल, देख रहा हूँ कि तुमारे मन पर एक धुन्ध छा गया है। यह निराशा कल्याणकारी नहीं है; चलो मेरे साथ।"

कौशल उठ बैठा। हम चुपचाप तारकोल से पुती चौड़ी सड़क पर चल रहे थे, जिसके दोनों ओर ऊँची ऊँची इमारतें खड़ी थीं। सड़क की निर्जनता अखरने लगी। हम बाजार के भीतर पहुँच गये थे। कभी वहां फलों और तरकारियों की दूकानों के आगे बड़ी भीड़ लगी रहती थी। आज वे सब दूकानें बन्द थीं। कहीं जीवन के चिन्ह विदयमान नहीं थे। पुलिस के इकुले-दुकुले सिपाही घूम रहे थे। नुक्कड़ पर गारद पड़ी हुई थी। कौशल आश्चर्य में सा चारों ओर देख रहा था। उसकी समझ में पुलिस का सिपाहियों वाला बाना नहीं आया तो, समझाया मैंने, "यह नई फौज है जो आज दंगों को रोकने के बहाने से बढ़ रही है। जब क्रान्ति की बयार बहेगी तो किसानों के बेटे जो फौज में भर्ती हो गये हैं, शायद अपने भाइयों पर हमला न करें। अतएव यह 'आर्मड कानस्टबेलरी' उस समय

उनका साथ देगी। इसमें अर्ध शिक्षित जातियों के ज्यादा लोग हैं।

कौशल, मेरी बात को सुन कर भौंचक्का रह गया। हम एक गली के भीतर बढ़ गये। वहां इधर उधर ईंटें पड़ी हुई थीं। गृहयुद्ध का एकमात्र वहीं अवशेष बाकी बचा था। चारों ओर चुप्पी थी। कभी कभी कोई चेहरा ऊपर खिड़कियों से झांक कर फिर संषित सा होकर उसे बन्द कर देता था।

हमने बूढ़े इलाही को देखा। वह अपने खपरैलों से छाए हुए कच्चे मकान के भीतर आंगन पर पड़ी हुई चारपाई पर लेटा था। वह इस गली, मोहल्ले और बाजार की अपनी दूकान से बाहर बहुत कम गया है। पैंसठ साल पार कर चुका है। पास किसी छोटे स्टेशन तक दो बार बिरादरी की शादियों में रेल का सफर उसने किया है। उसकी सारी दुनिया यह झोंपड़ी, उनकी दूकान और चन्द ग्राहकों तक सीमित है। प्रति वर्ष गरमियों में आठ-दस सुराहियाँ और पांच सात घड़ों का खरीददार मैं भी हूँ। मुझे देख कर बूढ़े को बड़ी खुशी हुई। वह उठ बैठा और चुपके भेद की बात सा बताता हुआ बोला, "बाबूजी बड़ा बुरा जमाना आ गया है। किसी का भी एतबार नहीं किया जा सकता है। यह देखिये शीतल की लड़की ने हमें मारने के लिये ईंटें फेंकी थीं।"

"शीतल की लड़की?"

"हाँ बाबूजी! सलीमा के साथ खेलती थी। दोनों हम उम्र थीं। बचपन में दोनों के कई झगड़ों वाली बातें मैं सुलझा कर दोनों में दोस्ती करवा देता था। सलीमा की मौत के बाद मुन्नी को मैंने अपनी बेटी की तरह ही एक दिन ससुराल को रुखसत किया था और आज.........।"

बूढ़े इलाही का गला भर आया। कौशल जो अब तक चुपचाप सारी बातें सुन रहा था बोल बैठा, "मामूली आदमियत तक इनसान भूल जाता है।"

धीरे धीरे वहाँ मोहल्ले के लोग जमा हो गये थे और इलाही उन टूटी हुई ईटों को हर एक को दिखला रहा था । मैंने उस बूढ़े के चेहरे को देखा जहाँ कि जीवन की गहरी और उछली खाइयाँ चमक रही थीं। उसकी आंखों की पलकें भीज गईं थीं। यह उसके जीवन की एक बहुत बड़ी हार थी। तभी मैंने देखा कि सामने वाले मकान का दरवाजा खुला एक युवती बछी की रस्सी को पकड़ कर पशु को बाहर खींच; खंभे से बाँधने में सफल हो गई । अब वह खड़ी हुई और हमारी ओर मुँह करके बोली, "बाबूजी ये झूठ बोल रहे हैं। मैंने ईटें नहीं फेंकी हैं। कल रात को इब्राहिम भैय्या ने हमारे यहाँ ईटें फेंकी थीं। वह अपने दोस्तों के साथ हमारा दरवाजा तोड़ने आया था। उनके पास छुरे थे ।"

यह सब सुना करके वह युवती चुपचाप भीतर चली गई। इलाही लुटा सा खाट पर बैठा हुआ था। पुलिस सुबह ही उसके लड़के इब्राहिम को पकड़ कर ले गई थी । वह उसी भांति सिर झुकाए बैठा रहा। मानो कि जीवन की इस कड़वी घूँट को पचाने में अपने को असमर्थ पा रहा हो। मैंने उसे समझाने की चेष्टा की कि मुन्नी उस पर ईंट नहीं फेंक सकती है, तो उसे विश्वास नहीं हुआ। आखिर उसने यह स्वीकार कर लिया कि उसने अपनी आंखों से नहीं देखा था; पर कान से तो सुना है। तो मैंने उसे समझाया कि कान से सुनी बातें शैतान की भांति फैलती हैं। उनका सही रूप आसानी से नहीं पहचाना जा सकता है । बूढ़ा मेरी बात मान गया। उसकी समझ में आ गया कि गृहयुद्ध की ज्वाला को सुलगाने वाले देशद्रोही हैं और आजादी के रास्ते में रोड़ा लटका रहे हैं।

लेकिन यदि मुन्नी को समझाता कि इब्राहिम उस छुरे को उसके परिवार पर नहीं चला सकता है तो उसे कदापि विश्वास नहीं आवेगा। उसका जन्म बीसवीं सदी का है जब कि मानवता को दो भीषण महायुद्ध ढक चुके हैं। मुन्नी रोज ऐसी घटनाओं को सुनती है; इस युग की घृणा उसके मन में मैली छाप लगा चुकी है। वह गैसों और एटमबम के संहार की

बातें सुनती सुनती है। इब्राहिम का जमाना उन्नीसवीं शताब्दि का था। जब मानव का मानव से पूर्ण स्नेह था। दोनों के बीच विचारों की एक बड़ी खाई पड़ गई थी। फिर भी उस मुन्नी की बातों में एक पीड़ा थी। अन्यथा वह उस तरह सफाई नहीं देती। ईंट से मारने वाला कलंक उसका हृदय नहीं सह सकता है। वह सारा दोष इब्राहिम भैय्या पर रख कर आसानी से छुटकारा पा गई थी। यदि पुलिस और गुंडों के साथ इब्राहिम को पकड़ कर न ले गई होती, तो मनोरमा वह बात इतनी आसानी से न कह देती। लेकिन पुलिस जिस इब्राहिम को पकड़ कर ले गई थी, वह एक प्रेस में कम्पोजिटर था और अपने यूनियन का सबसे अच्छा कार्यकर्ता था; तथा अपने मोहल्ले में भी हिन्दू-मुसलिम एकता का सवाल उसने कई बार रखा था। जिसकी कि राशन की दूकान के मालिक पीर मोहम्मद और कपड़े के मझोले व्यापारी श्रीचरण ने मुखाल्फत की थी। दोनों चोर बाजार के बहुत बड़े शेर थे। इस बार भी शाँति का नारा लगाते हुये पुलिस की लारियों में घूम रहे थे।

हम आगे बढ़े। खिड़कियों से और बच्चे झांक रहे थे। चारों ओर ईंटें पड़ी थीं। उधर मन्दिर का कलश आकाश को छू रहा था। कुछ दूरी पर सामने मसजिद की इमारत चुपचाप स्थिर खड़ी थी। हम गृह युद्ध के उस बड़े मैदान का निरीक्षण कर रहे थे। जहाँ कहार, चपरासी, फेरी वाले आदि निचले तबके के लोग रहते हैं। उनकी झोपड़ियों के खपरैल उस दुपहरी को भी नहीं चमक रहे थे। उनकी दीवारों पर एक अजीब धुन्धलापन छाया हुआ था। गलियां कूड़े-करकट से भरी हुई थीं। जिसकी बदबू चारों ओर फैल रही थी। चारों ओर एक अजीब मुर्दानगी छाई हुई थी। उस समय भी वहां निपट सन्नाटा था। एक अज्ञेय सा भय हमारे शरीर पर फैल गया। हजारों वर्षों में मानव ने जो स्नेह-बन्धन स्थापित किये थे, वे टूटते नजर पड़े।

हम उसी चौड़ी सड़क से लौट रहे थे। वहां मौत का सा सन्नाटा छाया हुआ था। पुलिस की लारी का लाउड स्पीकर गूंज रहा था कि शेरशाह की सड़क पर फिर गृहयुद्ध हुआ है। वहां आग की लपटें सुलग रही थीं। भेड़िये अपनी मांदों से निकल कर हमला कर रहे थे। लेकिन हमारे मन में एक नया बीज जम रहा था। इलाही और उसकी गोद में खेली हुई शीतल की लड़की मुन्नी का स्नेह बन्धन साधारण भावुकता में क्षण भर के लिये भले ही टूट जावे; किन्तु उनके परिवारों का उस मोहल्ले में जो वर्षों पुराना सम्बन्ध है, वह कभी नहीं टूट सकता।

एकाएक कौशल बोला, "जिस क्षणिक भावुकता की बात तुम कहते थे, मैं उसे स्वीकार करता हूँ। नीचे तबके वालों को ये भेड़िये अधिक दिन तक धोखा नहीं दे सकते हैं। वे तो दो मजहबों के मानने पर भी एक सा जीवन व्यतीत करते हैं। एक वर्ग के लोग हैं, जो नीची श्रेणी का माना जाता है और आज भगवान और भाग्य से संघर्ष करता हुआ उसे हराने तुल गया है।

रेशमी डोरियाँ

वह खून से लथपथ बच्चा! उसकी नीली मुंदी आंखें! होंठों पर लगा हुआ खून! चिट्टा गोरा रंग और बदन पर चिड़िया के बच्चे के समान सफ़ेद रोएं !

माया चकित सी उसे देख रही थी। अब उसकी कोहनी का घाव 'धप, धप' करके दुखने लगा। वह बहुत पुराना घाव है। कभी उसकी सौतेली मां ने उसे मारा था। वह भूमि पर गिर पड़ी थी। उस सौतेली मां के प्रेमी ने तो सुझाया था कि ऐसी नागिन को दूध पिला पिला कर पालना भयंकर भूल है। उसे तो जहर पिला कर मार डालना चाहिये था। वह जहर ला देगा। और उस मां ने उसे घूरकर देखा था। उसकी आंखें क्रोध से लाल पड़ गई थीं। फिर वह उसे मारने लगी। मारते मारते जब थक गई, तो उसने उसे जमीन पर पटक दिया था। उसकी कोहनी और सिर से खून बहने लगा था। वह मां तो जोर जोर से रोने लगी थी। कभी वह खिलखिला कर हंस पड़ती थी। उसने अपने बाल नोचने शुरु कर दिए थे, फिर उसे हिस्टीरिया का दौरा पड़ गया। वह जमीन पर सिर पटकने लगी। फिर रोना बंद हो गया। दांत जकड़ गए। सारा शरीर ऐंठने लग गया।

नई मां जब से माया के परिवार में आई, उसने उसे सावधानी से भांपा था। वह वहां बोर्डिंग से गरमियों की छुट्टियां व्यतीत करने के लिये आई थी। पांच साल के बाद उसने उस परिवार में नया जीवन पाया था। वह मां अपूर्व सुन्दरी थी। वह उसे बार बार निहारा करती थी। जब वह पूर्ण शृंगार करके बाहर वाले कमरे में बैठी वीणा बजाती थी, तो एक

और उनकी वह कोठी और उसके चारों ओर फैला हुआ वह बाग उस स्वर लहरी में झूम उठता था।

तब माया मैट्रिक में पढ़ती थी। वह इस मां के बहुत समीप पहुँच रही थी। यह मां खोई खोई रहती थी। वह मुसकराती थी, तो उसमें कोई जीवन नहीं मिलता था। लगता कि किसी भारी पीड़ा को वह अपने हृदय में छिपाए हुए है। उसकी उन बड़ी बड़ी आंखों की काली पुतलियां उसे फीकी सी मिलती थीं। उसका चेहरा उदास लगता था। उसका रंग बादाम की तरह चिट्टा था और सौंदर्य...

पिताजी आए थे। वह उन पर पूर्ण विश्वास करती थी। वे मां से पूछ रहे थे, "संतोष, यह कैसा अविश्वास?"

"यह झूठ है, झूठ है!"

"झूठ?"

"माया ने झूठ कहा है।"

"वह कभी झूठ नहीं बोलती है, संतोष।"

"और मैं?" मां तेज होकर बोली थी।

माया अपने को रोक नहीं सकी थी। उसने दरवाजा धकेला। वह भीतर पहुँची। वे दोनों उसे देख कर अवाक् रह गए। वह बोली, "क्यों, मैं झूठी हूँ, मां? क्या रमाकांत के बारे में सब कोई नहीं जानते हैं?"

वह आगे कुछ नहीं बोल सकी। उसका गला भर आया। वह थक गई थी। चुपचाप पिताजी के पास जाकर सोफ़ा पर बैठ गई।

'रमाकांत'—यह शब्द उस कमरे के कोने कोने से प्रतिध्वनित हो उठा। मां तो चुपचाप सिर नीचा किए हुए बैठी थी। अब उठी और सुलझकर बोली, "माया, तू कितना झूठ बोलना सीख गई है!"

मां की आंखों में आंसू छलछला आए। वह सिसकियां भरने लगी

और भारी स्वर में बोली, "तुम बाप बेटी यह कैसा फ़ैसला करने पर तुल गए हो? मैं कहती हूँ कि यह झूठा कलंक है।"

माया उस कलंक पर कुछ भी नहीं सोच सकी थी। वह मां का कैसा उदास रूप था! सूखे हुए बाल, गीली और सूजी हुई लाल आंखें। वह बिलकुल निर्जीव सी लगती थी। माया बहुत थक गई थी। वह लौट आई। वह अपने को नहीं संभाल पाई। चुपचाप पलंग पर लेट गई।

दाई ने आकर उसे दवा पिलाई। वह आंखें मूँदकर सो जाना चाहती थी, पर नींद नहीं आई। वह मां की एकएक बात को सोचने लगी। फिर रमाकांत की याद आई। वह कितना कुरूप है! चेहरे पर चेचक के दाग़; आबनूस जैसा काला काला रंग; उसे देखकर उबकाई आने लगती थी...

वह रमाकांत बड़ा निर्दयी था। एक दिन वह बाग़ में पेड़ पर चढ़कर चिड़िया के बच्चे निकाल लाया और उनको पालतू बिल्ली को खिला दिया था। माया उससे बहुत डरती थी। उसकी खूनी जैसी भयानक आंखें थीं।

माया सो जाना चाहती थी पर उसे नींद नहीं आई। आंखें जरा सी झपकी थीं कि लगा कोई खिड़की से झांक रहा है। वह रमाकांत ही होगा वह अब भीतर आकर उसके सिरहाने खड़ा हो गया था। वह उसका गला भी घोटने लगा। वह भय से कांप उठी। उसकी नींद उचक गई। अंधेरे में वह कौन उसके सिरहाने खड़ा था? बस घबराकर बोली, "रमाकांत!"

नहीं वह उसकी सौतेली मां आई थी। वह उसके सिरहाने बैठ गई थी और उसका माथा दबा रही थी। फिर चुपके से बोली, "तुमसे क्षमा मांगने के लिए आई हूँ माया। मेरा वह व्यवहार अनुचित था।"

"मां!" वह चकित सी रह गई।

"माया, तेरे पिताजी को मैं प्यार नहीं कर पाती हूँ। यह रमाकांत बचपन से ही मेरे जीवन के साथ है। वह एक अतृप्त छाया के समान मेरे समीप रहा है। मैंने उसे अपने जीवन से हटाने की कभी चेष्टा नहीं की। मैं उसका व्यक्तित्व नहीं मिटा सकी। मैं असमर्थ थी। आज अब मैं उसे नहीं छोड़ सकती हूँ। मैं निर्जीव हूँ। वह मेरे सोए हुए प्राणों को गति प्रदान करता है।"

"क्या, मां ?"

"माया, मैंने आज तक अपना यह अपराध किसी के आगे स्वीकार नहीं किया है। किन्तु मैं तेरे मन पर कोई भद्दी छाप नहीं लगाना चाहती। मैं गीत गाती हूँ, वीणा बजाती हूँ; तो बस रमाकांत को रिझाने के लिए। जब वह दूर रहता है तो मेरा जीवन नीरस हो जाता है। मुझे कुछ भला नहीं लगता। माया, तू ही सोच, इस समय मेरी अवस्था इक्कीस साल की है, जबकि तेरे पिताजी की पचास। मैं बारबार उनसे समझौता करना चाहती हूँ। अपना सर्वस्व निछावर कर देने की चाहना रखकर भी अपने को असमर्थ पाती हूँ..."

"वह रमाकांत! वह बहुत सरल है। कभी कुछ नहीं कहता है। वह मुझे अपने स्वप्नों की रानी कहकर पुकारता है। वह सुंदर नहीं है, पर उसका हृदय विशाल है। उसमें सहृदयता कूट कूट कर भरी हुई है। मैं इस रमाकांत को कभी नहीं भूल सकी हूँ। जब वह पास आता है, तो मेरे नारीत्व को चेतना मिलती है। वह नशा ढालता है, मैं उसे पी-पीकर मतवाली बन जाती हूँ। वह कभी झूठे वादे नहीं करता है। कभी किसी एकाकी दुनिया की बात नहीं सुझाता।"

मां रोने लगी थी। माया को उस अभागिनी पर बड़ी दया आई। दाई कहती थी कि वह किसी नामी वेश्या की लड़की है। पिता तो उसे शादी करके लाए थे। वह रखैल नहीं थी। वह तो परिवार की स्वामिनी

थी। अक्सर संध्या को उसके घर पर नगर के संपन्न परिवारों के लोग इकट्ठे होते थे। मां चतुरता से पार्टियों का प्रबंध किया करती थी। उसने अपनी रुची के अनुसार सब कमरे सजवाए थे। नया फर्नीचर मंगवाया था। वहां राजनितिक, साहित्य, कला, संगीत आदि सभी विषयों पर चर्चा हुआ करती थी। वे पार्टियां देर तक रात को चलती थीं। मां में वह एक नया उत्साह पाती। नगर में उन पार्टियों की चर्चा होती। मां के अपार ज्ञान भंडार पर वह मुग्ध थी। उसका सांस्कृतिक प्रभाव वह आसानी से कब भुला पाती थी। कभी वह सुंदर कैनवस पर प्राकृतिक चित्र बनाती थी। माया को भी वह सिखलाती थी। वह मां के अतिरिक्त एक सफल शिक्षिका और सहेली भी थी। माया उस पर मुग्ध थी। यदि रमाकांत वहां न चला आता, तो......

एक दिन सुबह एक तार आया था। उसे पढ़कर मां का चेहरा खिलसा उठा। वह बोली थी, "रमाकांत आ रहा है।"

माया उसे नहीं जानती थी। वह कुतूहल के साथ मां को झांपती ही रह गई। वह कौन होगा ? मां आगे उसकी चर्चा करना भूल सी गई थी। वह उस नई मां का चेहरा टकटकी लगाकर देख रही थी। वह बहुत भावुक लगती थी। वह चुपके से वीणा उठा लाई और एक मधुर गीत गाने लगी। वह मां के उस व्यवहार पर चकित सी उसे देख रही थी। फिर वह उलझन में पड़ गई। अब वह गीत की एक एक लड़ी के साथ हिलोरें खाने लगी। वह एक गीत कथा थी। लेकिन गीत एकाएक बंद हो गया।

मां उससे लिपटकर बोली थी, "रमाकांत आ रहा है, माया। वह दुनिया भर में घूमता है। जंगलों में सो जाया करता है। वह एक किसान का लड़का है। गुलेल से चिड़ियां मारता है। बंदूक से हिरन, बाघ आदि पशुओं का शिकार करता है। बरसात भर वह आम और जामुन के बागों से बाहर नहीं निकलता। वहीं झूला डाल कर झूला करता है।

बसंत में वह पलाश के बनों में तितलियां पकड़ता है । वह बिलकुल जीवन मुक्त है । उसे अपने प्राणों का कोई मोह नहीं है । वह सांप को वश में कर लेता है । वह भेड़िए से नहीं डरता । वह नदी के किनारे कछुओं और मगरों से खेला करता है । वह निडर है । वह आ रहा है आज । उसे लेने स्टेशन चलेंगे । वह दोपहर को एक बजे की गाड़ी से आवेगा ।"

वह यह कह कर मंत्रमुग्धा सी मंथरगति से बाहर चली गई। माया उस व्यवहार से अवाक् रह गई थी ।

रमाकांत आया था । वह उजड्ड सा युवक, जो व्यवहार कुशल नहीं था । मां को अपनी दासी समझता था । मां उसकी किसी बात पर बहस नहीं करती थी । वह सब कुछ चुपचाप स्वीकार कर लेती थी। वह मां अब माया से बड़ी दूर हटती चली गई । लगता था कि वह भाग्य की किसी बलवान चट्टान से टकराएगी । माया उलझती रही । वे दोनों खिलखिला कर हंसते थे । वह रमाकांत की हंसी में तीखा व्यंग पाती थी । घर के नौकर और नौकरानियां इस नई स्थिति पर दंग थे । आपस में बातें करते थे । मां को किसी की परवा नहीं थी । घर का अनुशासन टूट रहा था । माया ने अनजाने ही पिता से इसकी चर्चा की थी ।

—नई मां तो उसी भांति बैठी हुई थी । बोली, "माया, मैं बावली हो गई हूँ । मुझे अपने प्राणों का कोई मोह नहीं है । मैं शायद अधिक दिन नहीं बचूंगी । मेरे हृदय के कोने-कोने में एक अज्ञात भय फैलता जा रहा है । मैं स्वयं नहीं जानती हूँ कि आखिर मैं इतनी दुःखी क्यों हूँ । मैं मर जाऊ, तो तू रमाकांत को मत भूल जाना बेटी। वह बुरा आदमी नहीं है । उसे क्षमा कर देना । वह बहुत अभागा है । उसका जीवन में अपना कोई नहीं है ।"

वह यह कह कर चली गई थी ।

माया उस सारी स्थिति को कब पचा पाती है। मां ने एक दिन उसे मारा था। वह घाव अभी भरा नहीं है। उसके हृदय पर भी एक चोट लगी है। कमरे में सन्नाटा था। उसके समस्त शरीर की नसों में तेजी से खून बहने लगा। वह कुछ नहीं सोच सकी। वह उठी और रोशनी कर आइने के आगे खड़ी हुई। वहां तो उसका प्रतिबिंब नहीं था। रमाकांत की परछाईं वहां कुटिल हंसी हंस रही थी। उसके मस्तिष्क पर रंग बिरंगे प्राकृतिक चित्र उतरने लगे, पर वह रमाकांत उन सबको मिटाने पर तुला हुआ था।

वह बहुत परेशान हो उठी, अब वह कमरे में इधर उधर टहलने लगी। फिर उसने सुराही में से पानी लेकर पिया। सारा शरीर गरम था। उसने थर्मामीटर लगाया, बुखार बढ़कर १०२ डिग्री हो गया था। उसने घबराहट में बटन दबाया। बाहर टन-टन न करके घंटी बजी। कुछ देर के बाद दाई आई।

फिर उसे नींद नहीं आई। दाई ने कई सुंदर संगीत के रिकार्ड बजाए, पर मन की बेचैनी कहां हटती थी। वह रमाकांत! मां ने क्या कहा था? वह मां क्या कहना चाहती थी? माया की अवस्था पंद्रह साल की थी। वह उन बातों को संवार लेने में अपने को असमर्थ पाने लगी। उसका मन अस्वस्थ था। वह उसी भांति पड़ी रही कि उसकी मां आकर बोली, "उनके आगे अपनी उस विवशता को स्वीकार कर आई हूँ, माया।"

दाई चली गई थी। वह मां की महानता पर सोचने लगी। वह मां कितनी भोली है। और माया के हृदय का घाव भर आया। वह मां को टकटकी लगाकर एक नए दृष्टिकोण के साथ पहचानने का प्रयत्न करने लगी। मां ने यह सब बात कितनी आसानी से सुलझा दी थी। माया उस उदारता पर मुग्ध हो गई। सोचा कि वह मां से

व्यर्थ ही झगड़ा किया करती है। मां के साथ किए गए अपने व्यवहार पर वह पश्चाताप करने लगी।

मां माया के साथ पलंग पर लेट गई। वह बड़ी देर तक उसके कपोलों को चूमती रही। माया ने पहले पहल किसी के गरम होंठों का स्पर्श पाया था। मां ने आज उसके कुमारित्व को अपनी ओर खींचा था। वह एक जंगली मादा की भांति माया को अपने में समेटने लगी। मां को यह क्या हो गया था? वह क्यों उस भावुकता के बांध को तोड़कर जीवन लुटाने पर तुल गई थी? माया को नींद आ रही थी। परिवार की अकेली लड़की होने के कारण वह सदा अकेली सोई थी। आज यह एक नया अनुभव था। उसके हृदय में गुदगुदी हुई। मां उसका माथा दबा रही थी। वह उसे अपने से चिपकाए थी, मानो कि वह छोटी सी बच्ची हो। माया मां के हृदय की धड़कन सुन रही थी। वह फिर भी कुछ नहीं बोली।

एक बार उस अंधकार में उसने मां को पहचान लेने की चेष्टा की। वह मां, जिसने कि निर्दयता से एक दिन उसे मारा था, भावुक होकर इतने समीप आ लगेगी, इसका कोई ज्ञान उसे कब था। माया मां के प्राणों को पहचान कर बहुत व्याकुल सी हो उठी। मां की यह कैसी मनमोहक प्रतिमा थी? उसने अपने दोनों हाथों को मां के गले में डाल लिया कि कहीं वह भाग न जाए।

सुबह माया की नींद टूटी थी। बिल्ली उसके पांयताने लेटी हुई 'गुर्र गुर्र' कर रही थी। अब बिल्ली अंगड़ाई लेकर उठी। उसने अपनी पूंछ ऊपर उठाई और 'म्याऊं, म्याऊं' करती हुई नीचे उतर कर कमरे से बाहर चली गई। ऊपर रोशनदान पर चिड़ियों ने अपना घोंसला बना रखा था। मादा अपने बच्चों को बाहर से चोंच में खाना ला-लाकर खिला रही थी। बच्चे 'चूँ चूँ' करके अपनी चोंच खोलते थे। वह बड़ी देर तक उसको देखती रह गई। कल रात माया को भी मां ने

अपने घोसले में सुलाया था। वह उसके प्यार की भूखी नहीं थी, फिर भी उसे स्वीकार किया। पर वह रमाकांत... ?

वह तो मां और उसके बीच खड़ा हो जाता है। अचेतन सी फिर वह उससे घृणा करने लगती है। रमाकांत की वे खूनी आंखें ! वह उसकी हत्या करने पर उतारू हो गया था। वह उसे कहां भूल पाती है। मां तो उस खूनी से प्रेम करती है, इसीलिए उनकी समीपता एक खाई में परिणित हो जाती है।

फिर मां स्वयं ही दूध और बेदाना अनार लेकर आई थी। उसने तश्तरी और गिलास मेज़ पर रख दिए। उसका मुंह धोकर कपड़े बदलवाए थे। उसके बाल काढ़े थे। वह हाथ की चोट तो अभी तक बहुत दुखती थी। हाथ को वह गले पर पड़ी हुई पट्टी के सहारे लटकाए रहती थी। मां ने उस बंधी हुई पट्टी और लकड़ी की नली को देखा था। माया चुपचाप फल खाने लगी।

मां उसी भांति बैठी थी। अब बोली, "सुना है कि रमाकांत शहर छोड़ कर चला गया है। वह रूठा हुआ था। वह फक्कड़ लड़का अपना अपमान आसानी से नहीं भुला पाता है।"

मां की सजल आंखें देखकर भी वह उसे सांत्वना नहीं दे सकी। मां फिर बोली, "माया, मैंने सदा झूठ बोल करके तेरे पिताजी को ठगा है। आज सच कहकर उनके पुरुष वाले 'शाप' से बच नहीं पाऊंगी। मेरा चरित्र......हमारा संबंध तो एक तरह से टूट ही गया है। इस परिवार में अब मेरी हैसियत एक रखेल की सी हो गई है...।" उसकी आंखों से आंसू टपटप करके टपक पड़े थे।

माया उलझन में पड़ गई। मां कहती रही, "मेरा दावा झूठा निकला, फिर भी वह मेरी भूल नहीं होगी। नारी की जो 'आग' मेरे मन में सुलगती रही, मैं उससे छुटकारा पाना चाहती थी। वह आग आसानी से नहीं दबाई जा सकती है। तेरे पिता का मैंने आदर किया, पर

अपना स्नेह उनको नहीं सौंप सकी हूँ। मेरे प्रेम की तृष्णा को वह नहीं बुझा सके।"

मां अपने से झगड़ती हुई सी लगी। उसका मन छटपटा रहा था। वह उस सब पिछली बात को बिसार देना चाहती थी। माया उसे देखती ही रह गई। फिर न जाने क्या सोचकर अनुरोध कर बैठी, "मां, कोई गीत नहीं सुनाओगी ?"

मां ने नोकरानी से वीणा मंगवाई। माया का हृदय भारी हो रहा था। वहां कोई उसका जीवन नष्ट करने पर तुल गया। उसकी आंखों के आगे धुंध छा गई। वह तकिया छाती से चिपकाकर लेट गई। उसने आंखें मूँद लो थीं। उस चुप्पी को हटाते हुए वीणा की झंकार उसके कान में पड़ी। उसका सारा हृदय झंकरित हो उठा। मां एक वियोग का गीत गा रही थी। उसने आंखे खोल लीं। मां की उंगलियां तेजी से वीणा पर चल रही थीं। वह तन्मय हो गा रही थी। उसकी मुंदी हुई आँखों से आंसू की धारा बह रही थी। वह अवाक् हो सब कुछ देखती ही रह गई। वह कुछ समझ न सकी। वह गीत हृदय में भारी पीड़ा भर रहा था। वह घबरा उठी। अब कुछ संभली। भयभीत होकर बोली, "मां गीत बंद करदो।"

वीणा के तार टूट गए थे। मां ने उन्माद से भरी हुई अपनी आंखें पूरी खोलीं, फिर उसके दांत जकड़ गए। उसका सिर लुढ़क गया। वह बेहोश हो गई थी। उसकी सांस तेज चल रही थी। वीणा के टूटे हुए तार; वह वियोग का गीत ! माया कुछ ठीक नहीं समझ सकी थी।

माया उस मरे हुए बच्चे को देख रही थी। बच्चे ने एक किलकारी मारी थी। माया ने चुपके से उसका गला घोंट दिया था। बच्चे के गले पर अभी तक उंगलियों के जमे हुए खून के नीले निशान चमक रहे थे। वह उसका चेहरा देखकर बहुत भयभीत हुई थी। वह मुसकरासा रहा

था। वह नाखून से उसका मुंह छीलने लगी। चारों ओर छोटे छोटे घाव बन गए थे। उनमें खून जम कर काला पड़ रहा था। अब उसने तौलिए से अपने नाखून पोंछ लिए। अब वह हारी और थकी सी चुपचाप बैठ गई। क्या यह उसकी अपनी विजय थी ? वह बच्चे की पहली किलकारी सुनकर थिरक उठी थी ! लेकिन उसके बाद तो उसने पाया था कि......

वह केहनी की चोट फिर फिर 'धप, धप' करके दुखने लगी। वह अपनी मां की विवशता को पहचान गई थी। आगे दोनों ने आपस में सहेलीवाला भाव स्वीकार कर लिया। मां केवल 'संतोष' नाम भर में सीमित रह गई थी। वह अपनी स्थिति का स्पष्टीकरण करती थी, माया उसे सुलझाने पर तुल जाती। वह फिर भी सब कुछ समझ लेने में अपने को असमर्थ सी पाती थी। मां ने फिर कभी वीणा नहीं बजाई। कभी कोई गीत नहीं गाया। उसका आचरण एक विधवा जैसा हो गया था। पिताजी भी उसकी ओर से उदास हो गए थे। वह मां को शायद कभी क्षमा नहीं कर सके थे।

स्वस्थ होकर माया कालिज चली गई थी। वह अपनी किताबों और सहेलियों की नई दुनिया के बीच खो सी गई। लेकिन रमाकांत की याद आसानी से नहीं भुलाई जा सकी। उसका मन भी किसी से प्रेम करने के लिए तड़प रहा था, पर वह कुछ निश्चित नहीं कर पाती थी। सहेलियाँ उसे प्रेम कहानियां सुनातीं, जिनमें केवल नशा होता था, प्राण और गति नहीं। वह नशे से अधिक गति और प्राणों की भूखी थी। वह पुरुष के उस नशे की बात सुन कर घृणा से मुंह बिचका लेती थी। चुपचाप अपनी किताबें पढ़ती थी। सबसे दूर रहती थी। सिनेमा, थियेटर आदि की दुनिया में रहकर अपने को भुला देने पर तुल गई। वह बहुत कम बातें करती थी। किसी ने कभी उसे खिलखिला हंसते हुए नहीं पाया। किसी से उसकी खास घनिष्टता नहीं बढ़ी।

वह सबसे अलग रहती थी। मानो कि किसी के प्रति उसका खास आकर्षण नहीं है।

एक दिन दाई का पत्र आया था कि हिस्टीरिया के दौरे के बीच मां ने आत्म-हत्या करली। वह यह लिखना भी नहीं भूली थी कि मरने के कुछ देर पहले रमाकांत आया था। रमाकांत को देखकर उसने आश्चर्य प्रकट किया था। फिर आंखें अंतिम बार मुंद गई थीं। रमाकांत ने सुंदर अरथी बनवा कर उसे चिता तक पहुँचाया और अग्नि संस्कार किया था। पिताजी साथ नहीं गए थे।

मां की मौत की बात सुन कर उसे बहुत दुःख हुआ। वह उसे खूब प्यार करने लगी थी। वह मां बहुत दुःखी थी। माया ने सोचा था कि अबके छुट्टियों में जाकर वह उसका दुःख हर लेगी। वह उससे कहेगी कि वह दोषी नहीं है। उसका कोई अपराध थोड़े ही है। वह दोष तो समाज और पुरुष का है, जिसने चुपके से नारी को बेड़ियाँ पहनाई हैं।

उसे मां की वे पार्टियां याद आईं, जिनका कि वह नेतृत्व किया करती थी। वहां नगर के सब बुद्धिवादी एकत्र हुआ करते थे। माया को उनकी बातें कभी समझ में नहीं आईं। वे अक्षर चबा-चबा कर राजनीति, अर्थशास्त्र, इतिहास, संगीत न जाने किन किन विषयों पर बातें किया करते थे। मां तो इस दुनिया को सूनी करके चली गई थी। अब माया के लिए कोई आकर्षण नहीं रह गया था।

माया कई दिनों तक उलझी रही। उसकी सहेलियां बारबार समझाती थीं कि वह अपना जीवन व्यर्थ नष्ट कर रही है। उसकी उम्र व्यर्थ मन को छोटा करने की नहीं है। वह फिर भी सुलझ नहीं पाई। वह मां का एक फोटो साथ में लाई थी। उससे कई मूक प्रश्न बूझा करती थी। फिर गद्गद हो रो पड़ती थी। जानती थी कि मां वहां चली गई थी, जिसका भेद कोई नहीं जानता है। मां को मौत के काले परदे ने ढक लिया था। वह तो व्यर्थ एक मृगतृष्णा के पीछे दौड़ रही थी।

और एक दिन रमाकांत आया। वह कालिज से लौटकर अपने कमरे में बैठी हुई नाश्ता कर रही थी। तभी नौकरानी ने कहा था कि कोई उससे मिलने आया है। एक परचा दिया, जिस पर बेडौल भद्दे अक्षरों में लिखा हुआ था 'रमाकांत'। आज उसे रमाकांत के नाम को पढ़ कर भय नहीं हुआ। मां उसे निर्बल बना कर छोड़ गई थी। उसका सारा बल छीन कर ले गई थी। रमाकांत का आज अब कोई खास व्यक्तित्व नहीं रह गया था। अब उसका उनसे संबंध सूत्र टूट चुका था।

वह उठी। उसने कपड़े बदले और निकल कर आगे बढ़ गई। वहां पहुँच कर पाया कि रमाकांत सिर नीचा किए हुये चुपचाप बैंच पर बैठा हुआ न जाने क्या सोच रहा था। उसकी आहट से भी उसे चेतना नहीं आई। वह उसी भांति कुछ देर खड़ी रही। कई मिनट बीत गए। वह उसी भांति बैठा हुआ था।

अब माया साहस बटोर कर बोली, "आपने बुलाया है?"

"कौन, माया?" रमाकांत ने आंखें ऊपर उठाई। वे बहुत पैनी लगीं, मानो कोई भारी रहस्य छिपाए हुए थीं।

माया चुपचाप पास वाली कुरसी पर बैठ गई। रमाकांत धीमे स्वर में बोला, "मैं शायद नहीं आता, पर संतोष ने लिखा था कि उसकी मौत के बाद मैं आपसे मिलता रहूँ। संतोष जानती थी कि वह अधिक दिन जीवित नहीं रहेगी। इधर उसकी चिट्ठियों से गहरी निराशा टपकती थी। वह लिखती थी कि वह केवल आपके कारण ही जी रही है। अन्यथा वह तो अपने जीवन से ऊब गई है। वह गहरी निराशा लेकर मरी। वह मरना नहीं चाहती थी। शायद उस मौत ने उस को बड़ी पीड़ा पहुँचाई। अन्यथा उसका चेहरा कुरूप नहीं पड़ जाता।"

माया सुन रही थी। वह कह रहा था, "आत्महत्या करने की भावना न जाने कब से वह अपने में संवारे रही। वह मुझे भी धमकी देती थी

कि वह चुपके से किसी दिन मर जायगी, कोई जान तक नहीं सकेगा। उसके अंतिम पत्र में कुछ ऐसी भावना व्यक्त मिली कि मैं उसके पास जल्दी पहुँच जाना चाहता था। मेरा अनुमान सही निकला। वह आत्म-हत्या की धमकी थी। आपके पिताजी ने ठीक उपचार किया होता, तो शायद वह बच जाती। डाक्टर तक नहीं बुलावाया..."

वह फिर चुप हो गया। उस उज्जड़, पत्थर और निडर रमाकांत की आंखें गीली हो गई थीं। वह उसे आज भी ठीक सा कब पहचान पा रही थी। क्या वह व्यक्ति बहुत सहृदय होगा? वह कुछ नहीं समझ सकी।

अब रमाकांत ने जेब पर से एक पारसल निकाला और उसे देते हुए बोला, "संतोष ने कहा था कि उसकी मौत के बाद यह मैं आपको सौंप दूँ।"

रमाकांत यह कहकर चुपचाप उठा और चला गया। जब तक कि माया संभले, वह फाटक से बाहर हो गया। सामने लाउन में हरी दूब उगी थी और चारों ओर गंधहीन विलायती फूल खिले हुए थे। वह अवाक् उसे देखती रह गई। जब रमाकांत आंखों से ओझल हो गया, तो वह उठी। वह उससे कई बातें पूछ लेना चाहती थी। संतोष क्यों आत्महत्या करने पर उतारू हुई? इस तरह अपने को नष्ट कर देने की भावना अनुचित होती है। जबकि वह जानता था कि वह आत्महत्या कर लेगी, तो उसने उसे समझाया क्यों नहीं? वह चाहता तो शायद... क्या वह रमाकांत उसे बहुत प्यार करता होगा? वह उसके हृदय में एक नई चेतना सुलगा गया था। अब वह न जाने कहाँ चला गया है।

वह अपने कमरे में चुपचाप लौट आई। अब उसने वह पारसल मेज पर रख दिया। उसे खोलने का कोई उत्साह नहीं रह गया था। वह सोचती रही कि अब छुट्टियों में जाकर वह सब बातों की छानबीन करेगी।

वह पिताजी से भी इस संबंध में बातें करना चाहती थी। लेकिन मां तो कहती थी कि यह रमाकांत एक तृष्णा है। वह तृष्णा...

रमाकांत आकर क्या माया को तृष्णा का एक नया पाठ नहीं पढ़ा गया था? आधी रात को उसने वह पारसल खोला था। उसमें हीरे की अंगूठी, नीलम के बुंदे और एक सुंदर गठन का हार था। मां ने यह कैसा उपहार भेजा था? वह उलझती चली गई। रात भर रमाकांत बारबार उसकी आंखों के आगे खड़ा सा हो जाता था। वह जितना ही अपने मन से दूर हटाना चाहती थी, उतना ही वह उसके हृदय में पसरता हुआ-सा लगता था।

वह उद्विग्न हो उठी। उसने एक बार वे सब चीजें पहनीं और आइने के आगे खड़ी हुई। उसे लगा कि कोई उसे पुकार रहा है। वह रमाकांत का स्वर था। स्वर कानों में अनजाने प्रतिध्वनित होता रहा। वह डरकर अपनी एक सहेली के कमरे में चली गई और वहीं सो गई थी।

तीन चार महीने बीत जाने पर, सुबह को एक दिन वह फिर आया था। वह उसे एक बड़ा बन्द लिफ़ाफ़ा दे गया। कुछ नहीं बोला था। माया ने खोल कर देखा था कि लिफ़ाफ़े पर संतोष के प्रेम पत्र थे। उनसे कोई तेज मंहक आ रही थी। वह महक उसके मस्तिष्क पर भीनी—भीनी सी फैल गई। एक-एक पत्र उसने पढ़ा। उनमें एक नशा था। वह स्वयं उनको पढ़कर बहुत भावुक बन गई। उनकी एक-एक पंक्ति हृदय पर अपना गहरा प्रभाव डालती थी।

कई रात वह सो नहीं सकी। वह उन प्रेमियों की दुनिया में खो गई। उतनी मादकता संतोष के जीवन में होगी, इसका उसे अनुमान नहीं था। वह तो सरलता से बराबर अपने को निछावर कर देती थी।

रमाकांत क्यों उसे वे सब पत्र सौंप गया था? संतोष ने सुन्दर छोटे-छोटे अक्षरों में अपने हृदय के उद्गार समर्पित किए थे। वह रमाकांत

की कुरूपता की बात बिसराने लगी। लगा कि वह बड़ा पारखी है, अन्यथा संतोष के मन में वह हृदमंथन क्यों होता? संतोष ने तो माया के मन में भी निर्मल प्रेम की धारा बहा दी थी। आज तक माया को इतनी जानकारी कब थी। अतः वह अपनी किसी अतृप्त तृष्णा के लिए उन पत्रों को पढ़ती, पर प्यास नहीं बुझती थी।

एक पत्र में लिखा था संतोष ने, 'रमाकांत, मैं चाहती हूँ तेरे बच्चे की मां बनूं। यह मेरे जीवन का सबसे बड़ा सौभाग्य होगा। तूने क्या कभी यह जाना है? मैं यही सोचती रहती हूँ और तू तो दूर-दूर भाग जाता है। एक पुत्र पाकर मैं तुझे छुटकारा दे दूंगी। फिर तुझे मुक्ति मिल जावेगी। क्या तू मेरी इस विनती को सुनेगा? इसके लिये मैं नारी के सारे बन्धनों को तोड़ सकती हूँ...'

—रमाकांत फिर नहीं आया। चार-पांच साल कट गए। वह उसे भूल सी गई थी। माया अब पिता के घर से पति के परिवार में चली आई। वे पिछली बचपन की बातें, जवानी की यादगारें, अतीत की दूरी में खो गईं। जैसे कि सब कुछ झूठ सा हो।

पूस की रात थी, वह चुपचाप सोई हुई थी। एकाएक खिड़की खुलने का खटका हुआ। वह भय से कांप उठी। आंखें खोल कर आश्चर्य से देखा कि रमाकांत था। उसकी दाढ़ी और सिर के बाल बढ़े हुए थे। चेहरा अजीब सा लग रहा था। उसकी वह भयानक सी रूपरेखा! वह भय से कांप उठी और फिर संभल कर पलंग पर बैठ गई। बाहर खिड़की से पीली चांदनी झांक रही थी। वह चुपचाप आगे बढ़ा। उसके पांवों पर से खून निकल रहा था। शायद कुत्तों से उसे संघर्ष करना पड़ा होगा।

वह अब बोला, "संतोष के पत्र लेने आया हूँ।"

माया की कोहनी का घाव एक बार फिर 'धप-धप' करके दुखने

लगा था। रमाकांत कहता ही रहा, "एक डकैती के मामले में चार साल की जेल हुई थी। आज शाम को छूटा हूँ।"

वह अचरज में रह गई। वह उसे देख रही थी। उस रमाकांत को, जो जेल से छूट कर आया था। वह आधी रात को खिड़की खोल कर कमरे में घुसा था। वह संतोष के प्रेम-पत्रों को लेने आया था।

वह कहता रहा, "माया, बिना प्रेम के जीवन नीरस सा लगता है। मैं उन पत्रों को एक बार फिर पढ़ना चाहता हूँ, ताकि नया जीवन शुरू कर सकूँ। मैं बड़ा अभागा हूँ। अभी मेरी उम्र उन्तीस साल की है! संतोष ने अपने को उस भाँति नष्ट करके मेरा जीवन भी मिटा डालने की चेष्टा की। लेकिन मुझे जीवित रहना है।"

"इस आधी रात को......!" माया आगे कुछ नहीं बोल सकी।

"आधी रात! तुमसे मिलना जरूरी था, माया; और एक कुत्ते ने तो रास्ता रोक सा लिया था। उसे मार कर आया हूँ यहाँ। अच्छा, तो अब मैं जाऊँ!"

माया ने कहा था कि वह पत्र ढूंढ़ कर निकालेगी। फिर कभी वह लेजा सकता है। और रमाकांत चुपचाप चला गया। वह खिड़की से नीचे उतरा। माया दौड़ी-दौड़ी खिड़की के पास पहुँची थी। वह नीचे उतर रहा था। उसके देखते-देखते वह उस तिमंजिले पर बने हुए कमरे से उतर कर नीचे चला गया था। वह निडर व्यक्ति था, जिसे मौत का कोई भय नहीं था। माया चुपचाप उस चांद की रोशनी में खड़ी रही। खिड़की से बाहर देखा—बाग़ में खिले हुए फूल उभरे-उभरे लगते थे। प्रकृति के उस सौंदर्य पर वह मुग्ध हो गई थी।

अगली सुबह को उसने वे पत्र ढूंढ़ निकाले। उसी में संतोष का फोटो भी मिला। बड़ी देर तक वह उसे निहारती रही। फिर एक बार उसने वे सब पत्र पढ़े। वह संतोष बहुत सुन्दर और उदार थी। उसका वह

नशा और रमाकांत ! संतोष ने लिखा था कि वह उसके हृदय के सौंदर्य और साहस पर मुग्ध है। लेकिन उसने तो आत्महत्या की थी।

कुछ दिन बाद रमाकांत आकर पत्र ले गया था। आगे फिर वह बार-बार आता था। वह उसे संतोष की बातें सुनाता था। वह माया के हृदय में एक नया जीवन सा उड़ेलने लगा। अकसर वह संतोष की चर्चा करते करते गद्गद होकर कहता था, "माया, मैं सच ही बहुत अभागा हूँ। अन्यथा संतोष मुझे इस भाँति न छोड़ जाती। अब इस दुनिया में मेरा कोई नहीं है।"

माया सुनती थी और सुन कर चुप रहती थी। रमाकांत और बहुत सी बातें सुनाया करता था। माया अपने को सपनों के एक नए संसार में पाने लगी। वह कुतूहल से उसकी सारी बातें सुनती थी। जब वह चला जाता था, तो उन पर सोचती थी। वह मजाक में कहता था, "क्या तू भी प्रेम पत्र लिखना जानती है, माया ?"

रमाकांत सदा खिलखिला कर हंसता था। वह हंसी सदा माया के हृदय में गूँज उठती थी। वह घबराकर पति के नजदीक पहुँचकर वहीं छिप कर रह जाने की सोचती। लेकिन वहाँ भी वह जाल फैला कर उसे उलझा देता था। लगता था कि वह भावुकता की महीन डोरियों के बीच फंस गई है। रमाकांत ने उसका सारा जीवन निचोड़ कर उसके प्राण भी उससे छीन लिये हैं। वह अपने को निर्जीव सा पाने लगी थी। पति वहां नये प्राण डालने में असफल लगे ! कभी तो वह बहुत व्याकुल हो जाती थी। फिर एक ज्ञेय सा भय पाकर वह परेशान हो उठती थी।

वह रमाकांत से दूर रहना चाहती थी। वह उससे बहुत कम बोलती थी। रमाकांत अब उसे 'छोटी गुड़िया' कह कर पुकारने लगा था। कभी वह सोचती थी कि अपने पति से मन की सारी बातें खोलकर कह देगी। पर साहस ही नहीं होता था। वे क्या सोचेंगे ? संतोष की बात याद हो

आती थी कि पति का अविश्वास पाकर नारी का जीवन व्यर्थ हो जाता है। माया अभी मरना नहीं चाहती थी। वह तो जीवित रहकर इस दुनिया में चांद-सितारों का खेल देखना चाहती थी। उसे दुनिया बहुत प्यारी लगती थी।

दीवाली के दिन थे। बाहर लड़के खेल रहे थे। वह आतशबाजी देख रही थी। वे फुलझड़ियां, वह अनार का पेड़ और वह बिच्छू! वह बहुत खुश थी। उसका मन उमड़ रहा था। तभी नौकर आकर बोला, "मांजी, आपको कोई बुला रहा है।"

"कौन?"

"वे बाग में अमरूद के पेड़ के नीचे खड़े हैं।"

माया जानती थी कि कौन आया है। वह कांप उठी। फिर भी चुपचाप आगे बढ़ी। पास पहुँची थी कि रमाकांत बोला, "छोटी गुड़िया, क्या देख रही थी? तुझे एक कष्ट देने के लिये आया हूँ। वे संतोष वाले गहने कहां होंगे?"

"घर पर।"

"मैं जुए में हार गया हूँ। कुछ रुपया पास हो, तो दे दो। नहीं तो वह हार ले आना। लक्ष्मी सदा रूठी नहीं रहती। रमाकांत आज तक कौड़ियाँ खेलने में कभी नहीं हारा है।"

वह घर के भीतर गई और हार लाकर उसे दे दिया था। वह शराब के नशे में चूर था। उस गंध से उसका सारा शरीर सिहर उठा। उबकाई आने लगी। वह हार को तोल सा रहा था।

फिर बोला, "इसका अफसोस न करना। रुपया तो मर्द के हाथ का मैल होता है। जल्दी ही छुड़ा कर ले आऊंगा।"

वह लौट आई। रमाकांत बाग के घने अंधकार के बीच खो गया था। माया चारों ओर बिखरी हुई रोशनी को देखती रह गई। रमाकांत

के बारे में फिर सोचा । वह उससे घृणा करना चाहती थी, पर मन को यह स्वीकार नहीं हुआ। वह क्या है, जैसे वह फिर समझ लेना चाहती थी। आज तक कब समझ सकी है !

आगे रमाकांत जीवन में बहुत समीप आकर व्यापक होने लगा। माया अपने को नहीं संभाल सकी थी । वह उसके प्रभाव से नहीं बच सकी।

और एक सुबह को समाचार-पत्र में माया ने पढ़ा था कि रमाकांत ने एक वेश्या का खून किया है । फिर कुछ महीने बाद किसी ने सुनाया था कि उसे फांसी लग गई।

उन रेशम की डोरियों का तार जैसे कि टूट गया था। माया आज कुछ समझ नहीं पाती है। उसने अपने बच्चे की हत्या कर डाली है। वह उसके चेहरे पर रमाकान्त का अक्स पाकर डर गई थी। क्या वह केवल एक भ्रम था ?

परम्परा

जोधासिंह ने शराब से भरी हुई कन्टरी एक ओर रख दी और पहाड़ी की तरफ फैली चौड़ी-सी चट्टान पर बैठकर सुस्ताने लगा। उस सीधी चढ़ाई पर चढ़ते-चढ़ते उसका दम फूलने लग गया था। उस सड़क पर छोटे-छोटे तिकोने पत्थर के टुकड़े पड़े हुए थे, जो कि यदाकदा पांव के तलों पर चुभ जाते थे। पिछले दिनों उसने एक सूबेदार साहब से पलटनी बूट खरीदा था। उसे जरूरी मरम्मत के लिये वह कस्बे के मोची को दे आया है। मोची ने तो उसे कई सुन्दर सलीमशाही जूतियां दिखलायी थीं। उसने सोचा था कि लट्ठे का चौड़ा पायजामा बनवाने के बाद वह एक जूती अवश्य खरीद लेगा। उसकी बड़ी इच्छा तो यह भी है कि पापलिन की मुड़े कफवाली एक कमीज बनवाले। उसने हिसाब लगाकर पाया कि दो महीने के बाद उसके पास इतना फालतू पैसा बच जायगा। फिर वह तो इस साल आम और जामुन के एक छोटे बाग का ठेका लेने की बात सोच रहा है। शुरू में वह बयाना भट्टी के मालिक कलाल से सूद पर लेगा। ऐसी स्थिति में खर्चा जरूर बढ़ जायगा। वैसे दशहरे के बाद दिवाली पर जुआ खेलने के लिये काफी पैसा चाहिये। ठेके से वह जो कुछ कमायेगा उसे बहुत सोच समझ कर खर्च करेगा।

अब उसका नशा उतर गया था। उसने बड़ी सुबह भट्टी पर कुछ पी थी। वहां के गुमास्ते ने कहा था कि वह खास तौर पर मुनक्के और पीले फूलों वाली शराब ठेकेदार के लिये उतारी गयी है। कोदो और शीरे की दारू में भला ऐसा मजा कहां है? एक बोतल खोलकर, उसमें उसने

अपनी उंगली भिगोई। फिर उस उँगली को चिराग के पास ले गया तो बस धप्प से 'लौ' पकड़ बैठी। उसने सुझाया था कि बाहर की विलायती शराब में भी यह मजा नहीं है। इसका मुकाबला किसी से नहीं किया जा सकता है। मशीन से बनायी गयी शराब, भट्टी की ढली हुई शराब से कदापि भली नहीं हो सकती है। उनमें ये गुण भला कहाँ हैं ? उसने एक कुल्हड़ उसे भी पिलाया था। सच ही उसने ऐसी बढ़िया शराब पहले कभी नहीं पी थी। एक सिपाही ने एक बार 'रम' पिलाई थी, पर उससे तो गला जलने लगा था। उसने इसी लिये तय कर लिया था कि कुछ रुपये जमा होते ही वह किसी खच्चर वाले से देश से सस्ते मुनक्कों का बोरा मगवा कर, तीन-चार बोतलें ढलवा कर रख लेगा। इससे सेहत भी जरूर बनेगी।

अब उसने अपने नेकर की जेब से माचिस और चर्खामार बीड़ी का बंडल निकाला और एक बीड़ी सुलगा कर धुँआ उगलने लगा। सड़क पर खच्चर नीचे की ओर 'लाद' ले जा रहे थे। बंजारा उनके पीछे अपने सफेद साफे को बांधे हुए कुछ गुनगुनाता हुआ जा रहा था! उसने एक को टोक कर पूछा, 'परजापत क्या माल है?'

'भेलियां।'

'किस आढ़त का माल है ?'

'श्यामलाल की।'

वे खच्चर वाले चले गये, जानवरों के गलों की घंटिया टन, टन, टन, टन, करके नीचे की ओर बज रही थीं। वे कस्बे की ओर जा रहे थे। एक बंजारा बांस का हुक्का गुड़गुड़ाता हुआ तेजी से उधर बढ़ गया।

जोधासिंह ने बीड़ी की आखिरी कश खींची और उसे दूर फेंक दिया। वह भी तो श्यामलाल की आढ़त में अकसर बैठा करता है। आढ़त का मुनीम गांजा पीने का शौकीन है और कई बार जोधासिंह आबकारी की दूकान से चवन्नी भर सुलफा उसके लिये ला चुका है।

वह चिलम पर आग बनाना भी भली भांति जानता है। गहरा दम न सही हल्का तो वह आसानी से लगा ही लेता है, किन्तु अभी एक तमन्ना बाकी है कि गहरी दम लगाकर वह खूब धुआं ऊपर उठायेगा और उसमें आसानी से औरों की भांति ज्वाला प्रज्वलित कर देगा। अभी वह इस काम में असफल रहता है।

मुनीमजी उसे अपनी जवानी की कहानियाँ सुनाया करते हैं कि वे तब अठन्नी भर सुलफा अकेले ही पी जाया करते थे। अब तो जमाना ही बदल गया है। अन्यथा पन्ना हलवाई के यहां से वे नित्य सेर भर रबड़ी खाया करते थे। बातें करते-करते कभी तो वे बीच में तीन चार मिनट तक खांसते ही रह जाते थे। तथा उनके बोलने में गले से एक अजीब घरघराहट प्रतिध्वनित होती थी। वे भगोया वस्त्र पहनते थे और इधर पांच साल से भोग-सन्यास लेकर उसी दुकान पर पड़े रहते हैं। सन्ध्या को नित्य ही वहां कस्बे की रसिक मण्डली जुटती और सब शास्त्रों के ज्ञाता अपने-अपने ज्ञान-भण्डार का परिचय बिना किसी खास नियंत्रण के दिया करते थे। दारू, सुलफा, भंग, कुचला आदि का चलन साधारण सी बात थी। साथ ही साथ शहर की कुछ युवतियों का परिचय भी वहां आसानी से प्राप्त हो जाता है।

वे जोधासिंह को बार-बार सुझाते थे कि वह आढ़त की बैठी-बैठाई नौकरी क्यों नहीं कर लेता है। आकाशवृत्ति से तो बंधी हुई नौकरी भली होती है। वह उनका खाना बनाकर तनखा के सोलह रुपये माहवारी आसानी से बचा लेगा। पल्लेदारों से भी उसकी कुछ आमदनी तोलवाने में हो जावेगी। वे उसे दुनियादारी के कई सबक पढ़ाया करते थे कि बंधी नौकरी में चार पैसे कम ही मिल जांय तो भी उचित है।

कस्बे की एक अधेड़ वेश्या यदा-कदा उनके यहां आया करती थी। वे उससे अश्लील मजाक कर लेते हैं। वह उनसे इनाम किताब मांगकर ले जाया करती है। लोगों का कहना है कि वह उनकी जवानी की प्रेमिका

है। उसने हाल ही में एक मकान बनवाया है। जिस पर कि किसी पड़ोसी ने उज्र करके अदालत में दरख्वास्त दी है कि भले लोगों के मुहल्ले में उसका रहना हितकर नहीं है। वह उनसे कानूनी सलाह मांगा करती है। कभी-कभी ताव में आकर कहती है कि वह तो खुले घाट रोजगार करती है, पर वें परदे में रहने वाली शरीफ़-जादियां अपनी बातें तो कहें। वह उनकी पूरी-पूरी जानकारी रखती है। चुप इसलिये रहती है कि कौन बेकार की झंझट मोल ले। अन्यथा उसके पास हर एक का कच्चा चिठ्ठा मौजूद है। इतना ही नहीं, वह तो छाती फुलाकर कहती है कि सारी उम्र उसने पटवारी; कानूनगो, तहसीलदार और किस-किस की ताबेदारी नहीं की है। शहर में कौन शरीफ़जादा ऐसा है, जिसने कि कभी-न-कभी उसके दरवाजे का कुन्डा न खटखटाया हो। वह खुद तो किसी की देहली पर खड़ी नहीं हुई। आज भी वह किसी की खुशामद करने नहीं जावेगी। हाईकोर्ट तक मुकदमा लड़ेगी।

मुनीमजी उसकी बातें सुनकर हंस पड़ते। वह औरत इस उम्र में भी देखने सुनने में खास बुरी नहीं लगती है। मुनीमजी उसकी पूरी मदद करने का आश्वासन देते थे। उनका खयाल था कि वह मुकदमा जीत जायगी। जोधासिंह को उन सब बातों से खास दिलचस्पी नहीं है। वह तो अधिकतर अपने पर ही सोचता है। उसके गाँव में एक लोहार की छोकरी है। जो कि बहुत सुन्दर है। वह उसकी प्रेमिका है। वह अच्छे वंश का ठाकुर हुआ तो क्या बात है। वह छोकरी तो तेरह चौदह साल की है, पर उसकी चाल-ढाल, नाज-नखरे सब से बढ़ चढ़ कर हैं। वह उस पर फ़िदा है। पिछले एक मेले में वह उसके साथ चरखी पर चढ़ी थी और वहाँ उसने उसे तेल की जलेबियाँ खिलाई थीं।

अब तो तीन चार सिपाही आकर उसके पास बैठ गये। एक बोला, "छोकरा, यहाँ कहीं पानी भी पीने को मिलेगा।"

"हवलदार साहब, आगे दो मील पर पानी का झरना है।" कहकर वह उनकी ओर देखने लगा।

कभी उसकी इच्छा लाम पर जाने की हुई थी। पर भरती के दफ्तर वाले साहब ने बताया था कि वह कुछ दिन उनके घर पर नौकरी करे, तो वे आठ दस महीने के बाद कोशिश कर देंगे। और लोगों ने सुझाया था कि कप्तान साहब बिना पेट पूजा के भरती नहीं करते हैं। शुद्ध पहाड़ी घी या शहद की हण्डिया उनकी घरवाली को बहुत पसन्द हैं। जोधासिंह वह सब सुनकर चुप रहा था। घरेलू नौकरी करना उसके आत्मसम्मान के लिये एक बहुत बड़ा समझौता था। वह उन गुलामी की जंजीरों को तोड़ कर ही तो आजाद हुआ है, फिर तो सिपाही बनने की वह हवस ठंडी पड़ गयी थी।

"क्यों हवलदार साहब, आजकल सेकिण्ड-थर्ड कहाँ है?"

"अफ्रीका गयी थी। आगे मालूम नहीं कि क्या हुआ। आजकल फौजी बातें कोई नहीं जानता है। छोकरे इस कण्टरी पर क्या है? बड़ी तेज महक चल रही है?" वे मंद मुस्कराये।

उन सिपाहियों के मुंह पर से दारू की महक चल रही थी। आपस में कुछ इशारा बाजी करने के बाद एक ने कहा, "क्यों यह बिक्री के लिये है?"

"नहीं साहब, ऊपर तहसीलदार साहब ने अपने मेहमानों के लिये मंगवाई है।"

तो एक हँसकर बोला, "मौज तो ये सिवीलियन उड़ाते हैं। कोई काम तो करने को है नहीं। एक हम हैं कि तीन साल में पन्द्रह दिन छुट्टी पर मुश्किल से आ सके हैं।"

"मोटर मिल जायगी छोकरे, आठ बज रहा है।"

"दूसरी बारह बजे वाली मिल जायगी।"

बस वे तीनों उठे और अपने टोप ठीक कर, उसका फीता गरदन पर डाला और बेत हिलाते हुए सड़क पर उतर कर चलने लगे। अब तो जोधासिंह भी उठा और आगे बढ़ गया। वे सिपाही भद्दे-भद्दे गीत गाते हुए चले जा रहे थे। वह चुपचाप उनके पीछे चल रहा था। एक ने पीछे मुड़कर उसकी ओर देख कर कहा, "छोकरे सिगरेट पीयेगा।"

एक सिगरेट निकाल कर उसकी ओर फेंक दी। वह उसे उठा कर पीने लगा। उन सिपाहियों को देख कर उसे खास खुशी नहीं हुई। उसे तो डर लग रहा था कि कहीं ये उसकी कराटरी छीन कर सब पी-पा न जायें। पिछले दिनों ऐसे ही सात-आठ सिपाह झरने के पास मिले थे! उन लोगों ने उससे कराटरी छीन ली थी। फिर राशन वाले टिन के डिब्बे खोल कर खाना निकाला था और सब पी कर, एक ने कराटरी जोर से बूट से ठोकर मार कर नीचे की ओर फेंक दी थी। बड़ी खुशामद करने व रोने-धोने पर उसे पाँच रुपये दिये थे। लेकिन अब वह समझदारी के साथ चटपट किसी बड़े अफसर का नाम लेकर आसानी से छुटकारा पा जाता है।

वह सिपाहियों के साथ वैसे कई बार फोकट में पी चुका है। पर उसे वे खास सभ्य से नहीं लगते हैं। इसीलिये आज उस जीवन से कोई खास स्पर्धा नहीं रह गयी है। उसे आज के अपने जीवन के प्रति लोभ है। अब वह सोचने लगा कि आज किस-किस ग्राहक के पास जाना होगा। ऊपर बाजार का होटल वाला बड़ा काइयां है। वह उसका ठीक आदर-सत्कार नहीं करता है। बासी रोटियाँ खिलाता है और शोरबा देने के लिये साफ इन्कार कर देता है कि कुछ लोगों ने खास आर्डर देकर बनवाया है। फिर उसका हिसाब भी साफ नहीं है। हमेशा उस पर कुछ न कुछ बाकी चढ़ा ही रहता है। उसकी नियत का कोई भरोसा नहीं है। जोधासिंह को कानूनगो पसन्द है! वह तो सदा ही पूरी कराटरी दुगुने-तिगुने दाम पर खरीदने के लिये तैयार

रहता है। उसके यहाँ खासी भीड़ जमा रहती है, । वह जीवन-मुक्त और दरियादिल है। उसका घर हर वक्त उसके लिये खुला हुआ रहता वह। उसकी अच्छी मेहमानदारी करता है। हफ्ते भर में वहाँ बकरा कट जाना मामूली सी बात है। वैसे वह मुरगी खाने का बहुत ही शौकीन है।

अब तो वह एक अच्छे व्यवसायी की भाँति अपने ग्राहकों की सूची रखता है। न वह किसी से ज्यादा मेल-जोल रखना पसन्द करता है, न झगड़ा। उसे अपने सब पुराने ग्राहकों का खयाल है, तथा नये ग्राहकों को भी आश्वासन देता है कि शीघ्र ही वह नया प्रबन्ध करने वाला है। उसने उनका नाम नोट कर लिया है। उसका विचार है कि वह आगे अपने साथ दो छोटे-छोटे नौकर रखकर इस व्यापार को बढ़ायेगा। बिना इसके काम नहीं चलता है। उसके ग्राहक भी बड़ी उत्सुकता से उसकी बाट जोहा करते हैं। यदि किसी दिन नागा हो जाता है तो सब में अगले दिन वह एक मायूसी पाता है। कोई रोज के ग्राहक हैं, कोई तीसरे दिन वाले, तो कोई हफ्ते में एक बार शनीश्चर को लेते हैं। फिर वकील साहब की पत्नी की याद उसे नहीं भूलती है। वह सदा उसे गाली देती है कि उसने उनका घर नाश कर दिया है। इसी लिये वह उनके यहां बहुत संभल कर जाया करता है। एक दिन तो वह औरत जोधासिंह से फौजदारी करने पर उतारू हो गयी थी, लेकिन वह तो वकील साहब की भलमनसाहत के कारण चुप रहा करता है। वे बहुत नेक । एक बार पुलिस ने नाजायज तौर पर शराब बेचने का मुकदमा उस पर चलाया था, तो वकील साहब बिना फीस लिये ही उसकी ओर से लड़े थे। वह मुकदमा जीत गया था। तब से उस 'हिल स्टेशन' पर उसकी धाक जम गयी है। सब लोग उसे जानते हैं। अफसरान भी उसे पहचानने लगे हैं।

निचले बाजार में जो अधेड़ वेश्या रहती है, उस पर उसे काफी दया आती है। वह चाहती है कि फोकट में एक पेग वह कभी-कभी उसे पिला दिया करे। वह कुछ खास सुन्दर नहीं है, फिर भी अकसर उससे बड़े

नाज नखरे के साथ अश्लील मजाक किया करती है। कभी तो गहरी सांस लेकर कहती है कि वह समझदार छोकरा नहीं है। एक बार उसने अपनी महफिल में उसे आमन्त्रित किया था किन्तु जोधासिंह को अपने आत्म-सम्मान की बड़ी चिन्ता है। वह छोटी-छोटी बातों से समझौता नहीं करता है। एक बार उसने उधार पिलाने का तकाजा किया, लेकिन जोधा-सिंह ने समझाया था कि कुछ ऐसे रोजगार हैं, जिनमें उधार नहीं चला करता है। वह उसे देख मन ही मन बहुत हँसा करता है। वह खूब सस्ता सा पाउडर मुंह पर मला करती है और ओठों को भी लिपस्टिक से रँगना नहीं भूलती। उसका बनाव-ठनाव उसे विचित्र सा लगता है। वह उस ओर से बहुत कम निकलता है। अपनी इस उदासीनता के लिये मजबूर है।

कुछ औरतें भी उससे सौदा खरीदती हैं। उनको वह बहुत होशियारी से शराब पहुँचाया करता है। वह उस खतरनाक खेल से परिचित होने पर भी, उसमें आनन्द लेता है। कभी-कभी तो वह तेल में भुनी हुई कलेजी या गोश्त उनको पहुँचा देता है। वे गोला, बादाम आदि मेवे खाने की बहुत शौकीन हैं। वह उनके लिये मेलों से नकली गहने भी खरीद कर लाता है। साधारण सूद पर उनको वह रुपये भी दे देता है। वह उनका विश्वास-पात्र है। वे अपने को 'प्राइवेट' कहती हैं। उससे विनती करती हैं कि उनकी बातें गोपनीय रखी जाँय। जोधासिंह इस भेद को किसी को नहीं बताता है। एक बार एक सेठजी के बिगड़े हुये लड़के ने उसे सौ रुपये का लोभ तक दिया था, पर वह भेद बताने को तैयार नहीं हुआ। वह अपने व्यापार की ईमानदारी पर विश्वास करता है। उन औरतों ने उसे जरसी और गरम जुराब बुनकर दिये हैं। उसे उनका कृपा पात्र होने का गौरव आसानी से प्राप्त हो चुका है। उसके साथी उसके भाग्य की सराहना करते हैं। पर वह तो उन सबको रोजाना जीवन का एक अंग भर मानता है। वह उनसे

कुछ मजाक नहीं करता। गम्भीर बन कर उनकी बातों का जवाब देता है। कभी-कभी उनकी चिट्ठियां इधर-उधर पहुँचा दिया करता है। वह उन औरतों की पैसा खर्च करने वाली उदारता की बात को देखकर दंग रहा करता है। उसे उनकी लुभावनी बातें भली लगती हैं। वह उनके लिये कभी भी कोई घृणा का भाव मन में बटोरने में असफल रहा है। उनमें से जब एक बीमार पड़ी थी तो वह एक नेक साथी की भाँति उसकी दवा कर उसे स्वस्थ करने में सफल रहा। यद्यपि उसने रुपया उधार ही दिया था, पर वह ऐसा साहूकार नहीं था कि जो अपने आसामी को चूस कर उसे नष्ट कर दे। उसने तो साफ-साफ कह दिया था कि वह इस कर्ज का कोई हिसाब नहीं रखेगा। उसके प्रति दासी वाला भाव जब उस लड़की ने व्यक्त किया था तो वह बोला कि उसके खोटे चरित्र के प्रति वाली अपेक्षा के लिये, उसने वह सब कुछ नहीं किया है। उस लड़की के बाल बीमारी के कारण झड़ गये थे। अस्पताल के कम्पाउन्डर से दोस्ती करके वह उसके लिये दवा लाया करता था।

......अब वह झरने के पास पहुँच गया। पब्लिक वर्क्स की सड़क से कुछ ऊपर एक पगडण्डी जाती है, वहीं एक सुन्दर प्राकृतिक झरना है। जिसका पानी बाँज, बुराँश और कई बड़े पेड़ों की जड़ों को छूकर निकलता है। वह बहुत ठंडा और स्वादिष्ट है; पासके गाँव में खोवा अच्छा मिलता है और वह वहाँ से उसे लेकर पानी पिया करता है। झरने पर गाँव की औरतें पानी भरने के लिये आती हैं। वह कुछ को पहचानता भी है। अब कोई नया मुसाफिर थोड़े ही है। उनका ही अपना आदमी बन जाने के कारण, वे उसका लिहाज रखती हैं औ उसके लिये झरना छोड़ देती हैं। वह वहाँ खड़े किसी लड़के को पैसा देकर खोआ और चीनी मंगवा लेता है। चुपचाप हाथ-मुंह धोकर एक तरफ की ऊँची पहाड़ी पर चढ़ कर बैठ जाता है। गाँव की बालक मण्डली उसे घेर लेती है। वह उनको लाइचीदाना बांटता है। फिर

स्वयं ठीक तरह नाश्ता करके वह वहीं घास पर लेट जाता है और दो-तीन बीड़ी पीकर अपनी तलब मिटाता है। वे लड़के सावधानी से उसे देखकर सोचते हैं कि बड़े होने पर वे भी कुछ ऐसा ही रोजगार करेंगे । कभी-कभी वह किसी से पूछता है "क्यों मुताड़ू तू किस दर्जे में पढ़ता है ?"

"पकी 'ब' में।"

"मास्टर कुछ ठीक पढ़ाता है या नहीं ?"

लड़के समझते हैं कि वह भी किसी छोटे अफसर से कम नहीं है । अतएव अपने अध्यापकों की सच्ची-झूठी शिकायतें भी कर देते हैं !

जोधासिंह एक बार एक सब-डिपुटी-इन्स्पेक्टर के साथ ब्रॉच स्कूल गया था। तब से वहाँ के मुदर्रिस भी उससे घबराते हैं। वैसे उसके झरने के पास आते ही स्कूल का अनुशासन टूट जाता है और बालक मण्डली हड़ताल करके उसके पास पहुँच जाती है । वह उन लड़कों को अच्छे नम्बर में पास होने पर इनाम देने का वादा करता है और सच ही पिछले साल पेन्सिल, सिलेट, दावात, कलम, कापी आदि लाकर उसने हेड़मास्टर से कहा था कि सालाना इम्तहान के नतीजे के बाद, यह इनाम अच्छे विद्यार्थियों में बाँटा जाय।

नीचे की ओर वे तीनों सिपाही बैठे हुए-दारू पी रहे थे । तीनों ने एक पूरा तामलेट खाली कर दिया था। गाँव का बादी अपनी दुलहिन के साथ उनके पास पहुँच गया था। अब बादी ढोल बजाने लगा और उसकी पत्नी घाघरे में विचित्र सा नाच नाचने लगी। वह अपने पति के साथ-साथ गीत भी गाती थी। जोधासिंह चुपचाप बीड़ी फूँकता हुआ गीत सुनने लगा। वह उन गीतों को कई बार सुन चुका है। उसमें वही निराश-प्रेम, जीवन की रोजाना कठिनाइयाँ, सामाजिक दुर्व्यवहार आदि......... । उसकी ध्वनि में एक पीड़ा थी। वह तो यदा-कदा उस जोड़े से गीत सुनकर, उन्हें इनाम दे दिया करता है। वह गोल बड़ी सी सोने की नथ पहनती है। उसके घाघरे पर कई रंग-बिरंगी गोटें थीं।

एक सिपाही ने तामलेट उसकी ओर बढ़ाया था पर उसने भारी उपेक्षा के साथ पीने से इन्कार कर दिया। बादी बीच बीच में अजीब से शब्द बड़बड़ाता था—हजूर की बनती रहे। सरकार का रुतबा बढ़े। फिर वह जोर-जोर से ढोल बजाता, अपनी पत्नी के साथ स्वर मिलाता हुआ गाना गाने लगता है। पत्नी की सुरीली आवाज के साथ उसके मोटे गले का मिश्रण विचित्र बेमेल सा लगता था।

अब वह औरत ऊंगली के बीच सिगरेट लिये हुए उसे पी रही थी। दोनों एक ओर बैठ हुए थे। सिपाही बादी से हंसी-मजाक कर रहे थे। वह उनकी बातों का सरल सा उत्तर सरकार, हुजूर शब्द जोड़कर दे रहा था। वह औरत उस सबसे अलग थी। वे सिपाही उससे कुछ प्रश्न करते तो वह बिना किसी खास भावुकता के साधारण सा उत्तर दे देती थी। वह उनकी बातों के प्रति किसी अपेक्षित भावुकता की भूखी नहीं है। उसका प्रति दिवस का काम मुसाफिरों के आगे नाचने-गाने का है और जो कुछ इनाम-किताब मिल जाता है; वह उनकी दैनिक आमदनी है, जिससे कि परिवार का खर्च चलता है। उस युवती की सात महीने की लड़की है, पर वह उसे घर सासके पास छोड़ आती है। वह उसे साथ रखकर अपने आकर्षण को कम कर लेने की पक्षपाती कदापि नहीं है। वे सिपाही कभी कोई बेहुदा मजाक करते हैं तो वह गम्भीर बनकर चुप रहती और पतिकी ओर टकटकी लगाकर देखती है। उसकी उस उदासीनता से सिपाही मुर्झा जाते हैं। उसे इसकी कोई परवाह नहीं है। सिगरेट फूंककर वह खड़ी हो जाती है। और आखिरी नाच नाचने लगती है। उसका गला बहुत सुरीला नहीं है। नाचनेकी गति में कहीं कोई तीक्ष्ण कटाक्ष फेंकने में भी वह सफल नहीं है, किन्तु अपनी जाति की परम्परा को निभाने की ओर सचेष्ट है। गीत भी ऐसा गाती है, मानो कि किसी पढ़ाये हुए पाठ को दुहरा रही हो। गीतकी किसी लड़ीके साथ उसके चेहरे का रंग गुलाबी नहीं पड़ता। वह चेहरा

गोरा होने पर भी बहुत मोटा सा लगता है। और उसमें सौंदर्य की कोई झलक कभी नहीं छलकती है। अब वह बादी हजूर और सरकारों के रुतबे की बढ़ती मनाता हुआ इनाम मांगता है और कम पाने पर हिचकिचाता, विनीत बन कर जमादार, कप्तान साहब से और मांगता है।

वे सिपाही चले गये। वह बादी भी अपनी पत्नी के साथ गाँव के नीचे वाले हरिजनों के मकानों की ओर बढ़ गया। वहाँ से नीचे सड़क दिखलाई पड़ती है। वह मुसाफिरों को वहीं से देख कर संपन्न मुसाफिरों के आते ही नीचे उतर पड़ता है। उसकी पत्नी सुबह से ही अपने नाचने की लिबास में सज-धज कर तैयार हो जाती है। कभी-कभी तो आधा खाना बनाकर ही वह उठ जाती है। या बच्ची को दूध पिलाना छोड़कर ही उसके साथ चल देती है। बच्ची का रोना भी बिसार कर जाना पड़ता है। प्रति दिन एक-डेढ़ घन्टा वे आपस में नये गीत रचा करते हैं। वह गले की सफाई तथा पांत ढोल पर हाथ साफ करता है। उनकी आमदनी खासी अच्छी है। अतएव वे अच्छा खाते-पहनते हैं। कभी-कभी वे दौरे पर और पड़ावों में चले जाते हैं तथा दो-तीन महीने वहीं रह जाते हैं। जोधासिंह जब कभी मन में आता है, तो वह दोनों को बुलाकर गीत सुनता है। पैसा काफी अच्छा देता है और जेब से खास बोतल निकाल कर उन दोनों को पिलाया करता है। उस समय वह अपने को 'धन्ना सेठ' से कम नहीं समझता। वह उनको 'चमगादड़' या 'तीन एक्के' वाली सिगरेट पिलाता है।

वह तो उस औरत से मजाक करने में नहीं चूकता। वह उसे अपना ही आदमी समझ कर मुस्कराती चटपट उत्तर देती है। उसके आगे वे अपनी लड़की को लाते हुए हिचकिचाते नहीं हैं। वह उनकी लड़की को प्यार करके उसकी मुट्ठी पर चवन्नी-अठन्नी बन्द कर देता है। वह अच्छे कुल का ठाकुर है। वे उसकी इस उदारता के कृतज्ञ हैं। वह उन

दोनों के बीच के आपसी झगड़े में पंच बनकर निपटा देता है। दोनों की शिकायतें सुनने का आदी है। पत्नी के पति को छोड़ देने की बात पर हंस पड़ता है। वह जानता है कि उसका पति बहुत सीधा है। उसे छोड़ देने की धमकी दे-देकर वह उससे मन चाहे गहने व कपड़े बनवा लेती है। वह गला ठीक रखने के लिये नीचे कस्बे से पान, कत्था, सुपारी और खास कर मुलेठी उससे मंगवाया करती है। जोधासिंह को गर्व है कि वह उस पर जरूर मरती है। पर वह चरित्रहीन व्यक्ति नहीं है। वह ऐसी लड़कियों की वासना से अपने को दूर रखता है।

उस लोहार की छोकरी से वह प्रेम करता है। उससे एकाएक मुलाकात हुई थी। गंगा की रेती पर कुछ बेर के पेड़ हैं। वहाँ वह बेर खाने गया था। वह लोहार की छोकरी उसे अकेली पेड़ पर चढ़ी हुई मिली थी। उसने डालें हिला-हिलाकर पक्की बेरें नीचे गिराये थे। खेत के मालिक के आते ही वह तो चम्पत हो गया था। उस छोकरी पर मार पड़ी थी, पर उसने उसका नाम नहीं बताया। तब वह छोटा था। उसके पिता जीवित थे, लेकिन वह उस युवती के त्याग को आसानी से नहीं भूला। मेले के अवसर पर तथा त्योहारों में वह पांच-सात रुपया उस छोकरी पर आसानी से खर्च कर देता है। उसकी हर एक मांग को पूरा करना वह अपना कर्त्तव्य समझता है। वह धर्म भीरु है और जानता है कि वह उच्च कुल का ठाकुर है। उस लड़की के साथ वह शादी नहीं कर सकता है। वह लड़की भी इस बात को भली भांति जानती है और इकरार कर चुकी है कि खेल से बड़ी हैसियत की भूखी नहीं है। यदि वे शादी कर के ठकुराइन ले आवेंगे तो वह उनकी ताबेदारी करेगी। वह यह त्याग आसानी से करने के लिये तैयार है। जोधासिंह को उसके पहनावे, शृंगार और तन्दुरुस्ती का बड़ा खयाल रहता है। वह साथ ही पांच रुपया माहवारी जेबखर्च भी उसे दिया करता है। कभी एक दिन उसे चोरी से सिगरेट पीता हुआ पकड़ कर, उसने उसे बहुत मारा था। उसकी धारणा

थी कि आवारा औरतें ही सिगरेट पीती हैं। आगे तो वह स्वयं ही उसके लिये अच्छी-अच्छी सिगरेट लाने लगा था। अब तो वह कैंची से कम की सिगरेट पीना पसन्द ही नहीं करती है। एक-दो बार उसने उसे सुल्फा भरी सिगरेट भी पिलायी थी तथा एक छोटा पेग बढ़िया शराब भी दी थी। लेकिन वह उसकी बड़ी चौकसी रखता है। उसे खतरा है कि गांव के बदचलन छोकरे कहीं उस पर अधिकार न जमा लें। वह उससे सबके नाम बता चुका है। उसके किसी बन्धन के प्रति वह विद्रोह नहीं करती है। मालगुजार के छोकरे ने एक बार उससे छेड़खानी की थी, तो उसी रात को जब कि वह कस्बे से गांव की ओर लौट रहा था, जोधासिंह ने उसे एक खड्ड में ढकेल दिया था। उसे अधिक चोट तो नहीं आयी पर दो दांत टूट गये थे। आगे किसी ने उस छोकरी को नहीं ताका। इसके लिये उसे एक हफ्ते हवालात की हवा खानी पड़ी थी, किन्तु कोई सबूत न मिलने के कारण स्वयं ही छुटकारा मिल गया था।

जोधासिंह झरने के पास चुपचाप लेटा हुआ था। अभी आठ बजे थे। वह दस मील रास्ता तय कर चुका है। अभी चार मील उसे और चलना है। इस सीधी चढ़ाई पर चढ़ना आसान नहीं है। वह रोज ही यहाँ आता है। चूर-चूर थक जाता है। मोटर की सड़क बड़े घुमाव से निकली है और मोटर सुबह देर से दस-ग्यारह बजे चलती है। किराया वे बहुत लेते हैं। शाम को वह नित्य ही लौट जाता है। जाड़े के दिनों में जब कि यहां खूब बरफ पड़ी होती है, वह एक दो रोज ऊपर ही ठहर जाता है। एक बार उन सुन्दर औरतों ने उसे आमलेट व सुन्दर पकवान खिलाये थे। वे बहुत निपुण हैं। वह दो-तीन बार उनके यहां चुपचाप पड़ा रहा है। फिर भी उनके व्यक्तिगत जीवन में छुपी जिज्ञासा को जान लेने का मोह नहीं उठा। न उन लोगों की किसी अज्ञेय पहचान को सुलझाने का लोभ ही उठा था। उसे किसी कौतूहल को संवारना नहीं है। एक ने अपनी कुछ बातें बताने की चेष्टा की थी, तो उसने

टोक दिया था। उनके जीवन की किसी भीतरी तह को खोलकर, उसे वहां झांकना नहीं था। एक ने अपनी बहन से शादी करने का प्रस्ताव उसके आगे रखकर बताया था कि वह बहुत नेक लड़की है। उसने आश्वासन दिया था कि वह सोचकर अपना निश्चय बतायेगा। फिर यह कहा था कि अभी उसका शादी करने का इरादा भी नहीं है। वह उस लड़की का गुन-गान चुपचाप सुनता रहा और आगे से उसने वहाँ जाकर आपसी व्यवहार बन्द कर दिया था। वह सोचता था कि व्यर्थ औरों के जीवन के बीच में खड़ा होना एक गलत बात तो है ही, अपने प्रति एक झूठा विश्वास उनसे बढ़ जायगा।

जोधासिंह अपने जीवन के एक विद्रोह को आज तक नहीं भूल सका है। वह अपने पिता को आज भले ही आसानी से क्षमा करदे, पर सना-तन से शोषण करने वाली उस प्रथा पर उसकी कोई आस्था नहीं थी। उसके पिता ने किसी परिवार से दो सौ रुपये कर्जा कभी बैल खरीदने के लिए लिया था। तीस साल तक वह हर तीसरे-चौथे साल स्टाम्प बदलता रहा, सूद का एक भाग हल लगाने में कट जाता था; फिर भी कर्जा तेजी से बढ़ता चला गया। शादी तथा अन्य अवसरों पर बेगार भी उसे करनी पड़ती थी। जब जोधासिंह समझदार हुआ तो उसे भी उन मालिकों के यहाँ जाना पड़ता था। उसने कुछ महीने वहाँ केवल खाने पर नौकरी की थी और अपने पिता को पग-पग पर अपमानित होते हुए देखकर वह क्षुब्ध होता था। उसकी तो वहां अपनी कोई हैसियत नहीं थी। लेकिन उसका पिता एक दिन एकाएक मर गया। उसने सन्तोष की गहरी सांस ली। सोचा कि उनको स्वर्ग या नरक कहीं भले ही जाना पड़ा हो, मृत्यु-लोक के इस कष्ट से तो आसानी से छुटकारा मिल गया है। पिता मरते समय एक सच्चे आदमी की तरह सुझा गए थे कि उसे मालिक की सेवा करनी पड़ेगी। उनके साथ कई पीढ़ियों का रिश्ता है। वह चुपचाप सब कुछ सुनता रहा था। पिता को गंगा तट पर फूँक कर उसने वादा

किया था कि वह उस पुरानी लीक पर कभी नहीं चलेगा। पिता अपने कर्जे को साथ ले गए हैं। वह तो स्वतंत्र है। उस दासता को अपनाने की इच्छा उसकी कदापि नहीं है। पिता के प्रति श्रद्धा का भाव रखकर भी वह उनकी आज्ञा को मानने के लिये तैयार नहीं हुआ था। वह परम्परा उसे सड़ी गली और पुरानी लगी। व्यक्ति की शोषण करने वाली प्रवृत्ति के प्रति उसका विद्रोह बढ़ता चला गया।

एक दिन पुराने मालिक ने सन्देश भेजा था कि पिता के कर्जेवाले स्टाम्प को अब उसे बदल देना चाहिये। उसके आनाकानी करने पर मुकदमा चलाने की धमकी दी थी। किन्तु उसने आवारा जिन्दगी पसन्द की, पर उस पुराने स्टाम्प की परम्परा वाली मान्यता को अस्वीकार कर दिया। उसके इस लड़कपन पर लोगों ने बहुत समझाया, पर वह किसी प्रकार का समझौता करने के लिये तैयार नहीं हुआ। चुपके उसने अपने बैल बेच डाले और कस्बे में जाकर आवारा लोगों के साथ कुछ दिन खूब मौज की। वहीं उसकी भट्टी के ठेकेदार से मुलाकात हो गयी और तब से वह यह नया रोजगार कर रहा है। अब वह अपने खेतों पर खुद हल नहीं लगाता है। बाप के साहूकार के रजिस्ट्री नोटिसों को उसने कभी स्वीकार नहीं किया। पोस्टमैन को सुझाया कि वे बाप के पास ही सीधे भेज दिये जाँय। अदालत में मुकदमा होने पर उसने साफ-साफ कह दिया था कि वह उस सब के लिये उत्तरदायी नहीं है। उस कर्जे की मान्यता पर उसे सन्देह है।

वह पिता के उस कष्ट की बात याद करता है। किस भांति वे बड़ी सुबह को उठकर बैलों के साथ हल लगाने जाते थे। तीस वर्ष तक प्रति वर्ष सौ रुपये से अधिक की मेहनत करके भी कर्जे से छुटकारा नहीं पा सके। इस बात को वह सबसे सुनाया करता था। एक बार तो उसने होली पर एक छोटा सा नाटक इस विषय का अपने साथियों के साथ खेला था। इसके लिये कस्बे के थानेदार ने उसे चेतावनी दी थी कि

आगे वह कोई ऐसी हरकत करेगा तो जेल काटनी होगी। यह सुनकर उसे बड़ी हंसी आयी थी। पिता ने उसे हल लगाने की दीक्षा अच्छे मुहूर्त में दी थी। उनका खयाल था कि वह एक अच्छा किसान बनेगा। उस बात पर सोचकर वह केवल हंस ही तो देता है। वह उस लायक बेटे से आज नालायक रहने में ही सुखी है। पिता तो जीवन भर शराब की एक एक बूंद के लिये तरसते रहे और बेटा आज जितनी चाहे पीये और पिलाये। पिता अपनी मिरजाई सात-आठ साल में कभी जाकर बदल पाते थे। जीवन भर जूता पहनना तक नसीब नहीं हुआ था जब कि उसका बेटा किसी साहबजादे से कम नहीं है।

पिता तो जान बूझकर धर्मभीरु बने रहे। अपने पुराने संस्कारों को नये युग के साथ मिलाने में असफल रहे। जीवन में अपने छोटापन का भाव कभी नहीं छूटा। जब कि आज वह उस पुराने मालिक की परवाह नहीं करता है। उसका कुड़क अमीन कई बार आया और दो तीन रुपये के बर्तन नीलाम करा कर चला गया। आखिर हार मान, फिर उसने वहाँ आने का साहस नहीं किया। जिस लीक को उसने तोड़ा था उसके और साथी भी उस सनातन से बंधी गुलामी की जंजीरों को तोड़कर स्वतन्त्र हो रहे थे। जोधासिंह उसका नायक है। अब उसकी दोस्ती कस्बे के दरोगा से हो चुकी है। वह उसे पुलिस में भरती हो जाने की सलाह देता है। वह उसके आगे अपने मन की बात कहते हुए नहीं चूकता कि वह तो हुकुमत करने के बल पर जी रहा है, जब कि जोधासिंह का अपना एक व्यक्तित्व है। वह उसकी बातों का उत्तर बहुत सोच-समझकर दिया करता है। उसकी दोस्ती तो दीवान जी से है। वे कभी-कभी नशे में दरोगा को सैकड़ों गालियां सुनाया करता है कि वह कैसा हरामजादा है। फिर वह महकमा तो भले आदमियों के लिये है भी नहीं।

अब वह उठ बैठा। झरने के पास से औरतें चली गयी थीं।

कस्बे से कुछ खाली खच्चर ऊपर की ओर जा रहे थे। एक बंजारे ने पूछा "ऊपर जा रहे हो, ठाकुर साहब ?"

उसने हामी भरी, तो दूसरा बोला, "हम भी खा-पी लें। बीस मिनट की बात है। फिर खच्चर पर बैठ कर चलियेगा।"

और वह फिर वहीं पर बैठ गया। एकसे बोला, "उस्ताद हमारे लिये भी अब के एक नेचा ले आना। कभी-कभी हुक्का पानी को मन करता है।"

वे लोग चुपचाप खाना खाने लगे। जोधासिंह ने कोट की जेब से 'पाकेट बुक' निकाली और पेन्सिल से हिसाब लिखने लगा। इस बार वह सब से पूरा रुपया वसूल करने का निश्चय कर चुका है। आजकल का व्यापार उधार पर नहीं चल सकता है। वह पोस्ट आफिस में एक छोटा-मोटा हिसाब खोलने की बात सोच रहा है। आमके बाग का ठेका लेकर वह ऊपर रोज नहीं आ सकता है। अतएव अभी से वह एक अच्छे लड़के की तलाश में है, जिसे एक-दो महीने में वह सब काम सिखला कर तैयार कर लेगा। रोजगार में बहुत मीठा होना पड़ता है। साथ ही उसने हिसाब लगाया कि बरसात में वह बाग में बकरे मार कर गोश्त का व्यापार चला सकता है। ऊपर हिल-स्टेशन में गोश्तकी बड़ी मांग है। वह एक गड़रिये से इसपर बातें करने को सोच रहा है। बरसात के लिये एक सस्ती पुरानी बरसाती भी खरीदनी पड़ेगी। एक अच्छे व्यवसायी की भांति वह सारी बातों पर ध्यानसे विचार करता हुआ, आय-व्ययका ब्योरा लिखने लगा। यह भी उसने तय कर लिया कि अबके वह दिवाली पर अपनी प्रेमिका को चांदीके झुमके तथा एक अच्छे गोटे वाला घाघरा बनवायेगा। यदि मुनाफा काफी हुआ तो वह एक छोटी बिसातखाने की दूकान खोलना चाहता है। अपने पुरखोंके टूटे मकान, जिसकी दीवाल पिछली बरसात में टूट गयी है उसे बनाने की बात कभी सोचता है। उसकी योजना तो कुछ भेड़ें पालने की भी है; ताकि ऊन का काम वह चालू कर दे। वह

ये सब बातें किसी को बताता नहीं है। अपने तक ही सीमित रखता है।

वह उन प्राइवेट औरतों की बात सोचने लगा। वे बड़े घरों से सम्बन्ध रखती हैं। एक ने उसे सलाह दी थी कि वह तहसील या कलक्टरी में नौकरी क्यों नहीं कर लेता है। वह चाहे तो आसानी से उसे अच्छी नौकरी दिलवा देंगी। वह उनकी सहानुभूति पर हँस कर, उनको धन्यवाद देकर चुप रह गया। एक दासता से, जिसकी मजबूत जंजीर को तोड़ते हुए उसने अपने पिता की आत्मा को धिक्कारा था, वह कदापि दूसरा बन्धन पसन्द नहीं करेगा। यह उसकी अपनी धारणा है। एक ठेकेदार ने उसे अपना गुमाश्ता बनाना चाहा पर उसे स्वीकार नहीं हुआ। वह तो अपनी इस आजादी से बहुत खुश है।

खच्चर वालों में से एक ने उससे खाना खाने के लिये अनुरोध किया तो उसने अस्वीकार करके पूछा, "आजकल माल क्या भाव चल रहा है?"

"सोलह रुपया खच्चर, पर कुछ पड़ता तो पड़ता ही नहीं। चना किसी भी पड़ाव पर कण्ट्रोल के भाव नहीं मिलता है। इधर भूसे का भाव बहुत तेज है। पहले इधर घी-दूध ही खाने को मिल जाता था, अब वह भी नहीं है।"

"इस व्यापार में सुना है कि फिर भी बहुत नफा है।"

"नफा कुछ नहीं है ठाकुर साहब। दो पुश्त से यही काम कर रहे हैं। इसीलिये अब इसे छोड़ते नहीं बनता। नहीं तो आजकल मामूली कुली ही तीन-चार रुपये रोज कमा लेता है। और मोटर वालों के साथ तो मुकाबला हो ही नहीं सकता है।"

जोधासिंह चुपचाप हुक्का गुड़गुड़ाने लगा। सोचा कि दो पुश्त पहले का जमाना आज नहीं रह गया है, फिर क्यों उसको दुहाई दी जाय। आज की हालत में, आज की तरह ही सोचना चाहिये। लेकिन वे लोग तो

चलने के लिये तैयार हो गये थे। उसने भी कण्टरी उठायी और पगडण्डी से नीचे सड़क की ओर बढ़ गया। वहां पहुँच कर उसने होशियारी से कण्टरी खाली बोरा में बाँधकर खच्चर पर लटका दी। खुद एक खच्चर पर सवार हो गया। चार मील की सीधी चढ़ाई इस आसानी से पार हो जायगी, वह भला कब जानता था।

अब वह नीचे ढाल की ओर देखने लगा। छोटे-छोटे गांव पहाड़ियों पर चिपके हुए से लगते थे। कहीं औरतें बीहड़ पहाड़ियों पर चढ़ी हुई घास और लकड़ियाँ काट रही थीं। वह उनको देखता-देखता ही रह गया। उसका खच्चर गरदन झुकाए, आखें नीची किये हुए, ढालकी ओर चुपचाप ऊपर की ओर बढ़ रहा था। वह कभी ऊपर पहाड़ों की ओर देखता तो फिर नीचे घाटी की ओर। कभी चीड़ के पयाल के बीच से वह रास्ता गुजरता तो फिर बीच के जंगल को वह पार करता। सुबह की धूप अभी बहुत,प्यारी लग रही थी। वह मनमें कई बातें सोच रहा था। उसका एक दोस्त डाक बंगले का चौकीदार है। वह चाहता है कि कभी दो चार दिन के लिये अपनी प्रेमिका के साथ वहां रहे। वह उसके लिये एक खच्चर का प्रबन्ध कर देगा। डाक बंगला कस्बे से तीन मील दूर । वहां बड़ा आनन्द आयेगा। पर इससे पहले उसकी मां के लिये कम से कम सौ रुपये के कड़े बनवाने पड़ेंगे और उसका बाप भी बकरियां खरीदने के लिये साठ रुपये की मांग कई बार कर चुका है। इतना रुपया एक साथ दे देना उसकी शक्ति के बाहर की बात है। जब कि मालगुजार का छोकरा उनको बड़े-बड़े लोभ दिया करता है। वह लड़की कई बार इस बात का जिक्र कर चुकी है कि उसके मां-बाप का मन उस लड़के की ओर फिर रहा है। कौन जाने कि किस दिन वे उसे उसके पास जाने के लिये मजबूर कर दें। यद्यपि वह मन से यह नहीं चाहती है। पर कभी-कभी परिस्थितियां लाचार कर देतीं हैं। वह लड़का तो उसके परिवार वालों को कई खेत फोकट में कमाने को कहता है। साथ ही वे वहां से मोटा नाज

भी अक्सर आसानी से पा जाते हैं।

ये सब समस्याएं उसे परेशान करती हैं। यदि उसका हाथ खुला हुआ न होता तो वह अब तक काफी रुपया जमा कर लेता। फिर उससे कंजूसी हो ही नहीं सकती है। वह अपने मकान की पत्थर की चादरें और खेत पर उगे हुए तीन-चार तून के पेड़ बेच कर कुछ रुपया उन लोगों को दे देगा। आजकल किसी का एतबार नहीं हो सकता है। सब तो मतलब के साथी होते हैं। एक बार यह सोचता है कि उन प्राइवेट औरतों से रुपया कर्जा लिया जाय। वे आसानी से दे देंगी। पर आज तक जब कि किसी के आगे हाथ नहीं पसारा है, तो अब के ही यह क्यों किया जाय। वैसे छोटे लोगों से कर्जा नहीं निकालना चाहिये। उनके बीच जो थोड़ी सी धाक जमी हुई है, तब वह सब आसानी से मिट जायगी। जो कि वह नहीं चाहता है। इसीलिये वह सोचता है कि साफ-साफ उस लड़की से कह दे कि अभी उसके पास पैसे नहीं हैं। पैसा हाथ में आते ही वह उसे घुमाने ले जायेगा। और यदि वह प्रतीक्षा नहीं कर सकती है तो फिर उसी लड़के से दोस्ती कर ले। नीच कौम वालों के इस उतावलेपन पर उसे बहुत गुस्सा आता है। वह निश्चय सा कर लेता है कि अबके जाड़ों तक शादी कर लेगा। बिना औरत के जिन्दगी में कोई लुत्फ नहीं है। नहीं तो लोग क्या यों ही इतना रुपया व्यर्थ औरतों पर खर्च कर देते हैं। वह उम्र में ऐसा छोटा भी नहीं है। बस आगेः अपनी गृहस्थी जोड़कर चैन से वहाँ पड़ा रहेगा। ज्यादा एकाकी जीवन व्यतीत करने से कोई लाभ नहीं है। फिर उसका रोजगार ही ऐसा है कि पग-पग पर चरित्रहीनों से वास्ता पड़ता है। कहीं वह फिसल गया तो छुटकारा पाना आसान नहीं है।

अब ऊपर हिल स्टेशन के मकान दीखने लगे थे। वह दृश्य बहुत सुन्दर लग रहा था। कहीं नीचे गधेरों के पास वाले खेतों पर हरियाली छाई हुई थी। पब्लिक वर्क्स की सड़क नीचे बड़े-बड़े घुमाव के साथ नजर पड़ती थी। वह उस रास्ते की छोटी-छोटी बातों की जानकारी रखता है। एक एक पेड़

तथा जरा-जरा चीज भी दृष्टि से नहीं चूकती है। उसके पास छै बोतल शराब हैं। जिसे उसे बीस ग्राहक के पास पहुँचाना है। होटल वाले कुछ ज्यादा दाम देकर सुझाते हैं कि वह उनको ही क्यों सीधे सब नहीं बेच देता है। किन्तु वह जानता है कि इससे उसके ग्राहकों को कुछ ज्यादा दाम देने पड़ेंगे। फिर वह अपना महीनों पुराना सम्पर्क भी एकाएक तोड़ने का पक्षपाती नहीं है। वह अपने व्यापार में 'चोर बाजारी' करने का कायल नहीं है। लेकिन रोज कठिनाई बढ़ती जा रही है। खास कर अफसरों की माँगे बढ़ती जा रही हैं और फिर वे पूरे दाम चुकाना नहीं चाहते हैं। यदि वह तीन चार कण्टरों का इन्तजाम शीघ्र ही नहीं करता है तो उस व्यापार से खास मुनाफा नहीं हो सकता है। वह दो रुपये बोतल खुद खरीद कर तीन पर यहाँ बेचता है। दो-तीन रुपया रोज तो उसका मामूली जेबखर्च है। वह अगले हफ्ते से साढ़े तीन रुपया की बोतल बेचने को सोच रहा है। सबसे कह देगा कि उसे घाटा हो रहा है। शुरू-शुरू में उसके अपने खास खर्च नहीं थे। अब वह अपना हाथ बंद करना चाह कर भी नहीं कर सकता है। उसकी कुछ आदत ही ऐसी बन गयी है कि जिसे आसानी से सुधारा नहीं जा सकता है।

उसने अपने झोले की ओर देखा। उसमें एक मछली का डिब्बा और एक दूध का डिब्बा था। एक मिलिटरी स्टोर के बाबू से उसकी खूब दोस्ती है। वे छुट्टी पर आये तो कुछ डिब्बे उसको दे गये थे। उसने सोचा था कि वह जब 'पिकनिक' में जायेगा तभी अपनी प्रेमिका के साथ उनको खर्च करेगा। किन्तु वह रहमदिल आदमी है, अतएव उन 'प्राइवेट' औरतों के लिये वह दो डिब्बे साथ ले आया है। वह सोच रहा है कि आज दिन को खाना वहीं खायेगा। उधर से निकल कर वह उनसे कह देगा और फिर लौट कर वहीं आराम करेगा। उन लोगों ने अभी-अभी नया ग्रामोफोन खरीदा है। वह वहां 'सती अनुसोया' नाटक उस पर सुनेगा। कुछ आज उसका मन बहुत अच्छा नहीं है। नयी फिल्मों

के रिकार्ड भी उन लोगों के पास हैं। आधी बोतल बचाकर वह वहां ले जायगा। कब तक मुनाफे की बात सोची जाय। जीवन रहेगा तो पैसा हाथ का ही मैल है। लोग मरने के बाद लाखों की जायदाद यहीं तो छोड़ जाते हैं आज वह उन लोगों से कहना चाहता था कि वे उसके लिये कोई अच्छी लड़की तलाश करदें। लेकिन अच्छे ठाकुरों की लड़की लाने के लिये सात-आठ सौ रुपया खर्च करने के लिये चाहिए। जब कि ठाकुर साहब के पास कभी पैसा ही जमा नहीं होता है। ऐसी हालत में खान्दान का झूठा घमण्ड करने से कोई लाभ नहीं। वह चुपचाप फाल्गुन तक कुछ रुपया जमा करके अपनी प्रेमिका के मां-बाप को देकर उस छोकरी को घर में डाल लेगा। बस उसकी गृहस्थी जम जायगी। वह गांव छोड़कर कस्बे में किराये के मकान पर रहेगी। वह गर्मियों में उसके साथ 'हिल स्टेशन' जायगा। अच्छे खान्दान के पीछे झूठ-मूठ उलझने से कोई लाभ नहीं है। वह सब तो उसे ढोंग लगता है।

वह उस लड़की पर बारीकी से सोचने लगा। नीच कौम की छोकरियों में सबसे बड़ी मुसीबत तो यह है कि उनके चरित्र का कोई विश्वास नहीं है। कब किस वक्त न जाने धोखा दे दें। ऐसी कई घटनाएं उसे मालूम हैं। फिर ये नीच जाति के लोग चरित्र की किसी कसौटी पर विश्वास करने वाली भावना भूल चुके हैं। जिस भांति उसके पिताने उसे आशीर्वाद दिया था कि वह किसान का बेटा है। अपने हल और बैल की मर्यादा उसे रखनी चाहिये। वह मरते दम तक नहीं सोच सका कि शोषण एक वर्ग कर रहा है। वह नेक बूढ़ा उस अपने मालिक वाले परिवार के प्रति वाली आस्था को कभी नहीं भूल सका। शायद उसी आर्थिक दासता का दूसरा पहलू ये नीच जाति वाले थे, जिनकी लड़कियों की नैतिकता का मोल-तोल ठाकुर, ब्राह्मण आदि करते हैं। ये लड़कियां परम्परा गत संस्कारों की बेड़ियां आसानी से स्वीकार कर लेती हैं। यदि

जोधासिंह बाकायदा उससे शादी करले तो क्या होगा? लेकिन उन औरतों से उस छोकरी की इस विषय पर चर्चा की तो न जाने क्यों हंसकर बोली थीं कि अच्छी जाति के ठाकुर के लिये तो नीच जाति की लड़कियां पाँव की जूतियां होती हैं। जब मौज आया चुपके बदल डालीं। अपनी जाति की महानता की बातें सुनकर वह मन ही मन खूब हंसता था। मानो कि उसके बाप की हैसियत उस छोकरी से बड़ी ही थी।

इस झूठे दंभ को हटाकर वह अब निश्चय कर चुका है कि अपने खास दोस्तों की बरात ले जाकर उससे आर्य-समाजी रीति से शादी करेगा। वह चुने हुए लोगों को दावत में बुलायेगा और नाच-मुजरा भी एक रात को होगा। वह 'घुटने वाली' दो आदमियों की डोली पर बैठाकर उसे लायेगा और खुद लद्दू घोड़े पर जायेगा। वह पुराने अँध-विश्वासों को तोड़ देना चाहता है। आगे वह एक दूकान कर लेगा और ठाठ के साथ रहेगा।

वह उन औरतों के मिथ्याभिमान पर भी सोचा करता है कि उनको अपनी ऊंची जाति का गर्व है। वे अपने को पुराने राजपूतों का बंशज बताती हैं। उनका दावा है कि ऐरू-गैरू-नत्थू खैरों के साथ वे कभी नहीं रही हैं। यह तो मजबूरी है कि उनको यह सब करना पड़ रहा है। फिर भी वे औरों की तरह नहीं है। उनके मिलने वाले प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। अपने उस तन के व्यापार के प्रति कोई अपेक्षा वे कभी नहीं व्यक्त करती हैं। इनमें बाजारू हाव-भाव नहीं मिलते हैं। वे साधारण परिवार की नारियां सी लगती हैं—लेकिन उनमें एक आकर्षण है। वे बहुत तोड़ मोड़कर लुभावनी बातें किया करती हैं। उनकी मोहनी शक्ति का वह कायल है। वह उनमें अपनपा पाता है और अपनी छोटी-बड़ी बातें बताकर उनकी सलाह लिया करता है। वे उसकी उस शादी की बात की मजाक उड़ाया करती हैं। कभी-कभी तो उस लड़की के बारे में कई बातें

विस्तार से पूछकर कहती हैं कि मालूम पड़ता है, उसने कोई जादू-टोना कर दिया है। अन्यथा वह कौन सी ऐसी शाहजादी है। अगले किसी मेले के अवसर पर वे कस्बे उतर कर उस लड़की को देखने का वादा कर चुकी हैं। लेकिन शादी के लिए बार-बार अपनी अस्वीकृति देती हुई कहती हैं कि कुछ रुपये जमा करके या कर्ज लेकर किसी अच्छे खान्दान की लड़की लाने की सलाह ही उनकी है। अच्छे कुल की लड़की सुख-दुख दोनों में साथ देती है। कौन जाने कब मनुष्य पर मुसीबत पड़ जाय। विधाता के यहाँ से कोई हमेशा के लिये एक सा लेखा करा के तो लाया नहीं है। उसे तो स्वयं ही भविष्य की आशाओं पर जीने की तृष्णा नहीं लगती है। सदियों से लोग उसे एक सुन्दर कल्पना क्षेत्र समझते आये हैं। उसके किसी भेद की उपेक्षा किसी को नहीं रही।

वह फिर भी कभी-कभी चिन्तित रहा करता है। उसे निराशा भी उस वातावरण में घेर लेती है। उसकी प्रेमिका अक्सर मालगुजार के घर की औरतों के साथ कूटा-पीसा करती है। कभी-कभी उनके साथ खेतों में काम करने के लिये भी जाती है। एक बार सुना था कि कुछ औरतों के साथ पनचक्की पर मोटा-नाज पिसाने के लिए गयी थी और रात भर वहीं रह गयी। वह इन सब बातों का पूरा-पूरा ब्योरा रखता है। अधिक तर्क नहीं करता। उनसे भी इस सबकी चर्चा नहीं करता, पर हृदय में सन्देह की तह तो जम ही जाती है। वहां अकसर कुहरा सा कुछ भर जाता है। वह उसे हटा सकने में अपने को असमर्थ पाता है। कभी तो वह ऐसा सा सोचता है कि उनके पुरखे भले ही कल्पना करने में प्रवीण रहे हों, उनके जीवन में आज का सा संघर्ष नहीं था। जबकि उनको तो आज कुछ समझदार होते ही संघर्ष करना पड़ता है। उनकी आंख खुली न हों तो वे मिट जांय। पुराने बूढ़ों की बात सुनकर इसीलिये वह उसपर अधिक तकरार नहीं बढ़ाता है। उनकी स्वयं सिद्धियां उसे थोथी लगती हैं। वह उन पर अधिक विचार नहीं करता है। अपने अनुभव से सीखी बातों की

सच्चाई ही उसे भली लगती है।

उसका धूप और बरसात में काम करना उसे पसन्द नहीं है। वह चाहता है कि वह कस्बे की लड़कियों की भाँति गृहस्थी के कामकाज में निपुण बने। वह उसे सिखाना चाहता है। पर उसका घुटनों तक उठा घाघरा और सिर पर खाद की डलिया लिये हुये खेत पर जाना उसे पसन्द नहीं है। वह तो ब्राह्मणों के घर से कभी-कभी जूठा अच्छा खाना लाकर खा जाती है। इस व्यवहार से वह असन्तुष्ट है। उसे एक दिन बड़ा ताव आया था, जब कि मलेरिया से उठकर वह धान के खेतों में काम करने के लिये मेह की झड़ी में ही चली गयी थी। वहाँ उसने देखा था कि वह घुटने-घुटने तक के कीचड़ में झुकी हुई धान रोप रही थी। उसने आव देखा न ताव, तीन चार चांटे उसके लगाकर; उसकी झोंटी खींचकर खेत से बाहर निकाल लाया था। वह चिल्लाई थी और मालगुजार के घर की औरतें उसकी हरकत को देखकर हंस पड़ी थीं। पर उसने किसी बात की परवा नहीं की थी। वह उसे सीधे बटिया-बटिया एक चट्टान के नीचे बनी हुई खोह में ले गया था। वह तो ठंड और डर से सिकुड़ रही थी। उसने अपनी जेब से शराब की बोतल निकालकर उसके मुंह से लगाते हुए कहा था, "हरामजादी पी जा। तूने मरने की ठानी है तो सीधे गंगा में जाकर क्यों नहीं डूब जाती है। बेकार भले आदमी की मुसीबत तो बच जाती। कहां-कहां चौकसी करता फिरूं।"

वह छोकरी रोने लगी थी। वह बड़ी देर तक उसके बाल और मुंह को पोंछता रहा, पर वह तो तर-बितर भींज गयी थी। मेंह बन्द होने पर वह बिना उससे बात किये ही गांव की ओर चली गई थी। वह भी सीधे श्याम-लाल की आढ़त पर पहुँचा था। वहां चिलम चल रही थी। कुछ लोग पासा फेंक रहे थे। उसने चुपचाप तीन-चार फूकें मारीं और वहीं बैठकर खेल देखता रहा। अभी तक उसका गुस्सा कम नहीं हुआ था। उसे

अपने रहम दिल होने का बड़ा दुःख था। अन्यथा उसे तो उसकी खूब मरोम्मत करनी चाहिये थी कि वह हमेशा के लिये याद रखती।

वे सिपाही ऊपर पगडंडी के रास्ते बढ़ गये थे। जोधासिंह चुपचाप खच्चर पर चढ़ा हुआ रास्ता तय कर रहा था। वह अपनी गर्दन उठा, छाती तान कर लाट साहब की शान से खच्चर पर बैठा हुआ था। बार-बार मन ही मन वह अपने ग्राहकों का हिसाब याद करता था। वह उन औरतों की बात भी सोच रहा था। यह बात उसने तय करली थी। वह हलवाई के यहां से कुछ अच्छी मिठाई खरीद कर वहां ले जायगा। वह वहां एक अच्छे मेहमान की हैसियत से टिका रहना चाहता है। वह अपने मन में अब ज्यादा उलझन पैदा नहीं करेगा अब वह समझदार हो गया है। डेढ़-दो महीने के बाद लोग उसे आम के बाग का ठेकेदार कहेंगे। वह उन औरतों के लिये तीन-चार कंडी आम जरूर भेजेगा। यह उचित है।

कस्बे के समीप आते ही उसके शरीर में एक नयी चेतना आयी। वह जल्दी से खच्चर पर से उतरा। उसने अपना झोला सम्हाला। कंटरी हाथ में ले ली। अब दूकानें नजर पड़ने लगी थीं। वह दूकानदारों से सेवा-सलामी करता हुआ आगे बढ़ गया। अब चुपके एक गली के भीतर घुस कर उसने परिचित दरवाजा खटखटाया। वहाँ की औरत को झोला सौंप कर आधी बोतल शराब दे, पूरी हिदायत देकर वह आगे बढ़ गया। वह अब तेजी से कंटरी की शराब बांटता हुआ अपने ग्राहकों से हिसाब वसूल करने लगा।

वह आज बहुत खुश था।

सीमान्त का पथिक

मध्य रात्रि ? किसी ने 'टिप, टिप, टिप' करके दरवाजा खटखटाया कपिल उठता हुआ बोला, "पूरण आ गया है, शायद।"

"वे चार बजे से पहिले नहीं आयेंगे। आप बैठें," कह कर कृष्णा उठी, दरवाज़े की कुंडी निकाल कर उसे खोला ही था कि वह एकाएक चीख उठी। कपिल वहाँ पहुँचा। उसने देखा कि वहाँ पूरण बेहोश पड़ा हुआ था। उसने उसे उठाया और भीतर लाकर पड़ी हुई चारपाई पर लिटा दिया। कृष्णा उसी भाँति खड़ी की खड़ी बड़ी देर तक बाहर की ओर देखती रही। अब वह पहिले वाला भय हट गया था। फिर उसने सावधानी से कुंडी लगा ली। कपिल के पास आकर उससे कहा, "उनको वैसे ही पड़े रहने दीजिए। चार-पाँच घन्टे में बेहोशी आप हट जावेगी।"

कपिल असमंजस में कभी कृष्णा को देखता तो, फिर उसकी आँखें पूरण के चेहरे पर टिक जातीं।

—पहाड़ी के ऊपर निर्जन गाँव। चारों ओर खंडहर ही खंडहर! आस-पास बीस-पचीस मील तक कहीं और किसी गांव का चिन्ह तक नहीं है।

सुना है कि लगभग सौ वर्ष पहले गोरखों ने एक बार इस गाँव पर हमला किया था और सब नारी-पुरुष और बच्चों को अपनी पैनी कुंकरियों से मार डाला था। तब से आज तक फिर यह गाँव नहीं बसा। गाँव के चारों ओर हरे-भरे देवदारु के पेड़ों के कई झुंड हैं और ढलुआ तथा सम भूमि सदा सुन्दर रंग-बिरंगे फूलों से भरी रहती है।

"आप भूत-प्रेत पर विश्वास करते हैं ?" आखिर कृष्णा ने चुप्पी तोड़ी।

"नहीं-नहीं," कह कर कपिल ने एक पक्के नास्तिक की भाँति सिर

हिलाया । लेकिन उसके भीतर मन में एक अज्ञात भय फैल रहा था।

अब वह कृष्णा तो चुप हो गई।

—कृष्णा का पत्र आया था। लिखा था कि तुरन्त चले आओ। मैं पूरण के साथ हूँ।

पूरण ने 'फिजीक्स' में डॉक्टरेट ली थी और फिर हमारे बीच से एक दिन लोप-सा हो गया। लोगों में तरह तरह की बातें फैलीं। सुना कि एक दिन रात को उसने कोई भयानक स्वप्न देखा था। बस जब नींद टूटी तो विक्षिप्त हो गया। कमरे के भीतर की कई चीजों को तोड़-फोड़ कर वह वीभत्स-विकराल हँसी हँसा था।

जो उसे पकड़ने गए, उन सब पर उसने एक खूँ-ख्वार जानवर की भाँति हमला किया था। एक सप्ताह के बाद सब लोग उसकी वेशभूषा को देखकर आश्चर्य चकित रह गए थे। मैले-कुचैले फटे कपड़े, जिन पर कि सूखे खून के काले धब्बे पड़े हुए थे; धूल से भरे हुए उलझे बाल; बढ़ी हुई दाढ़ी; चेहरे पर अजीब सी डरावनी हँसी; हाँथों में हथकड़ी; और कोई मनचली गजल गाता हुआ वह पुलिस के सिपाहियों के साथ पागलखाने का सफर तय कर रहा था।

यह दस साल पुरानी बात है। तब महीनों तक लोगों के बीच उसकी चर्चा रही। हम सब को निकट भविष्य में उससे कई आशाएँ थीं। उसके प्रोफेसरों का कहना था कि वह कुशाग्र बुद्धि का असाधारण विद्यार्थी था। लेकिन होनहार के फौलादी हाथों पर यह जो भविष्य निर्भर रहता है; वही पूरण हमसे बिछुड़ कर अलग सा हो गया था।

उन दिनों वह कृष्णा कपिल से मिली थी। उसने कभी पूरण की कोई चर्चा नहीं की। एक बार कपिल ने उससे 'एक प्रश्न'-सा पूछ डाला तो तपाक से उत्तर मिला था—वह अपना हृदय पूरण को समर्पित कर चुकी

है। कपिल चुप रह गया था। माता-पिता थक कर हार गए। उसने अपना अन्तिम निर्णय बतला दिया कि वह शादी नहीं करेगी।

नाते-रिश्तेदारों के बीच फिर भी चर्चा चालू रही। झुंझला कर एक दिन किसी रियासती स्कूल में प्रधान अध्यापिका का पद स्वीकार करके वह वहीं चली गई थी। कृष्णा के चले जाने के बाद पूरण की बची हुई स्मृति भी लोप हो गई। कपिल तो रोज के जीवन-दलदल को पार करता हुआ चुपचाप चलता रहा। इस बीच भले ही कोई नई बात न हुई हो, पर वह दो बच्चों का पिता बनकर सही सामाजिक प्राणी कहलाने लगा है।

पत्र में लिखा था कृष्णा ने, "पूरण को ढूँढ़ निकालने वाले कर्तव्य को उठा कर ही मैंने आपका प्रेम ठुकराया था। नारी के हृदय में सुलगती हुई आग को काश कि आप पहचान सकते ? तुरंत चले आओ, मैं असहाय हूँ। मुझे सहारा दो।"

कृष्णा कैसे पूरण के पास पहुँच गई, यह बात एक पहेली-सी लगी। चंद लाइनों का रहस्यमय पत्र पाकर पीछे कुछ दस साल पुरानी घटना की ओर झाँक, एक बार फिर उनको समेट लेने का प्रश्न कपिल के हृदय में उठा। और कृष्णा को अपने समीप देख लेने की भूख भी तो उठी। एक नूतन उत्साह मन में भर गया। बस वह निर्दिष्ट स्थान की ओर रवाना हो गया था।

भूत, प्रेत और अप्सराओं के अस्तित्व की चर्चा उठा कर अब कृष्णा गुमसुम बैठी हुई थी, लेकिन बाहर अजीब-सी किलकारियों की प्रतिध्वनि कपिल ने सुनी। कृष्णा तो उसी भांति स्थिर-सी बैठी थी। एकाएक ऐसा लगा कि दरवाजे के पास से कुछ युवतियाँ खिल, खिल, ल, ल...हँसती हुई गुजरी हों।

कपिल की आँखें कृष्णा के चेहरे पर टिकी हुई थीं। आज भी उसका वह पिछला सौन्दर्य वैसा ही सुरक्षित-सा लगता था। सोचा ही

कपिल ने कि विज्ञान ने प्रेम को तोलने के बाट बनाने में आज तक सफलता नहीं पाई है, अन्यथा निराश प्रेमियों के रोगों का उपचार आसानी से हो सकता। दुनिया में सब केवल हरी भावना वाले स्वस्थ आशावादी प्रेमियों के जोड़ ही नज़र पड़ते और निराशावादी पीली, नष्टकारी भावनाएँ मिट जातीं...

—फिर दरवाजे पर खटका हुआ 'खट, खट, खट! मानो कोई साव-धानी से खटखटा रहा हो। कपिल उठा था कि कृष्णा बोली, "यहाँ तो रातभर यही हाल रहता है। इन दरवाजा खटखटाने वालों से पार पा लेना आसान काम नहीं है।"

कृष्णा ने बात सरलता से कही पर वह कपिल के हृदय के भीतर एक कड़ी रेखा खींच कर वहाँ फैलने लगी। यह रोज की बात, और पूरण...! उसके सिर के बाल बिल्कुल पक गए हैं। चेहरे पर झुर्रियाँ हैं; चौतीस-पैंतीस की अवस्था होने पर भी वह पचपन-छप्पन का-सा बूढ़ा लगता है।

कपिल की दृष्टि कृष्णा से पूरण की तुलना करने लगी। पूरण तो उसी भाँति चारपाई पर लेटा हुआ था। आज के इस वातावरण के धुंध के भीतर दस साल पुराना इतिहास छुपा हुआ था। उसके पन्ने पढ़ लेने के लिए कपिल बहुत उत्सुक था।

एकाएक कमरे के किसी कोने में किसी युवती के रोने का स्वर सुनाई पड़ा। फिर भारी-भारी सिसकार के साथ वह स्वर दब गया। कृष्णा तो हँस पड़ी। कपिल उसके इस साहस पर दंग रह गया। अब बाहर से मधुर संगीत की ध्वनि कानों में पड़ी।

वह उठ कर पूरण के पास गई। फिर कपिल से बोली, "इनका यही हाल है। आजकल मौत का रहस्य सुलझाने की धुन में हैं। न जाने कहाँ-कहाँ से जानवरों और मनुष्यों के मृत शरीर उठाकर ले आते हैं। उनको

चीरफाड़ कर देखते हैं कि आखिर वह मरा क्यों है ? उनका कहना है कि एक विशेष अवस्था के भीतर किसी व्यक्ति को नष्ट नहीं हो जाना चाहिए ।"

कृष्णा एक गहरी साँस लेकर चुप हो गई । सोचा कपिल ने कि पूरण ने यह क्या खेल खेलना शुरू किया है । मौत के ऊपर विजय पा लेना तो असम्भव सी बात लगती है । ओ, वह सच ही पागल हो गया है । यह लड़की दीवानी बन कर उस पगले के पीछे अपना जीवन नष्ट कर रही है। इसकी सारी कोमलताएँ उसने नष्ट कर डाली हैं । यह तो पशुओं की भाँति इस निर्जन स्थान में रहने की आदी हो गई है । कहीं कोई भय नाम मात्र को नहीं । इनसान के संस्कार और उसकी भावना को वह कैसे भूल गई ?

दरवाजे पर अब तेजी से खटखटाहट होने लगी । कोई बाहर से सांकल खटखटा रहा था । अजीब-से स्वर में किसी ने कृष्णा का नाम लेकर उसे पुकारा । कपिल ने कृष्णा की ओर देखा । वह चुपचाप उठकर बोली, "रोज का यही हाल है । तभी पूछा था न आप से कि आपको भूत-प्रेत पर विश्वास है ।"

प्रेत...! विज्ञान जिसकी कोई व्याख्या नहीं करता, उस पर कोई कैसे विश्वास कर ले । अतएव कपिल ने आसानी से सिर हिलाकर बात अस्वीकार कर दी ।

दरवाजे पर खटका हो ही रहा था । कृष्णा बोली, "आप बैठें । देख आऊँ कि क्या बात है । शायद कोई आया होगा ।"

वह शायद 'कोई' रात को दो बजे आया है ! कृष्णा ने उठ कर दरवाजा खोल लिया । कपिल ने किसी की हंसी सुनी । कोई पन्द्रह मिनट त गयेबी तो भी कृष्णा वहीं खड़ी ही थी । अब उसने कपिल को पुकारा । कपिल चुपचाप वहाँ पहुँचा । बाहर घना अंधियारा था । आसमान पर तारे टिमटिमा रहे थे । लेकिन कृष्णा के हाथों पर तो बच्चे की

नीचे एक पाइप, चमड़े की थैली और औज़ारों की अटैची धरी हुई थी। कपिल अवाक्-सा सब कुछ देखता रह गया। कृष्णा भी कुछ नहीं बोली। तभी कुछ ऐसी आहट मिली कि कोई फौज युद्ध करने के लिए जा रही है। वह कुछ देख नहीं सका।

अब बोली कृष्णा, "चार साल से हम इन भूत-प्रेतों की दुनिया में रह रहे हैं। पहिले इन लोगों ने हमें बहुत परेशान किया। पूरण ने इनसे कई भयंकर युद्ध लड़े। अब ये हमारे मित्र बन गये हैं। पूरण का अनुमान है कि यहाँ सौ परिवार इस समय हैं। खंडहरों में लगभग सौ वर्षों से इनके अलावा और कोई नहीं रहा है।"

तभी सामने चिट्टी रोशनी वाली कई सफेद मशालें बलीं और देखते ही देखते चारों ओर चिट्टा उजाला छा गया। वह सुन्दर देवदारु का बन और फूलों से भरी घाटियाँ चमक उठीं। उतना सुन्दर दृश्य कपिल ने जीवन भर कभी नहीं देखा था। कृष्णा एकाएक भावुक बन कर बोली, "ओफ! कितना सुन्दर है यह सब, देखिये।"

उस रोशनी में पहिले-पहल कपिल ने कृष्णा का पीला पड़ा हुआ चेहरा देखा। संध्या को जब वह वहाँ पहुँचा तो यह कृष्णा फूलों के गजरे पहिने उन्मत्त होकर कोई गीत गा रही थी। उसे देखते ही दौड़कर बावली-सी बनी उससे चिमट कर बोली, "आप आ गये? मुझे तो आशा नहीं थी।"

पूछा ही कपिल ने, "क्या बात है कृष्णा?" दृष्टि एकाएक उस निर्जीव बच्चे पर जम गई। उसकी आँखों की पुतलियाँ खुली हुई थीं। वह दो साल का लगता था।

"चलो, भीतर चलो!" कहा कृष्णा ने। कपिल ने नीचे भूमि पर रखी हुई चीजें उठालीं। कृष्णा भीतर आ गई। उसने चुपचाप दरवाजे पर कुन्डी लगादी। कृष्णा पास वाले कमरे का परदा हटा कर भीतर पहुँची और बच्चे को वहाँ रखकर लौट आई।

कपिल चुप था। कृष्णा आकर बोली, "तीन महीने से वे इसे जीवित करने की चेष्टा कर रहे हैं। कहते हैं कि वह तो सोया हुआ है। उसकी नींद अवश्य टूटेगी। सुबह से शाम तक धातुओं और जड़ी-बूटियों से नए-नए 'सीरम' बनाकर इन्जेक्शन देते हैं। कभी-कभी तो ज़हरीली जड़ी-बूटियों का प्रयोग करते हुये स्वयं बेहोश हो जाते हैं। यदि हमारे ये अज्ञात मित्र न होते तो हम एक दिन भी जीवित नहीं रह सकते थे। ये हमारी आवश्यकता की सब चीजें ले आते हैं। आप चुप क्यों हैं?"

इन लोगों के ये मित्र! कपिल यदि सभ्य दुनिया के बीच इस बात को कहेगा; तो लोग तुरन्त डाक्टर के पास ले जावेंगे। वह डाक्टर आसानी से पागलखाने का 'पासपोर्ट' बना कर दे देगा। लेकिन तब तो कपिल उन सारी घटनाओं को समझने की चेष्टा कर रहा था। उसका मन एक बार उस बच्चे को देखना चाहता था। कृष्णा उसी भाँति चुपचाप बैठी हुई थी।

वह उठा और आगे बढ़ कर उस कमरे का परदा खोल कर भीतर प्रवेश किया, जहाँ कृष्णा उस बच्चे को छोड़ आई थी। कमरे में भीतर तेज नीली रोशनी हो रही थी। मेज पर एक बड़े काँच के टब पर किसी तरल पदार्थ में वह बच्चा लेटा हुआ था। उसकी नाक और मुंह पर कई पतली-पतली नलियाँ लगी थीं। कमरे में मरे हुए पशु-पक्षी और जानवरों के ढाँचे भी सुरक्षित-से धरे थे। छोटे-छोटे कांच के बर्तनों में तरल पदार्थों में मछली, छिपकली, मेंढक आदि जन्तु पड़े हुये थे। वह कमरा एक विचित्र अजायबघर सा लग रहा था। पास के छोटे कमरे में कई जड़ी-बूटियाँ आदि बोतलों में संवार कर रखी हुई थीं तथा कई अजीब, बेडौल से यंत्र भी थे।

वह उस रसायनशाला को देखकर दंग रह गया। एक कोने में जो छोटा कमरा था, वहां से गुलाबी रोशनी आ रही थी। वह उसके भीतर

पहुँचा। चारों ओर दीवालों पर बड़े-बड़े फोटो के 'एन्लार्जमेन्ट' लटके हुए थे। एक को देखकर वह दंग रह गया। "कृष्णा!" उसके मुँह से अनायास यह शब्द निकला।

कृष्णा भीतर आई। बोली, "क्या देख रहे हैं आप? ये सामने सब भूत-प्रेतों के फोटो हैं। वे उनका सफलतापूर्वक चित्र खींच लेते हैं। अब आपको इनके अस्तित्व पर विश्वास हो गया होगा। इनमें से कुछ को तो मैं पहचानती हूँ।"

"कृष्णा...!"

कृष्णा ने एक बार अपना बड़ा फोटो देखा और चुपचाप कपिल की ओर देखने लगी। वह फोटो पूरण को कहाँ से प्राप्त हो गया? यह बात कपिल की समझ में नहीं आई पूछा उसने, "कृष्णा यह सब क्या पहेली है?"

"पूरण इस फोटो के कारण ही पागल हो गया था।"

"उसने इसे कैसे प्राप्त किया?" कपिल के मन में कई बातें उठ-उठ कर दब सी जाती थीं।

लेकिन वह कृष्णा चुप थी।

"यह पूरण को कहाँ मिला, कृष्णा?"

"उस दिन बाग में आप और मैं गए थे। वह कोबरा जिसे मालियों ने मार डाला था, वास्तव में मरा नहीं था। मृत्यु से पहिले उसकी आँखें हम पर टिक गईं और उन आंखों पर हमारा 'निगेटिव' बन गया।"

वह इतनी पुरानी बात; तब कृष्णा स्वतंत्र थी। कपिल को पूरा विश्वास था कि भविष्य में वह सदा उसके साथ रहेगी। उस दिन संध्या को कृष्णा और कपिल बाग में बैठे हुए थे। कृष्णा उस दिन सुन्दर श्रृंगार करके आई थी। उर्वशी-सी लगती थी वह। भावुकता के एक तीव्र प्रवाह में कपिल ने आलिंगन कर लिया था। वह स्मृति फोटो के रूप में

इस भाँति पूरण के पास सुरक्षित रहेगी; इसका कोई ज्ञान कपिल को आज तक नहीं था।

कृष्णा ने बात सुलझाई कि पूरण को फोटोग्राफी का पुराना शौक है ही। उस रात को वह उस बाग में घूमने के लिए निकला था और उस कोबरा को उठाकर ले आया। उसने उसकी आँखों के कई फोटो लिए। फिर उसने उसकी आँखों का एक फोटो 'एनलार्ज' किया। उसने उसके कई और 'निगेटिव' भी लिए। एक दम वह वीभत्स हँसी-हँसा था। उसने पागलपन में उस 'कोबरा' के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। जब कृष्णा ने सुना कि वह पागल हो गया है, तो उसका सब सामान अपने पास ले आई थी।

यह कृष्णा फिर पूरण से मिलने के लिए कई बार अस्पताल गई। वह वहां पूरण के साथ घंटों एकान्त में बैठी रहती। डाक्टरों ने इस पर आपत्ति नहीं की। पूरण तो एक दिन बोला, "कृष्णा, मैं पहाड़ जाऊँगा।"

डाक्टरों ने स्वीकृति दे दी और कृष्णा उसे लेकर पहाड़ों में गांवों-गांवों में घूमने लगी। पूरण एक दिन हठपूर्वक यहाँ चला आया। कृष्णा उसके साथ रहकर उसके सारे भार को सम्भाल रही है। यह सब सुनकर कपिल आश्चर्य चकित रह गया।

कहा ही फिर कृष्णा ने, "पूरण बार-बार कहता है कि मैं जब चाहूँ अपनी दुनिया को लौट जाऊँ। हँसी उड़ाता है मेरी कि लड़कियों का स्वभाव सदा से ही गुड़ियों से खेलने वाला रहा है। उनका जीवन गुड़िया खेलने भर में सीमित है। नानी ने मां को गुड़िया-सा प्यार किया, मां ने बेटी को गुड़िया-सी सजाया और पुरातन से यह गुड़िया की बात चली आई है। मैं इस अपमान को चुपचाप सह लेती हूँ। आज अब उनसे कोई झगड़ा नहीं करती।"

कृष्णा की आंखों की पलकें भीज गईं। वह निडर कृष्णा जो इतनी बलवान् है आज भी क्यों मानव-दुर्बलताओं के बने जाल में फँसी हुई है।

यह बात कपिल की समझ में नहीं आई। वह तो उन बड़े-बड़े टंगे हुए फोटुओं को देखता भर रह गया।

अनायास ही कृष्णा चैतन्य हुई।

पूछा, "क्या बज गया होगा ?"

"साढ़े पांच !" कपिल घड़ी देखकर बोला।

"अब ये उठने वाले होंगे। होश में आते ही फिर इस बच्चे को लेकर चले जावेंगे। कभी-कभी तो कई दिन तक नहीं लौटते हैं। यदि हमारे ये मित्र न होते तो उनका जीवित रहना मुश्किल था।"

"हमारे ये मित्र...!" कपिल ने बात काटी।

"हाँ, वे हमारे ही ये मित्र हैं। ये भूत-प्रेत कुछ नहीं, हमारी आत्माएँ ही हैं। आज से लगभग एक सौ वर्ष पहिले यहां गोरखों ने जो अत्याचार किये थे, उन ग्राम्य-वासियों की आत्माएँ भूत-प्रेत बनी यहां डोलती हैं। वे प्रति दिवस रात्रि को अपने उस दुश्मन पर विजय पाने के लिये रवाना होते हैं। लेकिन आज तक उन ऊँची-ऊँची पहाड़ियों और नीची घाटियों को पार कर नैपाल पहुँचने में सफल नहीं हो पाये हैं।"

कृष्णा यह कह कर चुप हो गई। कपिल उन भूत-प्रेतों के फोटो देखने लगा, किन्तु कुछ रेखाओं के अतिरिक्त उसकी समझ में कोई बात नहीं आई। कृष्णा एक-एक को समझा-सी रही थी कि कौन उनका सरदार है ; वे फौजें जा रही हैं। ये...कपिल हत् बुद्धि खड़ा भर था।

अब कृष्णा बोली, "चलो।"

कपिल चुपचाप बाहर वाले कमरे में चला आया। कृष्णा पूरण के सिरहाने बैठ गई। कपिल पास वाले मोढ़े पर बैठा उन दोनों को देख रहा था। बड़ी देर तक एक नीरव शान्ति उस वातावरण में रही। अब एकाएक धीमे स्वर में पूरण ने पुकारा, "कृष्णा !"

"क्या है, पूरण ?"

"कल बच्चे ने किलकारी मारी थी।"

"पूरण! पूरण!!"

"यह सच बात है, कृष्णा।"

"कल तुम कहाँ गए थे?"

"ऊपर उन खोहों में, जहाँ उस दिन मैंने कस्तूरी का हिरण मारा था। यहाँ कब पहुँचा था?"

"आधी रात को वे लोग लाए थे, मैं तो भय से डर गई। भूल गई, कपिल आ गया है।"

"कब आया?"

"कल शाम को।"

"तो तुम आज जा रही हो?"

"नहीं, अब नहीं जाऊँगी।"

तभी कपिल ने आगे बढ़ कर पूछा, "क्यों प्रोफ़ेसर, यह सब तुम क्या कर रहे हो?"

"मुरदों को प्राणदान!"

"प्राणदान!!"

"यह सच बात है। कल हमारे बच्चे ने किलकारी मारी थी। उसके जीवित होते ही हम नीचे उतर जायेंगे।"

अवरोध और गति

मैं चुपचाप लेटा हुआ था। नौकर मेज पर चाय की ट्रे लगा कर चला गया। मुझे जाड़ों की सुबह सदा से ही फीकी लगती रही है। आलस्य की खुमारी हटा कर मैं उठ बैठा और रजाई हटा, कम्बल ओढ़ लिया। अब चाय बनाकर चुपचाप पीने लग गया। मेरा हृदय बिलकुल खाली था मानो कि रात्रि की कालिमा में वह सब कुछ लुटा चुका हो। कई बातें मन में उठती थीं। मैं उन पर कुछ सोचना चाह कर भी सब कुछ भूल गया था। मेरे पायताने रजाई के ऊपर बिल्ली का बच्चा अब तक चुपचाप लेटा हुआ था। अब वह अंगड़ाई लेकर उठा और म्यांऊ-म्यांऊ की मीठी आवाज में चेतावनी देकर, पंजों के बल मेरे हाथ के सहारे खड़ा हो गया। उसने चाय की प्याली सूँघी और चुपचाप मेज पर धावा बोल दिया। मैंने चाय की प्याली मेज पर रख दी। एक बिस्कुट उठाया, उसके टुकड़े-टुकड़े करके उसे खिलाने लगा। वह बिल्ली का बच्चा अनायास एक दिन सुबह को कहीं से मेरे यहाँ चला आया और मेरे सीमित परिवार का सदस्य बन गया था। उसके सुफेद रोओं पर काली-भूरी बालों की डोरियाँ बहुत भली लगती थीं। बिल्ली के बच्चे ने अंगड़ाई ली और नीचे कूद कर चुपचाप बाहर छज्जे पर धूप में बैठ गया। मैं चाय की चुस्कियाँ लेता रहा...

नौकर ने तभी एकाएक आकर सुनाया कि कोई महिला नीचे ड्राइंग रूम में मेरी प्रतीक्षा कर रही है। इस परिवार में किसी महिला का इस प्रकार चला आना एक नई घटना थी। शहर में मेरा कोई परिचित नहीं है और बाहर से किसी आने वाले मेहमान की सूचना मुझे नहीं थी, अतएव एक बार मैंने अपनी स्मृति को पैनी करके महि-

लाओं के उस गिरोह की छान-बीन करनी शुरू कर दी, जिनसे कभी पिछले जीवन में सम्बन्ध रहा हो। किन्तु कोई परिचित चेहरा याद नहीं पड़ा। मुझे अपनी बुद्धि पर हंसी आई। जल्दी-जल्दी गोसल से निबट कर मैंने ओवरकोट ओढ़ लिया और सीढ़ियां उतर कर नीचे पहुँच गया। दरवाजे का परदा हटा कर मैंने देखा कि कोई महिला चुपचाप सुबह का अखबार पढ़ रही है। मुझे देख कर उसने अभिवादन किया। अब वह चेतन हो सोफा पर बैठ गई थी। मैंने उसे पहचान लेने की चेष्टा की पर असफल रहा। वह असाधारण सुन्दरी थी, उसका रुचि पूर्ण पहनावा देखकर लगता था कि वह किसी अच्छे परिवार की महिला है। उसके चेहरे पर सजीव जीवन की स्पष्ट छाप थी। असमंजस में सा मैं उसे पहचान लेने पर तुला, किन्तु किसी निर्णय पर न पहुँच सकने के कारण अपनी बुद्धि को धिक्कारने लगा। वह तो मेरी उलझन को हटा कर बोली, "मुझे कल्पना कहते हैं।"

कल्पना! ठीक मुझे याद हो आया। इस नाम की एक लड़की हमारे साथ एम० ए० में पढ़ती थी। लड़कों के बीच उसकी कई बातें चालू थीं। वह प्रति दिन नए-नए डिजाइन के कपड़े पहन कर आती थी, जिससे विद्यार्थी समुदाय उससे विशेष रूप से आकर्षित था। कुछ लड़के तो जीवन की निरर्थक सी छान-बीन करते हुए मिलते थे। कई का मत था कि वह बहुत घमंडी लड़की है। दो-तीन लड़कों को देखकर शायद वह कभी मुसकराई थी और उनका ख्याल था कि वह प्रेम के सुनहले सुबह की पहली छटा थी। लेकिन मैं तो केवल यही जानता था कि कल्पना को अपनी पढ़ाई के अतिरिक्त और किसी बात से दिलचस्पी नहीं थी। वह खाली वक्त लाइब्रेरी में बैठ कर काट देती थी। ठीक समय पर उसकी 'कार' उसे विश्वविद्यालय पहुंचाती और वहीं से ले जाती थी। सिनेमा, थियेटर अथवा अन्य किसी उत्सव में मैंने उसे कभी नहीं देखा था। कुछ साथियों का कहना था कि वह एक बाल-

विधवा है। तो कुछ का ख्याल था कि हाल में ही उसकी सगाई हुई है। कुछ का रोना था कि ऐसी लड़कियाँ फारवर्ड होनी चाहिएँ, अन्यथा विश्वविद्यालय का जीवन नीरस हो जाता है। उसे घरेलू लड़की कह कर, कुछ उसकी मजाक उड़ाते थे कि उसका भविष्य किसी परिवार में बैठ कर सात-आठ बच्चे पैदा करना भर ही है। मैंने पहले कभी इन सब बातों से कोई दिलचस्पी नहीं ली थी। आज अनायास उसे इस स्थिति में पाकर कुछ अज्ञेय सी घटनाएँ स्वयं चमकीली पड़ गईं। वह साँवली सी लड़की एक बार डिबेट में बोली थी। बोलते-बोलते उसका गला भर आया था और वक्त से पहले ही वह लौट कर चुपचाप घर चली गई थी। उसके उस व्यवहार की आलोचना किसी ने नहीं की। फिर तो वह आठ-दस रोज तक कालेज नहीं आई। सुना कि वह बीमार पड़ गई है। जब वह लगभग एक मास के बाद आई तो उसका रूप और निखर आया था, किन्तु उसने अपना जीवन और अधिक सीमित कर लिया था। अब तो वह अपनी सहेलियों से भी बहुत कम बातें किया करती थी। उसके उस व्यवहार से किसी को आश्चर्य नहीं हुआ। उसे डिबेट में प्रथम पुरस्कार मिला था। उसने वह लेना स्वीकार नहीं किया। उसके इस कौतूहल पूर्ण व्यवहार पर सबको अचरज हुआ, किन्तु किसी ने इसकी आलोचना नहीं की।

उस कल्पना का फिर भी अपना ही एक व्यक्तित्व था। वह था उसका शृंगार और रुचिपूर्ण कपड़े पहनने की रुचि। रंग-बिरंगी साड़ियां, सुन्दर ब्लाउज कई प्रान्तों की पोशाकें, प्राचीन गहने तथा कई अजनबी सी वेष-भूषा, वह आसानी से अपना लेती थी। एक बार म्यूजिक कानफरेन्स में उसने कोई बहुत पुराना नृत्य किया था, जिसे आज तक कोई शायद ही भुला सका होगा। लोगों का ख्याल था कि उसके पिताजी पुरातत्व के विद्वान हैं और वह पिता के गुणों की साक्षात प्रतिमा थी। यह बात सच ही होगी। उसके व्यक्तित्व में सांस्कृतिक विकास की एक

नूतन गति मिलती थी, जो बरबस सबको अपनी ओर खींच लेती थी! फिर भी उस कल्पना को पहचान लेना आसान नहीं था। उसके जीवन का विस्तार किसी की पहुँच से बड़ी दूर था। उसके परिवार में झांक कर कोई कब उसकी छानबीन कर सका था। उसका जीवन कोई ऐसी पहेली भी नहीं था कि हर एक उससे सम्बंधित गुत्थियों को सुलझाने में ही अपना समय व्यतीत कर देता। अतएव कल्पना विश्वविद्यालय में होने पर भी सबसे अलग और हटी रही, फिर तो आगे उसकी किसी ने खास सी चर्चा नहीं की।

अब वह कल्पना तो झिझक हटाती हुई सी बोली, "मुझे बहुत दिनों से ज्ञात था कि आपका तबादला यहाँ हो गया है। मैं कई बार आपके पास आना चाहती थी, पर समय ही नहीं मिला। फिर यह भी सोचा कि कौन जाने आप मुझे भूल ही गए हों।"

यह कह कर वह सरल सी हँसी हँसी। उसकी दाँतों की पांती चमक उठी। वह हँसी बरवश मेरे हृदय को झंकारित करने में सफल हो गई। वह हँसी बहुत स्वस्थ लगी। मैंने पहले कभी भी इस लड़की को हँसते हुए तक नहीं पाया था। आपसी बातचीत में हम लोग तो उसे 'गूँगी' कहा करते थे। विश्वविद्यालय के प्रेमी त्रिकोणों की मित्र-मंडली जब कभी आपस में चर्चा किया करते, तो कल्पना कभी कहीं नहीं मिलती थी। उसका जीवन तो एक समानान्तर रेखा की भांति लगता था, जिस पर कोई कोण बनाना आसान सा नहीं होता है। वह उस ओर उदासीन मिली और कोई उसके प्रेमपत्र पाने में सफल नहीं हो सका था। कुछ मूक चातक अपने तक ही प्यासे तड़पते रहे। तथा कई रंगीन बातों को गढ़ कर जीना ही उनको स्वीकार था। फिर भी कोई घटना अनुकूल नहीं पड़ी। कभी-कभी तो लगता था कि तब ही कल्पना किसी के प्रेम-जाल में फँस गई है। किन्तु अंत में वह खेल झूठा निकलता था।

कल्पना ने कभी किसी को दर्द भरे आह की दवा नहीं सौंपी। किसी के प्रेमपत्र का उत्तर नहीं दिया।

तब तो मैंने कल्पना के उस वैराग्य पर कभी नहीं सोचा था। न उसके किसी खास आकर्षण का लोभ ही मेरे मन में उठा था। मैं यह जानता था कि कल्पना का भावी जीवन विश्वविद्यालय की भांति नीरस नहीं रहेगा। वह परिवार के भीतर अपना स्थान बना कर, आसानी से वहां रहेगी। यह बात कहां तक सच निकली होगी, यह तो वही जाने। शायद साधारण किसी कौतूहल के प्रति गृहस्थी में उसका रिझान होना संभावी ही होगा। वैसे मैं उसे भूल चुका था। पहले कभी उसे इतने समीप से देखने का अवसर नहीं मिला था। आगे जीवन में वह कहीं दीख पड़ेगी, इस सब पर मैंने कभी नहीं सोचा था। न किसी ऐसे अनुमान की लालसा ही मुझे थी। वे पिछले साथी, जो कि एक सर्जन की भांति कल्पना की ख्याली प्रतिमा की चीर-फाड़ किया करते थे भी न जाने कहां-कहां होंगे। अन्यथा उनको एक परिपत्र अवश्य भिजवा देता कि वह कल्पना किस नाटकीय ढंग से मेरे पास आई है। स्वयं मैं तो उसका स्वागत करने तक के लिए तैयार नहीं था। वैसे मैं आज भी उसे ठीक-ठीक नहीं पहचान पाता था। उसकी पुरानी विश्वविद्यालय वाली रूपरेखा पर सोचा तो वह आज अधिक खिली हुई मिली। वह तो पहले से अधिक गतिवान थी। उसके व्यक्तित्व में प्राण छलकते हुए दीख पड़े। उसकी बातों में लोच था, गति में नवचेतना और बात-बात में एक ज्ञेय रिझान कूट-कूट कर भरा हुआ था।

मैं उसे टकटकी लगा कर निहार रहा था। वह तो चुपचाप हथेली पर ठोढ़ी टिकाए, न जाने क्या क्या सोच रही थी। उसकी आंखें मुंदी थीं। बालों की कुछ लटें चेहरे पर फैल गईं। उसका काला ब्लाउज खिड़की से बिखरी धूप में चमक रहा था। वह सुनहरे चौड़े पाट की साड़ी पहने हुए थी। कानों में टाप्स् के हीरे झिलमिला रहे थे। उँग-

लियों पर रंग-बिरंगे मणियों वाली अँगूठियां थीं। कल्पना इतनी रूपवती होगी, मैंने इसका अनुमान आज तक नहीं लगाया था! एकाएक मन में एक पगली सी भावना उठी कि क्या कल्पना शादी के अवसर पर इससे अधिक सुन्दर रही होगी। उसके उस निखरे हुए रूप को देखने का लोभ मन में उठा। मैं उसके पति को नहीं जानता हूँ। उसके सम्बन्ध में मेरी अपनी कोई धारणा भी नहीं थी। कल्पना यहां कहां रहती है, इसका कोई ज्ञान भी कब था! वह क्यों इस भांति चली आई है। ये सब अबूझे प्रश्न मन में उठे। वैसे मैं उसके इस व्यवहार पर मुग्ध था। यह मेरा पूर्ण विश्वास था कि कल्पना सरीखी लड़कियां जीवन में कठनाइयों का आसानी से मुकाबला कर सकती हैं। उनका जीवन किसी भी भांति असफल नहीं रह सकता है। यद्यपि मेरा इस ओर अपना कोई अनुभव नहीं था, फिर भी न जाने क्यों मैं कल्पना के जीवन को तोल लेने की निरर्थक सी चेष्टा करने लगा।

एकाएक कल्पना चौंक उठी। वह बिल्ली का बच्चा उसकी गोदी पर बैठने का निरथक सा प्रयास कर रहा था। वह उसे हटा रही थी। तभी मैंने समझाया कि वह पंजे नहीं मारता है। वह फिर भी बहुत सतर्क हो गई। असावधानी से बिल्ली का नाखून लग कर, हाथ पर एक लाल रेखा पड़ गई थी। वह बच्चा तो म्याऊँ-म्याऊँ करता हुआ उसकी गोदी पर बैठ गया था। तथा अपनी स्वाभाविक आदत के अनुसार गुर,-गुर-गुर-गुर करने लग गया। कल्पना उसकी पीठ को सहला रही थी और वह छोटा बच्चा आँखें मूँदे हुए अपनी पूँछ हिला रहा था। कल्पना ने एक बार उसका मुँह उठाया और उसकी आँखों और मुँह को ताकती रही। फिर उसे उसी तरह पड़ा रहने दिया। मुझे कुछ ऐसा सा लगा कि वह अपने से झगड़ रही है। बार-बार उसका चेहरा गुलाबी पड़ जाता था। मुझे उसके हृदय के उस विद्रोह की कोई जानकारी नहीं थी। मैंने पहले कभी उसकी बुद्धि की सराहना की थी। तब तो उसके रूप के

प्रति कोई रुझान मन में नहीं उठा था। वह कल्पना इतनी सुन्दर होगी, इसका सही सा अनुमान आज तक मुझे नहीं था।

मैं हतबुद्धि सा उसे देख रहा था। कोई ठीक बात पकड़ में नहीं आ रहा थी। बार-बार मुझे देख, वह अनायास फिर अपनी दृष्टि नीचे कर लेती थी। मैं क्या प्रश्न पूछूँ, यह समझ में नहीं आया। मैं उस स्थिति को कब समझ पाया था। स्थिति को सुलझाने के लिए मैंने एकाएक नौकर को पुकारा और उसके आ जाने पर चाय लाने को कहा। कल्पना ने तो सरलता से अस्वीकार कर दिया कि वह चाय नहीं पीती है। नवयुग के इस आतिथ्य की उपेक्षा कोई आधुनिका इस आसानी से कर सकती है, यह साहस कल्पना में ही हो सकता है। फिर भी यदि वह विश्वविद्यालय की 'फारवर्ड' लड़कियों में से एक होती, जिनकी करतूतों और प्रेम-पत्रों से लड़के 'गधे' बन जाते थे, तो मैं पिछली घटनाओं पर ही कुछ कह लेता। मैं उस कल्पना को कब ठीक सा जानता-पहचानता हूँ। वह मुझ से सदा दूर रही है। उसके जीवन की छानबीन करनी मुझे अपेक्षित नहीं लगी। अब आज स्थिति आसान नहीं थी। इतने समीप आ जाने पर भी जीवन का फासला दूर-दूर ही सा लगा। वह तो जीवन के दायरे के बिलकुल दूर खड़ी हुई मिली।

कभी तो मैं कल्पना को देखता और फिर उस बिल्ली के बच्चे को। मैं दोनों को ही समझ लेना चाहता था। दोनों ही मुझे समान, अबूझे से लगे। मैं दोनों की किसी भाषा से परिचित नहीं था। मुझे कल्पना भी उस अबोध बच्चे के समान लगी। उसका कोई ज्ञान मुझे नहीं था। पहले मैंने उसकी किसी गति पर सोचा भी नहीं था। अब इस सब से मन को कोई सन्तोष नहीं हुआ। उसके जीवन की वास्तविक किसी घटना से मैं कब परिचित था! वह तो बचपन की भांति गुमसुम बैठी हुई थी; आखों में एक पैनापन था; ओंठ सूखे थे! उनमें

फिर भी एक सजीवता की स्पष्ट सी झलक दीख पड़ी, जिसे समझ लेना आसान नहीं था।

"मैं यहाँ नौकरी करती हूँ।" कल्पना ने फिर आग्रह पूर्वक अपने जीवन के परदों को हटना शुरू कर दिया।

"कहाँ...... ?"

"'...' कालेज में प्रिन्सिपल हूँ।" कह कर वह चुप हो गई। उसका इस प्रकार नौकरी करना ठीक ही लगा। नारी अपने लिए आर्थिक दरजे की मांग कर रही है। उसकी अपनी आर्थिक-स्थिति बनाने वाली बात न्याय संगत है। कल्पना की इस दृष्टि की मैंने मन ही मन सराहना की। वह कम से कम अपनी अन्य पढ़ी-लिखी सहेलियों की भांति किसी गृहस्थी के भीतर केवल एक फर्निचर सी तो नहीं बन गई थी। अपना शिक्षा का सही उपयोग उसने किया है। उस 'टाइप' लड़की के लिए यह उचित था। अब उसकी वह गंभीरता, उसके विचारों की गहनता की प्रतीक लगी।

उस चुप्पी को तोड़ते हुए मैंने पूछा, "शायद आपके पिताजी पुरातत्व विभाग में......... ।"

"जी हाँ; वे वहाँ एक उच्च ओहदे पर हैं। मेरी मां बचपन में मर गई थी। पिताजी ने ही हमें अपने साँचे में ढाला। उनकी लाइब्रेरी की पुरानी मूर्तियाँ, ढांचे, ताम्रपत्र, पाण्डुलिपियाँ तथा और सामग्री, बचपन में भले ही हमारे लिए कौतूहल की बात रही हो, आगे जीवन में वे सब नीरस लगीं। उस पुरातत्व की बातों को सोचते-सोचते हमारे मन में एक गतिरोध सा आ गया था। पिताजी हमें अपने अन्वेषण की बातें सुनाते थे। मिट्टी की छोटी-छोटी कुरूप मूर्तियों का महत्त्व समझाते थे। हम आज्ञाकारी बालकों की भाँति चुप रहते थे। उनके पास फोटो के बड़े-बड़े 'एलबम' थे। उनका पुरातन भले ही सुन्दर रहा होगा, अब तो वे फोटो बहुत कुरूप लगते थे। पिताजी उस अतीत की महानता को सुनाते-

सुनाते गदगद हो उठते थे। हम तो अचरज में से सोचते थे कि पिताजी उनमें कैसे सौन्दर्य पाते हैं। उनकी दिलचस्पी हमारे लिए परेशानी हो जाती थी। पिताजी पुराने जमाने की अजीब-अजीब पोशाकें हमारे वास्ते बनवाते थे। मोहल्ले के लोगों को इकट्ठा करके पुराने कथानकों के नाटक खिलवाते थे। वे भाषा-विज्ञान के पूर्ण पंडित थे। पिताजी मुझसे खुश थे, कारण कि मैं उनकी सब बातों को चाव से सुनती और अपना पूर्ण सहयोग उनकी योजनाओं को पूरी करने में देती थी। उनका ख्याल था कि आगे चलकर मैं उनके अनुकूल निकलूंगी। इसीलिए अपनी खोजों के अवसर पर वे मुझे अपने साथ ले जाया करते थे।"

कल्पना अपने जीवन के चन्द पन्ने बिखेर कर अब चुप हो गई थी। वह कुछ देर चुप रह कर अपने में न जाने क्या सोचने लगी। तभी मैंने पूछा, "आजकल आपके पिताजी कहाँ हैं?"

"मद्रास में।"

आगे किस भांति बातों का सिलसिला जारी रखूँ, इस पर सोच ही रहा था कि वह बोली, "चार वर्ष से हम अलग हैं।"

"चार साल से?"

"हाँ, जब मैंने अपने पसन्द की शादी की तो उनको मेरा यह आचार पसन्द नहीं आया। मैंने परम्परा को तोड़कर दूसरी जाति में शादी की थी। कोई धार्मिक ढोंग न रच कर साधारण समारोह के साथ आमंत्रित मित्रों और स्नेहियों के आगे एक सूत में बंध जाने की घोषणा की थी। पिताजी ने मेरी बात का विरोध नहीं किया था। वे सावधानी से सब कुछ देखते रहे और अंत में हम दोनों को अपने पास बुलाकर आशीर्वाद दिया। मुझे अकेले में बुलाकर तीस हजार का चेक देकर अपने गले लगाया। रुंधे हुए स्वर में बोले कि अब उनका मुझसे कोई नाता नहीं रह गया है। पहले तो मैं बात नहीं समझ सकी। जीवन की नई भावुकता के दौर में बहती रही और एक दिन पाया कि सच ही पिताजी ने मुझसे

सम्बन्ध विच्छेद कर दिया है। जब तक कि मैं उनको मनाने की बात सोचूँ काफी अरसा बीत चुका था। मैं बहुत चिन्तित रहने लगी। किसी भाँति चुपचाप एम० ए० की परीक्षा देकर यह नौकरी स्वीकार करली। मैं पिताजी के हठी स्वभाव से परिचित थी। वे स्वयं कभी मुझे क्षमा करदें, यह संभव है, पर मेरे किसी अनुरोध पर पिघल जावें, यह आसान नहीं है। वे असाधारण व्यक्ति हैं, जो कि हजारों वर्ष पूर्व की मूर्तियों में स्थित मरे व्यक्तियों, उनके फोटो आदि में तक भले और बुरों को अलग-अलग रखते थे। कभी- कभी तो उत्तेजित हो कर कुछ की बुराइयाँ सुनाते थे। जो व्यक्ति मरी आत्माओं तक को क्षमा नहीं कर सका, उससे जीवित व्यक्ति क्या आशा रख सकता है ?"

मैं कल्पना के उस विश्वास पर अवाक् रह गया। वह मूक सी गूँगी मूर्ति, आज सरलता से अपना हृदय खोल रही थी। वह बिल्ली का बच्चा कूद कर चला गया था। कल्पना तो उसी भाँति चुपचाप बैठी हुई थी। आज वह विश्वविद्यालय वाली कल्पना, जिसे समझने की कोई जिज्ञासा कभी मन में नहीं उठी। वह जो कि लोगों के लिए एक अबूझी पहेली थी, आसानी के साथ मेरे जीवन में फैलने लगी। मेरा उसके परिवार की घटनाओं के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं था। अपनी समझ को तोलकर यही जान पाया कि वह यहां नौकरी करती है। संभवतः किसी परेशानी में पड़ कर आई है। अतएव मानवता के नाते उसकी सहायता करना मेरा कर्तव्य था। वह न जाने किस सोच में पड़ गई थी। मैं उसका रूप देख कर दंग रह गया। मैंने इतनी सुन्दर लड़कियां कम देखी हैं। उसके चेहरे से फिर भी एक स्पष्ट सी परेशानी झलक रही थी। वह बार-बार उन निराशा के से घने बादलों को हटाकर ही कुछ कहती हुई लगी। उसके उस सौन्दर्य में एक पीड़ा मिली, जहां कि नारी के जीवन से सुनहरे रंगीन बादल हट जाते हैं। उसके जीवन के स्थायित्व को पहचान लेने में मैं फिर भी असफल रहा।

"आप आफिस कै बजे जाते हैं ?"

"साढ़े ग्यारह तक।"

उसने अपनी घड़ी देखी और फिर कान से लगाई। शायद वह बन्द हो गई थी। उलझन में सी वह बोली, "अभी तो शायद नौ ही बजे होंगे। आप से एक बात कहने के लिए आई थी कि मैंने नौकरी से इस्तीफा दे दिया है।"

"क्यों ?" मैं अनजाने सा पूछ बैठा।

"यहां मेरा मन नहीं लग रहा था। फिर आज मुझे अपने प्राणों का मोह भी नहीं रह गया है। इस अपरचित शहर में आपके अतिरिक्त मेरा और कोई स्नेही नहीं है। पिताजी..., शायद कभी वे मुझे माफ कर दें तो उनके पास चली जाऊँगी। अभी वहां नहीं जा सकती हूँ। पिछले हफ्ते मेरा एक मात्र बच्चा एकाएक रात्रि को बीमार पड़ गया। मैं अकेली थी। मेरे पास कोई नहीं था। वह बिना किसी ठीक सी परिचर्या के मर गया। मैंने पिताजी को 'एक्सप्रेस' तार द्वारा सूचना दी। कोई उत्तर न पाकर मैंने अपना अपमान भुला कर विस्तार से रजिस्ट्री पत्र लिखा कि मैं कुछ महीने उनके पास रहना चाहती हूँ। उसकी पहुँच का उत्तर उनके सिक्रेटरी ने दिया। पिताजी ने स्वयं सहानुभूति के दो शब्द तक नहीं लिखे थे। उनके इस व्यवहार से मैं दंग रह गई। चुपचाप मैंने सारी स्थिति को संभाल लेने की चेष्टा की। एक बार मन में यह बात उठी थी कि आपके पास आकर सब कुछ कह दूं। फिर सोचा कि व्यर्थ आपको क्यों अपनी परेशानियों से उलझा दूं। मैं अकेले ही सारी परिस्थिति से संघर्ष करने के लिए तुल गई। मैं नारी को अबला स्वीकार नहीं करना चाहती थी। आज फिर भी लाचार हो गई हूँ। अन्यथा आपके पास नहीं आती। आज मेरा मन ठीक नहीं है। हृदय में धुंध सा छाया रहता है। मैं अपने को निर्बल पाकर ही आपके पास आई हूँ। किसी दासता की बेड़ी पहनना, मैंने कभी स्वीकार नहीं किया।

आज भी अपने को बलवान बनाना चाहती हूँ। आशा है कि मेरी निर्बलता की आप मखौल नहीं उड़ावेंगे।"

मैंने देखा कि कल्पना की आखें भीज गई थीं। अब वे टप, टप, टप करके बरस पड़ीं। अब उसका चेहरा धुल गया था। उसने साड़ी के छोर से मुंह पोंछ लिया। आंखों पर गुलाबी रंग छाया था। वह कुछ देर तक सिसकती रही। कल्पना इतनी कोमल होगी, इसका कोई अनुमान मुझे नहीं था। अब मैं उसके पिता पर सोचने लगा। किन्तु उनको सही सा पहचान लेना मेरी बुद्धि के परे की बात थी। कल्पना ने जो बातें कही थीं, उससे अधिक कोई ज्ञान मुझे नहीं था। एक दिन कल्पना ने उनके पुराने संस्कारों पर कड़ी चोट मारी थी। मां के मर जाने के बाद पिता ने उसे अपने ढांचे में ढालने की चेष्टा की। उनका विश्वास था कि वह उनकी शिक्षा-दीक्षा को अपनावेगी। अपने अनुकूल न बना सकने के कारण उनको दुःख हुआ। उसके उस विद्रोह के बाद एक सम्भव वैराग्य उठना स्वाभाविक ही था। आज पिता का हठी मन पींजड़े में बन्द पक्षी की भाँति तड़प रहा होगा। किन्तु जो व्यक्ति किसी को क्षमा करना नहीं जानता है! जो आज से हजारों वर्ष पूर्व के ऐतिहासिक व्यक्तियों को उनकी भूलों के लिए माफ नहीं कर सकता है। वह कल्पना के स्नेह के बन्धनों को आसानी से तोड़ने की क्षमता रखता है। कल्पना ने उस रूढ़िवाद के खिलाफ बगावत की थी। परम्परा को मान्य मानने वाला व्यक्ति उस विद्रोह को आसानी से नहीं भुला सकता है।

पिता और पुत्री के उस विरोध पर मैं क्या कह सकता था। मैं असमर्थ सा अपने मन में उस सब पर विचार कर रहा था। कल्पना ने विश्वास के साथ अपना समूचा हृदय खोला था। उसके प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त करना चाह कर भी चुप ही रहा। पिता और पुत्री के उस झगड़े के बीच मैं क्या कहूं, यह मुझे अजीब पहेली लगी। मुझे

कल्पना ने यह कैसा अधिकार सौंपने का निश्चय किया था। यह सच बात थी कि मेरी कल्पना के साथ पूर्ण सहानुभूति थी। उसकी वह शादी वाली बात भी मैंने स्वीकार कर ली। फिर भी उस वातावरण के भीतर जो अभेद सा कुहरा छा गया था, मैं वहाँ भटकने लगा। मैंने उस कल्पना की ओर देखा। वह उदास बैठी हुई थी। मैं उसे बार-बार पहचान लेने की चेष्टा करने लगा। आज तो वह विश्वविद्यालय की परिधि से बड़ी दूर थी। कल संभवतः पिछला कोई साथी मिल जाय और उससे सारी बातें कहूँगा तो वह उलझन में पड़ जावेगा। शायद मेरे भाग्य की सराहना करने का साहस उसे नहीं होगा। तब जो सलोनी कल्पना सब के हृदय पर आसानी से ज्वार-भाटा लाती थी आज अधिक निखरी और गतिशील होने पर भी मृत्यु की भांति कड़ी पड़ गई थी।

अब कल्पना सँभल गई थी। अपना आंचल ठीक तरह से सिर पर रख कर वह सावधानी से बैठ गई। एकाएक उसके गले पर पड़ी हुई सोने की मटरों के से दानों वाली माला हिली, उसकी ठोढ़ी के नीचे वाले बड़े काले तिल पर मेरी दृष्टि गड़ गई। उसकी हाथ की चूड़ियाँ एकाएक बजीं। वे हलके जाफरानी रंग की थीं। अब उसके सम्पूर्ण शृंगार में दुःख की एक स्पष्ट झलक मिली। माँ की वह प्यास जो कभी नहीं बुझ सकती है; पिता का दुलार, जिसमें उसका बचपन पनपा था। आज उस बच्चे ने उसको पागल बना दिया था। अन्यथा शायद वह यहां नहीं आती। उसे जितना पहचान पाया, अब उसे फैला कर, न जाने मैं क्या छानबीन करता ही रह गया। नारी की इस समीपता का आज मुझे नया अनुभव हुआ था। कल्पना ने मेरे हृदय की गाँठ अनजाने खोल डाली थी। सोचता था कि शीघ्र ही उसे गृहस्थी के बन्धन से जोड़ लूँगा। यह कल्पना अज्ञेय ही मुझे जीवन के प्रति सचेत करने में सफल हो गई थी। मैं उसका यह उपकार आजीवन नहीं भूल सकूँगा।

तभी कल्पना बोली, "मैं आज शाम तक कालेज वाला घर छोड़ने का निश्चय कर चुकी हूँ। यही कहने आई थी।"

"क्यों?" एकाएक मैंने जल्दी से प्रश्न पूछ डाला।

"वहां दिल नहीं लगता है। अकेले-अकेले ऊब उठती हूँ। बाग की फूलों से भरी हुई क्यारियों से बच्चे की किलकारियां पाकर मेरी छाती भर आती है। उस सुनसान में मन व्याकुल हो उठता है। बार-बार अपने को नष्ट कर देने की बलवती भावना उठती है।"

कल्पना की भावुकता फूट निकली थी। वह अपने को संभाल नहीं पाई। मैं अवाक् सा नारी की उस निर्बलता पर सोच रहा था। उसका गला भर आया था। वह कहती रही, "मैं आपसे यही पूछने आई थी कि यदि आपको आपत्ति न हो तो मैं एक सप्ताह के लिए आपके यहां रहूँ। इस बीच आप पिताजी को पत्र लिख दीजिएगा।"

कल्पना मेरे परिवार में रहेगी, यह एक आश्चर्यजनक घटना लगी। मुझे किसी सामाजिक कसौटी पर इस बात का उपहास उड़ाने का साहस भी नहीं हुआ। वह कल्पना सदा से किसी न्याय की भूखी नहीं रही है। अपने आर्थिक-व्यक्तित्व के बाद भी नारी के दासता वाले युग-युग से प्रचलित संस्कारों को सुलझाना सरल नहीं लगा। उस कल्पना के विवेक की सराहना करके भी उसके इस प्रस्ताव पर मैं कुछ नहीं सोच सका। उसका पति कहाँ होगा? कल्पना ने उनको पत्र लिखा या नहीं। इसकी कोई चर्चा उसने नहीं की थी। आखिर कल्पना ने उसी व्यक्ति के लिए तो अपने पिता से झगड़ा किया था। लेकिन उसकी वह नष्ट करने वाली भावना, जिसका आभास वह अभी-अभी दे चुकी थी! कल्पना को फिर भी जीवित रहना चाहिए। उसका नष्ट हो जाना अनुचित सा लगा। मैंने उसके उस साहस की सराहना की। वह किसी भी कच्ची चोट को आसानी से सह लेने की क्षमता रखती है, यह जान कर मुझे खुशी हुई। लेकिन वह अपरचित सी कल्पना जितना ही अपना हृदय खोल रही थी, उतना

ही मेरा मन सिकुड़ रहा था। मन में कई-कई विचार उठते थे। मैं कुछ ठीक सा समाधान नहीं कर पाता था।

"आपको क्या कहना है?"

कल्पना ने आँखें ऊपर उठा कर, मुझे एक बार देख कर कहा। मैं उसकी उन खिली हुई आँखों को कुछ देर तक देखता रह गया। अब उसने आखें झुका ली थीं। मानो कि वह मेरा निर्णय सुनने के लिए इच्छुक थी। वह उसी भाँति सिर झुकाए थी। एकाएक हवा के एक साधारण झोंके से उसके सिर पर से साड़ी गिर गई। उसके जूड़े में ठूँसा हुआ लाल गुलाब का फूल खिल उठा। उसके काले-काले बालों की झलक आखों पर पड़ी। उसने तो सावधानी से साड़ी ओढ़ एक किनारी दांतों के तले दबाई।

कल्पना के प्रश्न का उत्तर मैंने देना चाहा, "कल्पना देवी?"

कि वह तो फीकी हँस कर मेरी बात काट कर बोली; "देखिए इसमें उलझन की कोई ऐसी बात नहीं हैं। मैंने अपनी नौकरानी को सामान तैयार करने के लिए कह दिया है। अपना मन पक्का करके ही मैं आपके पास आई हूँ। मैं कितनी दुःखी हूँ। इसकी पूरी-पूरी जानकारी आपको है ही। किसी पर तो जीवन में भरोसा करना ही होता है।"

यह कह कर के कल्पना चुप हो गई। कुछ देर बाद बोली, "आप शाम को कै बजे दफ्तर से लौटते हैं। नौकर तो घर पर ही रहता है। मैं चार बजे तक नौकरानी के हाथ सब सामान टैक्सी पर भिजवा दूँगी।"

"आपके पति!" मैं उलझन में सा पूछ बैठा। यह जानकारी मुझे आवश्यक लगी। ऐसे अवसर पर मुझे कल्पना के पति का उससे दूर रहना उचित नहीं लगा। मैं उनके सम्बन्ध में जानने के लिए भी उत्सुक था। कल्पना ने पति के लिए वह त्याग किया था। पिता के उस विशाल व्यक्तित्व, जहाँ कल्पना पनप रही थी; वहाँ से अपनी ओर खींच लेने

वाला व्यक्ति साधारण नहीं होगा। अन्यथा कल्पना भावना की कोरी पुतली मात्र ही नहीं थी कि साधारण सी भावुकता के प्रवाह में बह जाती।

कल्पना ने तो मेरी उलझन हटा कर, मुस्कराते हुए कहा, "वह सब आपको बतलाऊँगी। हमारा किस्सा लैला-मजनू की भाँति दिलचस्प नहीं है। मैं अपने भाग्य की किसी कसौटी पर जीवन समर्पित करने की पक्षपाती भी कभी नहीं रही हूँ। आप से मुझे कई और बातें करनी हैं। मेरे मन में फूटे हुए ज्वालामुखी का अनुमान आप नहीं लगा सकते हैं। आखिर जीवन में किसी न किसी पर तो भरोसा रखना ही पड़ता है। कल रात भर मैं अपने जीवन में किसी एक ऐसे व्यक्ति को ढूंढ़ रही थी। तभी आप याद आ गए।"

अब वह फिर चुप हो गई। वह बिल्ली का बच्चा म्याऊँ,म्याऊँ, कर रहा था। मैं उसे पकड़ने के लिए उठा तो वह भाग कर मेज के नीचे चला गया। वह चाहता था कि मैं उसे पकड़ने वहीं पहुँच जाऊँ। उसके उस ज्ञान पर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। मैंने पकड़ कर गोदी पर ले लिया। लेकिन वह तो छूट कर मेज पर बैठ गया। मैं सावधानी से उसे देख रहा था।

कल्पना तो एकाएक उठी और बोली, "आपको सूचना देदी है। अस्वीकृति का प्रश्न तो उठता ही नहीं है। आपको सारी स्थिति समझा चुकी हूँ। जीवन में कभी भी ऐसी अवरोध वाली स्थिति आ सकती है, यह मैं जानती थी। मैं अपने को शुरू से बहुत सबल मानती आई हूँ। आज ज्ञात हुआ कि भले ही हम एक नए युग में प्रवेश कर रहे हैं; नए विचार अपना रहे हैं; फिर भी पिछले युग के भावुकता वाले उफान को नहीं बिसार पाए हैं।"

एक बार उसने बिल्ली के बच्चे को पकड़ लिया। कुछ देर तक उसे

अपनी छाती से टिकाए रही उसे खूब सहला कर पूछा, "आप इसे क्या कहते हैं?"

"खुशी।"

नाम दुहरा कर वह हंस पड़ी। उसे मेज पर रख कर बोली, "चलिए आप आशावादी तो हैं।"

और वह चुपचाप बाहर चली गई। कुछ देर के बाद मैंने टैक्सी के 'स्टार्ट' होने की आवाज सुनी।

—मैं बड़ी देर तक दरवाजे पर खड़ा ही रह गया। जब टैक्सी आंखों से ओझल हो गई तो मैं कमरे के भीतर लौट कर चुपचाप टहलता रहा। तभी नौकर आकर बोला, "साब, नहाने के लिए गरम पानी रख दूं?"

मैंने सिर हिलाया और वह चुपचाप चला गया। अब मैं अपने में ही न जाने क्या सोच रहा था कि मेरी दृष्टि मेज पर पड़े कागजों पर पड़ी। एक कल्पना के पिता के सिक्रेटरी का पोस्टकार्ड था और दूसरा कल्पना के नाम तार। मैंने उसे पढ़ा, लिखा था कि सेनिटोरियम में ऑपरेशन टेबुल पर उसके पति की मृत्यु हो गई है।

कल्पना के उस अन्तिम शृंगार पर सोचा और उसके जीवन के अवरोध की स्थिति और गति पर विचार करता रह गया।

शैतान

महेन्द्र कौर पैसेंजर के डिब्बे से उतरी और पूछा, "बाबा, अब तबीयत कैसी है ?

गुरुदत्त तो कुछ नहीं बोला। अब उसके हृदय का बासी घाव दुःखने लग गया था। उसकी कमर टूट चुकी थी। वह जीवन के एक भारी अपमान से तिलमिला उठता था। कभी-कभी तो उसे उन पुरानी घटनाओं पर विश्वास सा नहीं होता था। लेकिन कुछ तो उसके सरल हृदय पर अंकित सी हो चुकी थीं। फिर उसके कानों में अल्लानिवाज की बातें गूँज उठती थीं, "बड़े भाई, जब तक तुम लौटकर नहीं आवोगे, मैं तुमारे खेत, खलिहान, भैंस, बैल, घर, सबकी हिफाजत करूँगा। हम पुश्तैनी से साथ-साथ रहे और आज मजबूरी में अलग-अलग हो रहे हैं। कल को अमन हो जायगा, तो मैं तुमको खत भेज कर बुला लूंगा। देख, अपनी खैरियत भेजते रहना।"

वह उसे बचपन से जानता है। क्या बचपन में रहट के पास वाले खेत पर दोनों ने खेल नहीं खेले थे। या आधी-आधी रात को साथ-साथ बारहसींघों से पकी हुई फसल की हिफाजत नहीं की थी। वह तो कई बार उसके घर पर मसाले में बनी हुई सलजम की तरकारी खाने जाया करता था। पिछले महायुद्ध में दोनों ही साथ-साथ भरती के दफ्तर गए थे।

आज अल्लानिवाज की वे बातें दिलासा कहाँ दे पाती थीं। गुरुदत्त ने एक डकार लिया और मुंह बिचकाया। उसका हृदय घृणा से भर आया। सादिक अल्लानिवाज का भानजा और सुरजीत कौर......!

सुरजीतकौर कपास की सूखी हुई छड़ियों का एक गट्ठा तंदूर में झोंक कर आटा गूंथ रही थी। गुरुदत्त बाहर भैंस के पास बैठा हुआ

भूसी और खली की सानी बना रहा था। तभी महेन्द्र कौर दौड़ी-दौड़ी आई। वह हिरनी की भाँति डरी थी। वह उससे चिमट गई। वह तो थर-थर-थर काँप रही थी। इससे पहले कि बूढ़ा कुछ सोचे, सादिक और उसके साथी कमरे के भीतर पहुँच गए थे। उन्होंने सब चीजें तोड़-फोड़ डालीं। सुरजीत चीखी थी। वे उसे उठाने की चेष्टा कर रहे थे। कुछ मजाक उड़ा रहे थे—ओ बीराँ! ओ बीराँ!! नारी की मर्यादा की जिस परम्परा की रक्षा देश में सदा से चली आई थी, उसके इस प्रकार नष्ट हो जाने पर बूढ़ा काँप उठा।

वे तो महेन्द्रकौर की ओर बढ़े थे कि अल्लानिवाज खांसता हुआ अपनी बन्दूक लेकर वहाँ पहुँचा। वे लड़के उसे चिढ़ाने लगे, "काफिर को बचाने आया है......। अमृतसर के 'शहीदी दल' में भरती होने के लिए गया है बलवन्त। शाला यहाँ होता तो उसकी बोटी-बोटी... !महेन्द्रकौर को हमें दे दो। हम अमृतसर का बदला लेगें......। वे खलिस्तान बनाना चाहते हैं। पाकिस्तान जिन्दाबाद! कायदे आजम जिन्दाबाद!!

लेकिन अल्लानिवाज ने एक गोली ऊपर की ओर छोड़ दी। वे भाग गए। अल्लानिवाज तो भीतर पहुँचा। सुरजीतकौर चुपचाप सोई हुई थी। उसने आत्महत्या करली थी। वह उसका सर अपनी गोदी में लेकर बोला, "गुरुदत्त, क्या इसने मेरी गोदी में अपना सारा बचपन नहीं काटा। आज हम जानवरों से भी गए बीते हो गए हैं। बच्चों में ऐसी नफरत पहले कभी नहीं देखी थी। सुना आजाद हो गए हैं!"

उसका गला रुंध गया और आँखों से आँसू बह कर टप, टप, टप करके सुरजीत कौर के चेहरे पर टपक पड़े थे। वह भी स्वयं इस परिस्थिति से समझौता करने के लिए अपने मन में झगड़ रहा था।

नांद के पास खड़ी भैंस जुगाली ले रही थी। सहन से गौमूत्र की गन्ध आ रही थी। सामने महेन्द्रकौर चारखाना वाले खीस पर बैठी, रोती

हुई बीच-बीच में गहरी सिसकियां ले लेती थी और फिर फूट-फूट कर रोने लगती। तंदूर चुपचाप निर्जीव सा ठंडा पड़ गया था। वह तो चुपचाप खड़ा का खड़ा ही था। यह बात सच थी कि पन्द्रह रोज हुए बलवन्त गांव के कुछ लड़कों के साथ भाग गया था। सुरजीतकौर से कहा था, "हम रणजीतसिंह की औलाद हैं। पुरखों ने इसे बेच डाला था। आज फिर 'पाकिस्तान' वाले इसे हड़प लेना चाहते हैं।" उसे आश्वासन दे गया था कि धानी रंग की ओढ़नी, मूंगिया सलवार और चारखाने का कुतरा लावेगा। काली चूड़ियां, फुँदने...! सुना कि रेशम अमृतसर में बहुत मिल रहा है। वहां मुसलमानों की दुकानें लुट रही हैं।

सच ही सुरजीतकौर मर गई थी। उसकी छाती पर एक छोटी सी छुरी चुभी खड़ी सी थी। जिसके चारों ओर कुरते पर काला-काला खून जम गया था। बाहर दूर विचित्र सा कोलाहल हो रहा था। मकानों के जलने से लपटें उठ रही थीं। गुरुदत्त का हृदय कांप उठा। गांव वालों पर यह क्या शामत आई थी? तभी अल्लानिवाज बोला था, "गुरुदत्त आज शाम को मसजिद का मुल्ला जुमे की नुमाज में सुना रहा था कि हिन्दुओं ने अमृतसर में सैकड़ों मुसलमान औरतों की असमत लूटी है और हजारों लड़कियां भगाई हैं। आसपास के सब गावों के मुसलमानों ने जिहाद के नारे लगाए हैं। कौन हिन्दू, कौन मुसलमान; हम तो हज़ारों सालों से पंजाबी रहे हैं। जरूर किसी दुश्मन ने हमें धोखा दिया है कि हम इनसानियत भूल गए हैं। क्या हमारी सारी कौम मिट जायगी?"

गुरुदत्त अवाक सा सब कुछ सुनता रह गया। अराकान की लड़ाई में जब उसके जवान बेटे के मरने का समाचार आया था तो इसी बूढ़े ने कहा था, "मेरे तीनों बेटे, तेरे हैं गुरुदत्त। पहले तेरे खेतों का काम होगा। गांव कोई शहर थोड़े ही हो गये हैं कि हम आपसी नाता-रिश्ता भूल जाँय।"

लेकिन गुरुदत्त तो बदला लेना चाहता था। उसने अपनी पगड़ी

सँभाली और भीतर से अपनी तलवार निकाल कर ले आया उसकी धार देखी । वह निश्चय कर चुका था कि वह आज सादिक और उसके बदमाश साथियों को इस दुनिया से मिटा कर ही दम लेगा । वह बाहर जाने को था कि अल्लानिवाज फीकी हंसी हंसकर बोला, "तुम पागल हो गए हो गुरुदत्त ! यह क्या नादानी कर रहे हो ? आज ये लड़के तैमूर की तरह अपनी इनसानियत का दिवाला निकालना चाहते हैं । टोपणदास का घर तबाह हो गया है । उसके घर की औरतें बेइज्जत हुईं । गोबिन्दसिंह मारा गया । ये सब हैवान हो गए हैं । मजहब ने सब को रोशनी न देकर आज अंधा बना दिया है । मैं अकेला क्या करूँ ।"

गुरुदत्त चुपचाप लौट कर अल्लानिवाज का चेहरा पढ़ने लगा । इसके साथ उसका कितना पुराना नाता नहीं है ! खेती से पेट नहीं भरता था, तो वे ऊख चूसते हुए रहट के पास वाले पीपल के पेड़ की मोटी टहनियों पर बैठ कर गाया करते थे ।

हल पजाली दी हो गई कुरकी—बेच के खालिया बी
मामला नहिं तरिया—एक वाही दा लाहा की ।

. हल और जुए की कुरकी हो गई है । बीज का अनाज बेच खाया । लगान अदा न हो सका । लाभ क्या इस खेती का ?

......साठ घंटे का सफर करके वह शरणार्थियों की गाड़ी पहुँची थी । महेन्द्र कौर तो उस डिब्बे में बैठी-बैठी ऊब गई थी । सारा डिब्बा गंदगी से भरा हुआ था । उसे बार-बार मतली होने लगती थी । वह रेलगाड़ी से बाहर देखती तो लगता था कि वे किसी नए देश को पार कर रहे थे । वे गांव उतने सुन्दर नहीं थे । गाँव की लड़कियों में उसने वह जीवन भी नहीं पाया था । सारा देश तो बहुत फैला हुआ और सूखा-

सूखा सा लगता था। उसमें वह उनके देश की सी हरियाली नहीं थी। फिर डिब्बे के भीतर भी तो अपरचित लोग थे। स्यालकोट, वजीराबाद गुजरानवाला, शेखूपुरा......! वे सब उनकी ही भाँति बे घरबार के खानाबदोश थे। सब जीवन की एक बड़ी बाजी हारकर थके लगते। औरतें चिड़चिड़ाती थीं और छोटी-छोटी बातों को उठा कर फौजदारी करने पर उतारू हो जाती थीं। लाज और हया को खोकर ऐसी गंदी-गंदी गालियाँ देती थीं कि उसके मन में छी-छी उठती। उस समस्त वातावरण में उसे एक भारी उदासी और निराशा छाई हुई लगती थी। कभी तो लगता था कि बाहर जो खेत फैले हैं, वहाँ जो गाँव है; वहाँ के लोग स्वतंत्र हैं; जब कि वह परतंत्र। भीतर ही भीतर उसका दम घुटने सा लगता था। कभी उन औरतों की बातें सुन कर उसका हृदय भर आता और आखों की पलकें भीज जाती थीं। वह उस सुरजीतकौर, अपने खेत, रहट तथा गाँव की याद करती। लेकिन वह तो महीनों से अपने बाबा के साथ भटक रही है।

उस गाड़ी से वे लोग उतर रहे थे। सबके चेहरों पर मौत और बर्बरता की बनी परछाईं थी। सब थके से थे। सब उदास थे। मानो कि जीवन से बड़ी दूर हों। उनको यह नया देश रुच सा नहीं रहा था। वे भिखारी नहीं थे, अतएव दूसरों की दया पर जीना अखर रहा था। वे तो योधा थे, जिनके परिवारों में सैनिक जीवन की पूर्ण झांकियां मिलती थीं। उनके सैकड़ों नौजवान जापान के खिलाफ लड़ कर मरे थे। लेकिन वे आज अपाहिज थे। बूढ़े और बूढ़ियां इस कलयुग की माया पर सन्न थीं। सोचती थीं कि उनका जमाना ही भला था।

सीमान्त-प्रान्त का एक लांबा अधेड़ अपने तीन बच्चों को मना-बुझा रहा था। वे रो रहे थे। वह उनको बिस्कुट दे कर बुझाना चाहता था। पर वे तो माँ के दुलार के भूखे थे। एक अंधी बुढ़िया अपनी पोती का हाथ पकड़े उतर रही थी। महेन्द्रकौर जानती है कि वे सब अपने प्यारों

को खोकर आए हैं। उस धार्मिक जिहाद की यादगारें उनके चेहरों से प्रतिबिंबित हो रही थीं। वे अपना सर्वस्व खो, जीवन से हार कर यहाँ आए थे। यहाँ की धरती का उनको कोई ज्ञान नहीं है। कुछ अधेड़ औरतें आपस में मजाक करती हंस रही थीं, मानो कि वे उस अथाह दुःख को छुपाने की निरर्थक चेष्टा कर रही हों। उनकी हंसी से एक गहरी वेदना अनायास ही व्यक्त हो उठती थी।

मानवता के वे पुराने बन्धन टूट चुके थे। शरणार्थियों के अलग-अलग नए परिवार सम्भवतः कल बन जाँय। लेकिन उस आशा के साथ वह समझौता नहीं कर पा रही थी। उसे तो अपना गाँव पसन्द था। नूरी उसकी सबसे प्यारी सहेली थी। क्या वह उसे याद कर रही होगी। वह तो उसे चिढ़ाती कहती थी कि दोनों किसी एक ही छैल छबीले जवान से शादी करेंगी। जीवन भर ताकि साथ-साथ रह सकें। वे सुन्दर-सुन्दर गीत गाती थीं:—

बागे बिच केलाई—निकल के मिल बाला
साढ़े वभने वावेलाई—ने निकल के मिल बालो

तू यथा शीघ्र अपने परिवार से निकल आ-और मुझसे भेंट कर, अन्यथा मैं शीघ्र ही बाहर चला जावूँगा और तू पछतावेगी।

उस रात्रि को वह नूरी के साथ सो रही थी। वह वहाँ कैसे पहुँची यह समझ नहीं सकी। नूरी कह रही थी कि वैसा भयंकर अत्याचार उसने कभी न देखा न सुना ही था। वह असहाय है। अन्यथा सादिक तो उसके इशारे पर चलता था। वह चरित्रवान लड़का था। उसने तो उन दोनों को लाहौर ले जाकर बायसकोप दिखाने का वादा किया था। वह कस्बे से दोनों के लिए सुन्दर-सुन्दर चीजें लाया करता था। वहीं इस भाँति हैवान बन गया, यह बात कुछ समझ में ही नहीं आती थी।

सादिक ने शाम को महेन्द्रकौर को कुए के पास देखा था। वह वहाँ रोज की भाँति अपनी सहेलियों के साथ घूमने गई थी। वह अपने साथी के कान में कुछ कह कर वीभत्स हंसी हंसा था। उसकी आंखों से शैतानी टपक रही थी। उसके साथ कई ऐसे लड़के थे, जिनको कि उसने पहले कभी उस गाँव में नहीं देखा था। वह डर कर वहाँ से भाग आई थी। लेकिन घर घर तो सुरजीतकौर पर उन हैवानों ने......! वह घबरा कर बेहोश हो गई थी। अल्लानिवाज ने उसे उठाया था और वह उनके साथ नूरी के घर चली आई थी। नूरी ने उसे सान्त्वना दी थी। सुझाया था कि सादिक आज से उसका शत्रु है। उसने उसकी बहिनों की लाज लुटवा करके देश की शान नीची की थी। वह ऐसे व्यक्ति से सदा के लिए अपना सम्बन्ध विच्छेद कर चुकी है। उसका मन तो सुरजीत के बदले की भावना से तड़प रहा था। क्या सोचा होगा उस बेवश लड़की ने कि सादिक उसके प्रति ऐसी भावना रखता है। वह सादिक जिससे कि गर्व के साथ नूरी ने सुरजीतकौर और महेन्द्रकौर का परिचय कराया था।

बाहर हल्ला हो रहा था। गाँव के शान्त जीवन के बीच एक अन्धड़ आया था। भादों की फीकी अंधेरी रात फैली थी। उसीके बीच जलते हुए मकानों की प्रज्वलित ज्वाला की लाल रोशनी चमक उठती थी। पशु इधर-उधर दौड़ रहे थे। नूरी बता रही थी कि परिवारों के लोग गाँव छोड़ कर भाग रहे थे। हरनाम भाभी तो अपने नवजात शिशु तक को छोड़कर चली गई थी। मानो कि गाँव और उस बच्चे तक से उसका कोई नाता न रहा हो। सच ही स्नेह की सारी डोरियाँ टूट चुकी थीं। गाँव का आपसी भाईचारा मिट चुका था। वह कहती रही कि सुबह को मसजिद में जाकर मुल्ले का मुंह नोच कर पूछेगी कि क्या उसकी कुरानशरीफ इसी तरह नफरत करना सिखलाता है?

तभी एकाएक दरवाजा पीटने की आवाज कानों में पड़ी। लगता

था कि एक बहुत बड़ी भीड़ उस मकान को घेर रही थी। वे न जाने क्या-क्या बक रहे थे। उसके नारों की ध्वनि भीतर कमरों से गूँज उठती थी। अब तो अल्लानिवाज की आवाज कानों में पड़ी। वह गरज रहा था, "अभी अल्लानिवाज जिन्दा है। उसके जीते हुए मनमानी नहीं चल सकती है। वह पहले खुद मरेगा तब उसके मेहमानों पर कोई हाथ उठा सकता है।"

भीड़ में से कोई बोला, "काफिरों को हमें दे दो। हम बदला लेंगे।"

नूरी यह सह न सकी। वह बाहर का बड़ा फाटक खोल, तन कर खड़ी हो गई। बोली, "लो भाईजान मैं आ गई हूँ। महेन्द्र और मुझमें कोई फरक भी नहीं है। चुप क्यों हो गए हो। सुरजीत की रूह गांव के चारों ओर मंडरा रही है।" उसका गला भर आया और वह फूट-फूट कर रोने लगी। फिर रूँधे स्वर में कहा, "सादिक भाई तुमको क्या हो गया है। कब से तुम इन गुंडों के सरदार बन गए। क्या यह शर्म की बात नहीं है।"

"वे काफिर हैं नूरी। उनको हमें सौंप दो। नहीं तो...!"

"क्या करोगे भाई जान। मैं सुरजीज की तरह भूली नहीं। दो-चार को मार कर दम छोड़ूँगी।"

"नूरी!" भीड़ से कई नौजवान दरवाजे की ओर बढ़े थे। "काफिरों को मकान से निकाल दो।"

वे आगे बढ़े थे कि अल्लानिवाज ने एक गोली दाग दी। भीड़ पीछे हट गई थी। अल्लानिवाज गोलियाँ छोड़ रहा था। जोर से बोला फिर, "मैंने फौज में बीस साल तक नौकरी की है। भाग जाओ—भाग जाओ! बूढ़ा हो गया हूँ, हाथ काँपते हैं तो क्या हुआ। मेरा निशान चूक नहीं सकता है। भाग जाओ, नहीं तो एक-एक को उड़ा दूँगा। तुम्हारी शामत आ गई है।"

उसने तो गोलियों से भरी हुई चमड़े की पेटी पहिन रखी थी।

भीड़ छंट गई। नूरी तो चुपचाप दरवाजे के सहारे लुटी सी खड़ी थी। वह अनमनी थी। सामने भीषण ज्वाला सुलग रही थी। उसकी चिंगारियाँ आकाश को छूने का झूठा घमंड कर रही थीं। काली-काली छाया से लोग इधर-उधर जा रहे थे। वह सब कुछ देख रही थी। मन उदास था। तभी किसी ने पुकारा, "नूरी, दरवाज बन्द करके भीतर आना बेटी।"

नूरी में दरवाजा बन्द करके कुंड़ी चढ़ा दी, तो वह बोला, "तू घर पर रहना। मैं, महेन्द्रकौर और गुरुदत्त को गाँव से बाहर छोड़ आता हूँ। यहाँ खतरा बढ़ता ही जा रहा है। हमारा फर्ज है कि इनकी जान बचावें।"

लेकिन वह भी साथ चलने के लिए तैयार हो गई। वह भीतर पहुँची, देखा महेन्द्रकौर चुपचाप सोई हुई थी। चिराग के धुंधले प्रकाश में उसका धुला हुआ चेहरा बहुत सुन्दर लग रहा था। वह बड़ी देर तक उसे निहारती रह गई। फिर चुपके उसका मुँह चूम लिया। उसने अपना सन्दूक खोला और सोने के गहनों को निकाल कर रेशमी रूमाल पर बाँध लिया। महेन्द्रकौर को जगा कर गहने और एक पैनी छुरी दे दी। समझाया कि वक्त पर दोनों काम आवेंगे। वह तो नूरी की गोदी में फफक-फफक कर रो पड़ी थी। तभी अपने बाबा को खड़ी देख कर चुपचाप उठी और दौड़ कर अल्लानिवाज से लिपट पड़ी।

अब वे चारों चुपचाप पिछवाड़े के दरवाजे से बाहर आए। नूरी घर तक साथ चलना चाहती थी। और आज वह बूढ़ा अपनी नातिन के साथ उस धरतीमाता से बिछुड़ रहा था, जिसके खेत उसके घर में अन्न का भंडार भरते थे। जहाँ कि उसने जन्म लिया था। जहाँ की जलवायु से उसका शरीर बना था। जहाँ के समाज में वह पनपा था। और जहाँ वह अल्लानिवाज, उसका बचपन का साथी था। उसके आगे वह सदा से ही अपने परिवार की गुत्थियां सुलझाया करता था। आज

इस संकट के समय में भी वह उसे दिलासा दे रहा था। लेकिन आज के लड़कों को न जाने क्या हो गया है। बलवन्त क्यों अमृतसर भाग गया था। शायद वह अपनी मां के पास मामा के घर गया है।

नूरी चुपचाप महेन्द्रकौर के साथ बढ़ रही थी। जीवन के रंगीन सपने टूट चुके थे। अब वे दोनों साथ-साथ ढोलक पर गीत नहीं गाँवेंगी, महेन्द्रकौर का गला बहुत सुरीला था। लेकिन जो यह बवंडर आया, उसने तो जीवन के टुकड़े-टुकड़े कर सबको अलग-अलग कर दिया था। हजारों वर्षों पुराना गाँव का समाज टूट चुका था। अब तो एक नए समाज का निर्माण हो रहा था, जो कि घृणा और अन्धविश्वास की भावना से उठा है। और सच ही वह साधारण शहरों वाला दंगा भी नहीं था। वह तो धरतीमाता को चीर रहा था। एक जाति ने दूसरी जाति को मिटाने का भार उठाया था। उसका स्थायित्व फिर भी एक धोखा लगता था। पंजाब के दो टुकड़े हो गए थे। गांव सुलग रहे थे। पंजाब की छाती से खून की धारा बह रही थी। वहां की निर्मम हत्याएँ, मानवता के सदियों पुराने कोमल बन्धनों को तोड़ने पर तुली थीं। लाखों परिवार उजड़ चुके थे।

गुरुदत्त वह सब समेट सा नहीं पा रहा था। अनायास ही यह सब हुआ। शहरों से वह आंधी उठी थी। वह कब जानता था कि उसका प्रभाव उन पर भी पड़ेगा। अब वह तो फसल से भरे हुए खेतों के बीच से गुजर रहा था। एक बार उसने उसकी पकी बालों को चूम लिया। नूरी और महेन्द्रकौर तो उस फसल की पकी बालों को अपनी बांहो से समेट कर छाती से चिपका रही थीं। गाँव पीछे छूट गया था। जंगली पक्षी उनकी आहट पाकर इधर-उधर भाग रहे थे। अल्लानिवाज बता रहा था, "गुरुदत्त यह आग की चिंगारी बहुत पुरानी है। जब हम भरती के दफ्तर में गए थे तो एक गांव के होने पर भी तू जाट रेजीमेन्ट में लिया गया था और मैं बिलोची। हमें समझाया जाता था कि मुसलमानों

के पास सल्तनत थी। अंग्रेज उनके दोस्त हैं। हिन्दू बुजदिल होते हैं। वह चिंगारी गोरे फैलाते रहे। लड़ाई की तबाही के बाद सोचा था कि अब अमन-चैन से रहेंगे। पर पीरइलाही सरीखे लोग यह क्यों चाहने लगे। ये हमारे दुश्मन हैं। ये हमेशा गोरों के दोस्त रहे हैं।"

"पीरइलाही! जिसके बच्चे को मैं अपने कंधे पर दस कोस लाद कर कस्बे के डाक्टर के पास ले गया था?"

"वहीं-वही! जो कि हँस-हँसकर वक्त जरूरत पर काफी सूद लेकर हमें रुपया कर्जा देता है। वह खूब शराब पीता है और नुमाज भी पढ़ता है। वही जिसकी निगाह में गरीबों की बेटियों की लाज पैसे से खरीदी जा सकती है। वही परसों से गांवों-गांवों में अपनी जीप गाड़ी पर घूम फिर कर नफरत की इस आग को सुलगा रहा है। आज वह मुसलिम-नेशनल-गार्ड वाला बन गया है। कल तक कचेहरी में झूठी गवाही देता था। सुना कि ये लोग हिन्दुस्तान पर हमला करने की सोच रहे हैं। अजीब मजाक है। ये ही दंगे करवा कर अपना खजाना भर रहे हैं।"

गुरुदत्त अवाक सब कुछ सुन ही रहा था। अल्लानिवाज कह रहा था, "तुम हिन्दोस्तान जा रहे हो गुरुदत्त। वहां भी नफरत की आग जरूर सुलग चुकी होगी। तुम जाकर उसे बुझाना। कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान! हम सब एक ही अल्लाह के बेटे हैं। हम किसान हैं। हमारे खेत, हमारे हल-बैल, खलियान सब नष्ट हो चुके हैं। हमें फिर नए सिरे से सारा सरजाम करना होगा। दिल छोटा न करना गुरुदत्त। मुझे पूरा भरोसा है कि तुम जल्दी लौट कर आओगे और हम रावी के खादिर में शिकार खेलने जावेंगे।"

न जाने क्यों नूरी का दिल छोटा हो रहा था। उसने इस महेन्द्रकौर को चेतना आते ही पहचाना है। पहले उससे साधारण जान-पहचान भर थी। पर एक बार महेन्द्रकौर हीर बनी थी और वह रांझा। दोनों ने अपना-अपना पार्ट इस खूबी से अदा किया था कि बड़ी बूढ़ियां तक हँस

पड़ी थीं। तब दोनों बहुत छोटी थीं। लेकिन उसके मामा का लड़का सादिक! वह उसे जीवन से भी अधिक प्यार करती है। महेन्द्र-कौर को चुपके बता चुकी थी कि उसी से शादी करेगी। सुरजीतकौर भी उस भेद को जानती थी। आज उसका विद्रोह उमड़ पड़ा। वह उस खूनी सादिक को सदा के लिये भूल जाना चाहती है।

फिर भी सादिक में एक आकर्षण था। वह बड़ा मसखरा था। एक बार कस्बे से एक खोंचे वाले को पकड़ लाया और इन तीनों को बैठा कर चाट खिलाई थी। सुरजीतकौर ने पूछा था, "भाईजान, यह सब किस लिये है!"

"नूरी से पूछना!" वह खिलखिला कर हँस पड़ा था और उधर नूरी का चेहरा गुलाबी पड़ गया था। पर सुरजीतकौर ने भी चुटकी ली, "तब तो हमारे लिये भी सालू लाना पड़ेगा। हमारी सब सहेलियों की दावत करनी होगी। महेन्द्रकौर ने वादा करवाया था कि वह एक सुन्दर माला और सलवार-कुरता लेगी। आगे सादिक उनको अपनी नई-नई योजनाएँ सुनाया करता था। उसके बाप का इरादा तो है कि कस्बे में एक बिसौती की दूकान खोली जाय। तभी एक दिन वह 'बच्चों की रेजीमेन्ट' में भरती होकर जालंधर चला गया था। लड़ाई के समाप्त होने पर लौटा तो उसकी बड़ी-बड़ी मोछों को देख कर तीनों खूब हँसी थीं। अब वह गबरू जवान हो गया था और फौज में अफसर बनने के परवाने मिलने का बाट जोह रहा था। वह उन तीनों को सुनाता था कि उसे एक अच्छा बंगला मिलेगा। कम से कम वह जमादार होगा। फिर तीनों को मिलीटरी गाड़ी में खूब घुमावेगा। नूरी तो मजाक उड़ाती थी, "तुम तो बस बमपुलीस के दरोगा बन सकते हो। अपनी गप्पें किसी और को सुनाना।"

कभी वह कैन्टीन से बिस्कुट के डिब्बे लाता था या अनन्नास; आडू आदि फलों के। तीन-चार बार वह मछलियों के डिब्बे भी लाया था।

महेन्द्रकौर को वह कागज के लिफाफे पर अलग से चाकलेट, टॉफी, लेमन ड्राप लाकर देता था। तीनों खूब खाते थे और सुरजीत ने वादा किया था कि जिस दिन वह अफसर बनेगा, तीनों मिल कर उसे दावत देंगी। रात भर नाचने-गाने का विशेष प्रोग्राम होगा। एक अच्छी पार्टी की जायगी।

कभी-कभी सुरजीतकौर नूरी से सन्देह प्रकट करती थी, "नूरी, इन फौजियों का कोई भरोसा नहीं है। कहीं किसी शहर की लड़की के नाज नखरों में फँस गये तो तुझे भूल जावेंगे। तू तो बावली है।"

नूरी इसका उत्तर देती थी कि सादिक ऐसा लड़का नहीं है।

नूरी का वह सुपना टूट चुका था। आज तो वह महेन्द्रकौर को सदा के लिए विदा कर रही है। कौन जाने भविष्य में कभी वह उसे मिलेगी भी या नहीं। वह सुन चुकी थी कि लाखों की तादाद में हिन्दू पूर्वी पंजाब की ओर जा रहे हैं और हिन्दुस्तान से भी लाखों लोग इधर आ रहे थे। वह उस स्थिति को कब समझ पाई थी? सादिक ने सुनाया था, "उनके लाखों भाई हिन्दू साहूकारों के कर्जदार हैं। आगे अब इनको हिन्दुओं की गुलामी नहीं करनी पड़ेगी। पाकिस्तान की सारी जमीन मुसलमानों में बांट दी जायगी। अब किसी को खाने-पीने और पहनने की तकलीफ नहीं होगी। ये हिन्दू तो गोरों से भी बुरे थे।"

नूरी सुनती थी; सुनती ही रहती और सादिक उत्तेजित होकर कहता था कि वह एक-एक हिन्दू को मरवा कर दम लेगा। वह कभी तो गांव की हिन्दू लड़कियों की सूची बना कर कहता था, "काफिरों ने अमृतसर में मुसलमान औरतों का नंगा जलूस निकाला है। हम उनकी औरतों को बेइज्जत करके बदला चुकावेंगे।

नूरी समझाती थी कि वह सब झूठ है। वह उससे झगड़ पड़ती।

थी। पर सादिक और उसके नौजवान दोस्त तो मजाक उड़ाते थे कि वह भी हिन्दू हो गई है। वह विनती करती थी कि औरतों पर हाथ उठाना बुजदिली है। लेकिन वे सब हँस पड़ते थे। वह उसके उस व्यवहार पर रूठ कर चली जाती थी। आगे सादिक उससे दूर सा हट गया। वह रात-दिन मसजिद में ही रहता था। वहीं गांव और कस्बे के नवयुवक इकट्ठा होते थे। वह कई बातें सुनती थी, पर विश्वास नहीं होता था। वह तो यह सुन कर दंग रह गई थी कि सादिक ने सुरजीतकौर पर हमला किया था। उसने वादा किया था कि आजीवन वह उसका मुँह नहीं देखेगी।

वे गांव से बड़ी दूर निकल आए थे। दूज का चांद चमक रहा था। आकाश पर तारे टिमटिमा रहे थे। अल्लानिवाज कह रहा था, "गुरुदत्त सुना कि आगे चार-पांच मील की दूरी पर जो पड़ाव है, वहां हिन्दू जमा हो रहे हैं। वहीं तुम चले जाओ। लो यह बन्दूक ले लो। भाई ऐसे दिन देखने भी हमारी नसीब में लिखे हुए थे। आ बेटी महेन्द्रकौर, आ-आ एक बार तुझे प्यार कर लूँ। मुझे भूल मत जाना बेटी। मैं तेरे लिए डीलों का अचार डलवा लूँगा। जा बेटी यह बूढ़ा दुआ देता है कि तू खुश रहे। नूरी गुरुदत्त को पहचान ले। बचपन में तुझे निमोनिया हुआ था तो इसी ने सारा इन्तजाम किया था। हम सब तो हार गए थे।"

नूरी की आंखों से झर-झर-झर करके आंसू टपक पड़े। वह महेन्द्र कौर से लिपट पड़ी। बूढ़ा गुरुदत्त अल्लानिवाज के कन्धों पर दोनों हाथ टिकाए हुए उसकी आंखों में कुछ ढूँढ़ रहा था। फिर वह आगे बढ़ा और उसने नूरी का चेहरा एक बार ऊपर उठा कर उसे चूम लिया। फिर सोने की माला ओवरकोट की जेब से निकाल उसे पहना कर बोला, "सुरजीत नहीं रही बेटी। तू तो है। मेरी आज भी दो बेटियां हैं।"

ठंडी पूरबी हवा चल रही थी। खेतों में खड़ी फसल से सरसराहट हो रही थी। कहीं दूर सा कोई पक्षी अजीब स्वर में बोल रहा था। गुरुदत्त

चुपचाप आगे बढ़ रहा था और उसके पीछे-पीछे महेन्द्रकौर जा रही थी। कभी उसकी सिलवार किसी कांटेवाली झाड़ी से उलझ जाती था। उसकी ओढ़नी हवा में उड़ रही थी। उसका हृदय कांप रहा था। खुले मैदान में ताड़ के लम्बे खड़े पेड़ों को देख कर कभी-कभी वह डर जाती थी और पूछती थी कि वह क्या है ?

नूरी बड़ी देर तक उन दोनों को जाते हुए देखती रही। जब वे आगे फैले हुए घने अन्धकार में खो गए, तब भी वह आंखें फाड़-फाड़ कर उनको ढूँढ़ती सी रही। तभी बोला अल्लानिवाज, "मैं बूढ़ा हो गया हूँ नूरी। आज मेरा दिल टूट गया है बेटी। गुरुदत्त से यह आखरी मुलाकात थी। बेटी वे काफिर नहीं हैं। मैं उनको पहचानता हूँ।"

"बाबा लौट चलें। उठो अब।"

लेकिन वह बूढ़ा तो बोला, "कहां लौट कर जाऊँ—गांव में। वहां मेरा क्या है बेटी। मैं वहां लौट कर अब नहीं जाऊँगा। वह देख सुरजीतकौर की रूह। वह मुझे बुला रही है। मुझे वहां जाना ही होगा। सुरजीत कौर ! मैं आ रहा हूँ बेटी।"

नूरी अवाक सी सब कुछ देख रही थी। बूढ़ा चुपचाप थक कर वहीं भूमि पर लेट गया था। उसने तो एकाएक बड़ी देर तक खाँस कर तीन-चार हिचकी लीं और मर गया। वह बड़ी देर तक चुपचाप उसके पास बैठी रही। उसके पांव जम रहे थे। उसे नींद आ रही थी। वह उसकी छाती पर सिर रख कर चुपचाप लेट गई। सुबह एक बटोही ने देखा था कि वहां गिद्ध मंडरा रहे थे।

सादिक आया, पर नूरी को उठा नहीं सका। सादिक को तो ऐसा लगा कि एक बार उसने अपनी आंखें खोली थीं और फिर नफरत के

साथ सदा के लिए मूँद लीं। उसने लोगों को बताया था कि गुरुदत्त ने उन दोनों को गोली मार दी और खुद भाग गया है।

आज गुरुदत्त चुपचाप स्टेशन पर खड़ा था। उसके साथ सैकड़ों शरणार्थी पहुँचे थे। उनको क्या-क्या नहीं सहना पड़ा था। उस रात्रि को वह महेन्द्र कौर के साथ उस बड़े पड़ाव पर पहुँचा था। वहां हजारों नर-नारी जमा थे। फिर वे एक काफिले के साथ हिन्दुस्तान की ओर रवाना हुए थे। राह में सशस्त्र जत्थों ने उन पर हमला किया था। फिर भी वे एक अपरचित देश की ओर बढ़ रहे थे। उनके मन में पीड़ा थी। उसे अपना देश, अपना खेत, खलिहान याद आ रहा था। उसने स्टेशनों, खेतों, सड़कों पर मुरदे और मासूम बच्चों की लाशें देखी थीं। वह भी तो अपने कई साथियों से सदा के लिए बिछुड़ चुका है। उसका मन भर आया। सोचा कि क्या वह कभी वहां लौट कर भी जावेगा?

महेन्द्रकौर देख रही थी, हजारा से आए हुए उस अधेड़ को। वह अपने बच्चों को समझा-बुझा रहा था कि उनकी मां जल्दी आने वाली है। उसे भी अपनी मां की याद आई। उसका चेहरा मुरझा गया। उसके ओंठ इस यात्रा के बाद फट गए थे। सारे प्लेटफाम पर एक अजीब सी मायूसी छाई हुई थी। दो अधेड़ पंजाबी औरतें तो किसी बात पर झगड़ रही थीं और अब गाली-गलौज पर उतारू हो गई थीं। उसने बच्चे के रोने की आवाज सुनी। वह उस दुबली-पतली युवती की ओर बढ़ी। पिछले पड़ाव पर आधी रात को वह बच्चा हुआ था। उसे भी जच्चा और बच्चे की रखवाली में बहुत परिश्रम करना पड़ा था।

अब वह चुपचाप सामने देख रही थी। वहां एक गाड़ी खड़ी थी। उसमें मुसाफिर चढ़ रहे थे। वह फेरी लगाने वालों को देखने लगी।

वह तो एक नए देश में अवाक सी खड़ी थी। तभी उसने देखा कि नूरी की तरह भी एक लड़की वहां खड़ी है। वह अनजाने उधर बढ़ गई। पुलीस वाले उसकी तलाशी ले रहे थे। कुछ नौजवान खड़े हुए कह रहे थे, "यह फूल तो हिन्दुस्तान में रखना चाहिए, नहीं तो हम यहां जिन्दा कैसे रहेंगे।"

वह मोटा दरोगा जिसकी तोंद में पन्दरह-बीस सेर चरबी जमा होगी, पान चबाता हुआ कहने लगा, "भाई हम तो सरकारी नौकर हैं। हमारे हाथ की बात होती तो दो-चार को अपने ही घर डाल लेते। सरकार तो आप लोगों की है।"

महेन्द्र कौर ने देखा कि उसकी आखों में वही शैतान बैठा था, जो सादिक की। उसे भारी धक्का लगा। सोचा फिर उसने कि क्या सब लोग पागल हो गए हैं। नारी के इस अपमान को वह सह न सकी। चुपचाप अपने बाबा के पास लौट आई। उसे तो ऐसा लग रहा था कि सुरजीतकौर जिसे वह नारी जाति को ममतामई प्रतीक मानती है, उसी का अपमान फिर हो रहा था।

वह फफक-फफक कर रो पड़ी।

इन्द्रधनुष

नौरतू ने एक बार दरवाजे से बाहर नजर डाली और भीतर आकर चुपचाप सिर पर बोरी डाल कर, अब बाहर खड़ा हो गया। एक अच्छे वैज्ञानिक की भाँति चारों ओर देखकर बोला, "मंगलू, आज दिन को आसमान साफ रहेगा। उठ, आलसी न बन।"

श्रावण का महीना। आकाश पर काले-काले घने बादल उमड़-घुमड़ रहे थे। मेह की तेज झड़ी लगी थी। कुहरे में देवदारु, बाँज, बुराँश रांगारासो आदि के पेड़ किसी सुफेद धरती पर चित्रित से लगते थे। चारों ओर सन्नाटा था; पर बीच-बीच में बादलों की गर्जना कानों में पड़ती थी। यदा-कदा पृथ्वी कंपित हो उठती। मकानों की छतों पर से पानी की धाराएँ सी-सी-सी करके धरती पर टपक रहीं थी।

मंगलू को पहले तो विश्वास नहीं हुआ, फिर भी वह उठ बैठा। चूल्हे पर राख के नीचे दबे हुए उपले को हटा, उस पर नया उपला चूर कर डाल दिया। फिर चारों ओर से तीन-चार उपलों से ढक कर उसे फूँकने लगा। अब सारा कमरा धुएँ से भर गया। उसकी आँखों से आंसू की धारा बहने लगी। बटलोई पर दो गिलास पानी डाल कर उसे चूल्हे पर चढ़ा दिया। लकड़ी के पुराने सन्दूक पर से गुड़ की कई छोटी-छोटी डलियाँ निकाल कर उस पानी में छोड़ दीं और चूल्हे पर बांज की लकड़ियाँ लगाकर आग फूँकने लगा। गीली लकड़ियाँ कठनाई से जलीं और कमरे के भीतर काला-काला कड़ुआ धुआँ भर गया। पहले मिट्टी का तेल आसानी से प्राप्त हो जाता था, अतएव उसे लकड़ियों पर उड़ेल कर आग जलाने में कोई कठनाई

नहीं होती थी। वहाँ तो कभी-कभी सात-सात, आठ-आठ दिनों तक आसमान साफ ही नहीं होता है। इधर वे चूल्हे के ऊपर लकड़ी का एक 'टांड' बनाने की बात सोच रहे हैं। जिस पर कि गीली लकड़ियां रख देंगे व वे चूल्हे की आंच से आसानी के साथ सूख जावेंगी। डाकखाने के तार-जमादार से वे मोटे-मोटे तार मांग कर ले आए हैं तथा पास के जंगल में दो फांकों वाले चार पेड़ भी काटने के लिए छांट चुके हैं। इस मेह के बन्द होते ही वे इस काम को बिना किसी ढील ढाल के शुरू कर देंगे। पहले लकड़ी जलाने की समस्या चीड़ की गोंद भरी लकड़ी के टुकड़ों से सुलझ जाती थी। वे उसे ऐसे वक्त के लिए जमा रखते थे। पर इधर तीन-चार साल से जंगलात वालों ने चीड़ का जंगल 'नई पौध' को बढ़ाने के लिए बन्द कर दिया है। जंगल की रखवाली के लिए एक 'पतरोल' रहता है, जो कि बहुत हरामी है। एक बार वे दोनों रात को चोरी करके चीड़ का एक पेड़ काट करके ले आए थे, किन्तु पतरोल और गाँव के मुखिए ने मिल कर उनके घर की तलाशी ली और चार रुपया दंड स्वरूप देने पर विवश कर दिया। अन्यथा जेल भेज देने की धमकी दी थी। उन दोनों ने भी उसे चेतावनी दे रखी है कि वे इसका बदला किसी न किसी अवसर पर अवश्य ही चुकावेंगे।

नौरतू अब चुपचाप सामने वाली क्यारी पर से हरे पत्तों वाली तरकारी चुनने लगा। कुछ देर के बाद उसे बरसाती पानी से धोकर भीतर ले आया। इस बीच मंगलू ने बटलोई के उबलते हुए पानी में चाय डालकर उसे खूब पकाया। फिर दो गिलास भर लिये। अब दोनों उसे पीने लगे। सुबह-सुबह दूध मांगने के लिए कहीं जाना अनुचित लगा। वे निकट भविष्य में दो-तीन बकरी पालने की बात सोच रहे हैं। जिससे समय-असमय पर दूध मिल जाया करे।

चाय पी कर नौरतू ने कड़ाही चूल्हे पर चढ़ा कर उसपर तेल छोड़

दिया और मिर्चें चूर कर भून लीं। फिर हरी तरकारी उसमें छोड़ी और बड़ी देर तक उसे छौंकता रहा। अब नमक डाला और उसे तवे से ढक कर बोला, "जल्दी खिचड़ी बनालें। कौन रोटी का झमेला मोल ले।"

लगभग एक घंटे के बाद दोनों तैयार हो गए और जोर से चिल्लाए—गाएँ खोलो! गाएँ खोलो!!

गाय चराने वाले इन दोनों लड़कों की आवाज गाँव के सब घरों तक पहुँच गई। औरतें जल्दी-जल्दी गाय दुह कर अपने पशुओं को मुख्य सड़क की ओर खदेड़ने लगीं। उन दोनों ने सिर पर बोरियां इस भांति डाल रखी थीं कि वे नोकीली टोपी की भाँति सिर को ढक कर नीचे पीठ तक पहुँच गई थीं। दोनों ने अपने पुराने कम्बल बगल के नीचे दबा रखे थे। हाथों में पतली-पतली छड़ियां थीं। नौरतू एक पोटली में कुछ चबेना बाँधे हुए था और उसका टूटा हुआ पलटनी बूट कीचड़ में छप-छप का शब्द कर रहा था। मंगलू नंगे पांव था। वह नौरतू की भाँति किसी परिवार से अभी तक जूता पाने में असफल रहा है। उसका कम्बल अवश्यमेव कुछ अच्छा है। वह साहुकारों के परिवार की बहू ने उसे दी है। एक बार उनकी गाय जंगल छूट गई थी और मंगलू उनके नौकर के साथ रात को उसे ढूंढ़ कर ले आया था। वह बहू के मायके की विलायती नसल की गाय थी, जो कि प्रति दिन सात-आठ सेर दूध देती थी।

मंगलू सब परिवारों की गाएँ पहचानता है। धौली, मंगलू, बैसाखी नर्वदा, भागीरथी आदि उनके नाम हैं। किसी परिवार की गाय न पहुँचने पर वह नौरतू को भेज कर कहलाता है कि उनको ऐसी लापरवाही नहीं करनी चाहिए। भविष्य में उनको कोई सूचना नहीं दी जायगी। वे वक्त से गाय खोल कर पहुँचा दिया करें।

आज कई दिनों के बाद गाएँ खुली थीं अतएव कई परिवारों में

उनको स्वयं ही जाकर पशुओं को खोलना पड़ा। गोबर, गोमूत्र, कीचड़ आदि से उनके पाँव सन गए। गाँव के लोग उस रास्ते की अधिक परवाह भी तो कब करते हैं। वह खासा चमपुलीम का रूप ले लेता है।

"मंगलू! मंगलू!!"

एक अधेड़ स्त्री ने उसे पुकारा। वह पास आकर बोली, "सरस्वती की तबीयत ठीक नहीं है। न जाने थनों पर क्या हो गया है। हाथ तक नहीं लगाने देती है। बाछी को लातें मारती है।"

मंगलू छोटा-मोटा डाक्टर भी है। उसने जाकर थनों की परीक्षा ली और बोला, "चेचक निकल आई है। काला जीरा और गुड़ खाने को दीजिए। थनों को गरम पानी से सेंक कर थोड़ा दूध निकाल लीजिएगा, ताकि सूख न जाय। बाछी भी तो बीमार है। इसके गले पर भी दाने हैं। इसे दूध मत पीने दीजिए, कभी-कभी तेल पिलाइए। यह तो बहुत सुस्त हो गई है।"

यह कह कर वह आगे बढ़ गया कि गोविन्द सिंह की बहू ने पूछा, "मंगलू भैया, हमारी गाय कब तक ब्याहेगी?"

"बैशाख तक। आजकल आप अन्न खिलावें। नमक भी खाने को देती हैं या नहीं।"

इस प्रकार के प्रश्न तो प्रति-दिवस ही सुनने पड़ते हैं। जब गाय के खुरों वाला रोग फैलता है तो बड़ी परेशानी होती है। उन दिनों रोज चार-पाँच गायें मर जाती हैं। डाक्टर वहाँ से बीस मील दूर रहता है। अतएव ऐसे अवसर के लिए मंगलू अपने पास फिनाइल और मिट्टी का तेल रखता है। वह उसे घाव पर डाल देता है। वहाँ जो डंगर डाक्टर कभी-कभी आता है, वह उनके इस व्यवहार से सन्तुष्ट नहीं है। वह चेतावनी दे चुका है कि ऐसे रोगों की 'रपट' उसके दफ्तर में जरूर भेज दी जानी चाहिए।

अब वे साहुकारों के मोहल्ले से होकर गुजर रहे थे। उनके परिवार की छोटी बहू ने उनसे कहा कि रात की बची रोटियां ले जाँय। वे बड़े घर की बेटियां हैं और मेहरबानी करके बचा-खुचा खाना इन लोगों के लिए संवार कर रख लेती हैं। ये दोनों उनके कृतज्ञ हैं। वे और औरतों की भांति उनको गालियाँ नहीं देती हैं। इसके विपरीत उनका व्यवहार बहुत शिष्ट है। इसीलिए वे स्वयं उनकी गौशाला से गाएँ खोल कर ले आते हैं। नौरतू रोटियाँ बाँध रहा था तो वह बोली, "कल से बैल के नाम पर जोंक बैठी हुई है। शायद नौकर उसे बांज के जंगल वाले झरने पर पानी पिलाने के लिए ले गया था।"

वह एक बार उस बैल को देखने के लिए भीतर गया तो पाया कि दो बड़ी-बड़ी जोंकें बार-बार बैल की नाक से निकल रही थीं। वह फुफकार कर नथुने के भीतर अपनी जीभ डालता था। नौरतू जोंक पकड़ने में विशेषज्ञ है। वह बैल के पास गया और बैल के माथे को अपने नाखूनों से खुजलाने लगा। तभी एक जोंक बाहर निकली तो उसने उसे अपनी खाकी कमीज से पकड़ कर बाहर खींच डाला। एक बड़ी सी जोंक नीचे पत्तों पर गिर पड़ी। पर दूसरी चेष्टा करने पर भी पकड़ में नहीं आई तो वह बोला, "आप आज दिन को धूप निकलते ही बाँध दीजिएगा। पानी न पिलाइएगा। फिर जोंक पकड़ में आ जावेगी।"

वे गांव के बीच वाले रास्ते से अपनी गाएँ हांकते हुए ले जा रहे थे। आज कुल पचीस गाएँ, दस बड़े बछड़े और अठारह भेड़-बकरी थीं। कुछ परिवारों ने बरसात के कारण अपने पशु न भेजे, कई वक्त पर नहीं खोल सके। वे भेड़-बकरी बहुत साथ ले जाने के पक्षपाती नहीं हैं। जंगल में बघेरा रहता है और उसके लिए इनका शिकार करना आसान होता है। यह झंझट की बात है। आगे की पगडंडी से वे चुपचाप उतर रहे थे। नौरतू मोछंग बजाने का शौकीन है। अतएव उसने उसे निकाला और चुपचाप बजाने लगा। चारों ओर बांज और

देवदारु के पेड़ थे। नीचे भूमि पर बांज के सूखे पत्ते बिछे हुए थे। यहाँ पर एक झरना है। अतएव बहुत नमी रहती है। कुहरा बार-बार मुँह पर थपेड़े मार रहा था। अभी तक मेंह की हल्की फुहार पड़ रही थी। कुहरा सांस के साथ भीतर फेफड़ों तक पहुँच रहा था।

एकाएक नौरतू मोछंग बंद करके बोला, "मंगलू नमक होगा।" वह ढ़ोर के पीछे था। मंगलू रुक गया और वास्कट की जेब पर से नमक की पुड़िया निकाली। इस बन में बहुत जोंक रहती हैं। वह बड़ा विचित्र जन्तु है। केंचुले से छोटा भले ही हो, पर खून पीने का बड़ा शौकीन है। चुपके पांव अथवा शरीर के किसी अंग से चिपक कर खूब खून पीता है और पेट भर पीने पर स्वयं ही छूट जाता है। जब चिपकता है तो इसका किसी को ज्ञान तक नहीं होता।

उसके पांव पर दो बड़ी-बड़ी जोकें चिपकी हुई थीं। मंगलू ने उन पर पिसा हुआ नमक बुरका तो वें सिकुड़ कर चुपचाप भूमि पर गिर पड़ीं। उसने उन पर और नमक छिड़का तो वे अपनी कोमलता के कारण खून बन कर पिघल गईं। नौरतू के पांव से खून बह रहा था। मंगलू ने चुपचाप चकमक पत्थर और लोहे के टुकड़े को रगड़ कर, उनकी चिंगारी से कपास सुलगा ली और उससे उन स्थानों को दाग दिया, जहां से खून बह रहा था। वह आसानी से बन्द हो गया।

नौरतू हँस कर बोला, "विचित्र जीव है। रत्ती भर पता नहीं लगता कि चिपक गया है।"

तेज़ हवा चल रही थी और कुहरा छनने लगा। धीरे-धीरे हरी भरी पहाड़ियां दीखने लगीं, जो कि मेंह बरसने के बाद धुली हुईं, अपूर्व लग रही थीं। दूर तक कई पहाड़ों की शृंखलाएँ थीं, जिनकी चोटियों पर धुंध छाया हुआ था। पशु तो चुपचाप ढ़ाल की ओर नीचे उतर रहे थे।

नौरतू और मगलू दो-तीन गांवों तथा पास के कस्बे की गाएँ चराते हैं। वे जिस गांव में रहते हैं, वहां पहले एक बूढ़ा यह काम किया करता था। वह कोढ़ी था और अधेड़ अवस्था में पत्नी के मर जाने पर उसने आगे आजीवन गौमाता की सेवा करने का निश्चय कर लिया था। गांव में कहीं से एक बदचलन औरत चली आई थी। वह उच्छृंखल सी रहती थी और साधारण काम-काज में भद्र परिवारों की नारियों का हाथ बटाती थी। एक दिन वह अपने सात-आठ साल के लड़के को छोड़कर एकाएक लोप हो गई और फिर लौट कर नहीं आई। बूढ़े ने उसे आश्रय दिया। नौरतू यह बात जानता है। उसने उस बूढ़े के साथ कई ठंडी रातें नंगी जमीन पर व्यतीत की थी। कभी-कभी वह भूखा भी रहा। वह नया रोजगार था अतएव बूढ़े की आर्थिक स्थिति भली नहीं थी। बचपन के उस कठोर जीवन के कारण उसके हृदय में असाधारण कोमलता आ गई थी। लेकिन आगे चल कर उनकी आर्थिक स्थिति सुधर गई थी।

कुछ साल के बाद एक व्यक्ति उसके पास आया था। उसने उसकी माता की चर्चा करके बताया था कि वह उसी का पुत्र है। उसकी माता का गुणगान करता हुआ बोला था कि मानव-चरित्र जितना महान है, उतना ही आसानी से उसका पतन भी हो जाता है। वह उसे होनहार बालक का प्रमाण-पत्र देकर मंगलू को उसे सौंप गया था कि उसके हाथों उस बच्चे का भविष्य सुधरेगा। अपनी गरीबी तथा चौथी पत्नी के कुटिल व्यवहार के कारण विवशता से वह सब करना पड़ रहा है, इस ओर भी संकेत किया था।

मंगलू स्वाभावतः कमीना, लोभी, झगड़ालू और जिद्दी था। वह बात-बात पर रूठ जाता और शुद्ध मातृ-भाषा की गालियाँ देने में प्रवीण था। वह गांव के लड़कों के साथ कई बार फौजदारी करने पर उतारू हो गया था। वह नौरतू से तीन साल छोटा था और उस पर अनुशासन

चलाना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझता था। लेकिन धीरे-धीरे वह नौरतू के गुणों पर रीझ गया। आगे वह उसका आदेश आसानी से मान लेता था। नौरतू के साथ यह समझौता करके वह अपनी विजय पर फूला हुआ नहीं समाता था। और नौरतू के विशाल हृदय में मंगलू की जो छाप पड़ी थी, उससे उसे बल मिला था। उस सहयोग को पाकर नौरतू ने भावी जीवन की एक रूपरेखा आसानी से बनाली थी।

मंगलू बहुत चतुर था और नौरतू को दुखी देखकर उसकी माँ को ढँढ़ लाने का आश्वासन देता था। वह उसकी मां के खोटे चरित्र की बात पर अविश्वास प्रकट करता हुआ कहता था कि वह एक विवाहिता पत्नी थी। उसके पिता के दुर व्यवहार के कारण वह गांव छोड़कर भाग आई थी। यह सारा अपवाद है! नौरतू उसकी बुद्धि की सराहना करता था, पर वह जानता था कि गांव के मुखिया का कोमल व्यवहार साधारण मर्यादा भर की बात नहीं थी। नारी के चरित्र की इस विवशता पर जो सामाजिक दंड देने की व्यवस्था थी, उसे वह अपने पर लागू करने का पक्षपाती नहीं था। वह समझदार होने पर उस भावुकता के लिये अधिक मन मैला नहीं करता था।

मंगलू ने तो चतुरता से अपनी आर्थिक स्थिति ठीक कर दी थी। बूढ़े के मर जाने पर पहले-पहल मंगलू ने ही सुझाया था कि अब आगे फसल पर अनाज न लेकर उनको माहवारी शुल्क लेना चाहिये। वह बूढ़े के भोलेपन पर हँस कर कहता था कि वह बहुत नेक व्यक्ति था। लेकिन आज तो कलयुग है, जहाँ कि बिना मक्कारी के कुछ नहीं चलता है। पशु चराने पर शुल्क लगाने वाली नई योजना पर काफी विचार करके निश्चय हुआ कि गाय, बैल आदि बड़े जानवरों पर तीन आना माहवारी और छोटे पशुओं पर एक आना ठीक होगा। जब किसी गाय का बच्चा होगा तो उसका वे चार आना अतिरिक्त इनाम मांगेंगे। त्योहार पर की दस्तूरी तो उनका अपना अधिकार है। प्रारम्भ काल में लोगों ने इसे स्वीकार

नहीं किया और जब पन्द्रह दिन तक गायें नहीं खुलीं तो हार कर उसकी बात माननी पड़ी। मंगलू ने एक छोटा रजिस्टर बना रखा था और भारतीय तिथियों के अनुसार महीना शुरू होते ही वसूली आरंभ कर दी थी। वह प्राइमरी स्कूल में दो तक पढ़ा था और कभी-कभी नौरतू को भी रात में मिट्टी तेल की डिबिया की रोशनी में अक्षर-ज्ञान कराया करता था। साथ ही उसे पुराने अखबारों से तसवीरें काटने का शौक था। वह समझाता था कि उसे चंट होना चाहिये। अन्यथा आज की दुनिया में रहना आसान काम नहीं है। इसी लिये उसने कस्बे के मिडिल स्कूल के एक हेड मास्टर से दोस्ती कर रखी है। वह उसके पशु निशुल्क चराने ले जाता है। कभी वक्त निकाल कर वह वहीं हिसाब, भूगोल आदि का ज्ञान आसानी से प्राप्त कर लेता है। तथा छोटी-छोटी पोथियाँ भी पढ़ लेता है। इस रोजगार के प्रति उसकी कोई खास आस्था नहीं है। वह कोई नया काम चलाना चाहता है। नौरतू के साथ एक लड़का करके वह इस भार से मुक्त होना चाहता है। ताकि वह गांव में एक छोटी परचून की दूकान खोल ले। इसके लिये उसके पास काफी ग्राहक हैं। तथा कुछ व्यापारियों से भी उसने दोस्ती कर रखी है।

वह नौरतू को बहुत प्यार करता है। चाहता है कि उसकी गृहस्थी जुड़ाले, पर यह आसान नहीं लगता है। भला कोई अपनी लड़की गाय चराने वाले छोकरे को क्यों देने लगा। यह बात उसके मन पर बार-बार चोट करती है कि गांव के समाज के उपयोगी अंग होने पर भी उनकी वहां अपनी कोई हैसियत नहीं है। वे उपेक्षित व्यक्ति हैं। उनका कोई अस्तित्व मानो कि न हो। अन्यथा जब पतरोल और गांव के मालगुजार ने एक चीड़ के पेड़ की चोरी पर उनसे जुर्माना वसूल किया था तो गांव वाले चुप रहे थे। वह पतरोल भले घर के लोगों से कुछ नहीं कहता है। एक बार किसी से कहा सुनी हो गई थी, तो और गांव वालों ने उसको चुनौती दी थी और इस संगठन के आगे उसने हार मानली।

नौरतू का भविष्य उसके लिये बड़ी चिन्ता की बात है। इसका मुख्य कारण यह है कि नौरतू दुनियादार नहीं है। वह बड़ी सरल प्रकृति का है। गांव की औरतें उससे सस्ते दामों पर मजदूरी करवा लेती हैं तथा वह इधर उधर पैसे फँसाने में भी प्रवीण है। उसकी साधु-संतों के प्रति बड़ी आस्था है। वह कभी-कभी तो साधु बन जाने की बात तय सी कर लेता है। उसे दुनिया से खास मोह नहीं रह गया है। जब कस्बे में नौटंकी या रामलीला होती है तो वह नहीं जाता। उसने तो अकारण ही अपना जीवन नीरस बना डाला है। इधर मंगलू बड़ी मिन्नतों बाद उसे अपने साथ ले जाने में सफल हुआ है।

अब वे सब चौड़ी सरकारी सड़क पर चल रहे थे। यहां से जंगल तीन मील की दूरी पर है। बरसात, जाड़ा तथा गरमी सदा ही वे सात-आठ बजे गाएँ खोलते हैं। वर्ष में शायद ही पांच-सात रोज नागा होता होगा। जाड़ों में जब कि सारी भूमि बरफ से ढक जाती है, तब भी वे समय पर ही अपना काम आरंभ कर देते हैं। मंगलू ने हिन्दुस्तान की सब नदियों के नाम याद कर रखे हैं। साथ ही साथ सप्ताह के सब दिनों के नाम पर भी वह गायों का नामकरण करता है। बछड़ा पैदा होते ही परिवार उसकी सम्मति लेता है। वह देवी-देवताओं के नाम पर भी उन पशुओं के नाम रखने का लोभ नहीं सँवार पाता है। उसकी गांव के भीतर अपनी एक सही हैसियत बनाने की भावना है।

वे रोज कस्बे के पिछवाड़े वाली सड़क पर से गुजरा करते हैं। इस सड़क पर अधिकतर छोटी कौम के लोग—मोची, ठठेरे, लोहार आदि रहते हैं! एक ओर तो सौदागरों या पंडितों के मकानों के पिछवाड़े हैं, तो दूसरी ओर छोटी जाति वालों के घरों के मुखद्वार। नुक्कड़ पर एक

पानी टंकी की है। वहाँ पर रोज औरतें झगड़ती हुई ही मिलती हैं। वह रास्ता बहुत गंदा रहा करता है। नौरतू और मंगलू अक्सर इन नीच जाति वालों पर सोचा करते हैं। वे उनके ढोर चराने नहीं ले जाते हैं। मंगलू ने एक बार सुझाव दिया था कि कुछ अधिक शुल्क लेकर यह काम किया जा सकता है। लेकिन नौरतू को यह मान्य नहीं है। आज वह जाति के ऊँचे बन्धनों को आसानी से तोड़ देने का पक्षपाती नहीं है। वैसे उनके गाँव का एक लोहार वहाँ रहता है। वह बहुत बूढ़ा है और सुफेद कमानी का चश्मा लगता है। जिसके काँच बहुत छोटे तथा मोटे हैं। वह बहुत अनुभवी कारीगर है। घड़ी, ग्रामोफोन तथा अन्य मशीनें तैयार कर लेता है। यह सब काम उसने अनुभव से ही सीखा है। उसके लड़के नलायक हैं, यही उसका रोना है। अक्सर वे बाप की तिजोरी तोड़ कर भाग जाया करते हैं तथा रुपए फूँक-फाँक कर दो-तीन सप्ताह में लौट आते हैं। वे दोनों वहां पांच-सात मिनट आराम करते हैं तथा तम्बाखू पीते हैं।

कस्बे के लोग चंट होते हैं, अतएव अपने काम से अधिक वे किसी से दोस्ती नहीं रखते हैं। उन लोगों से पैसा वसूल करने में कठनाई भी होती है। वैसे कस्बे के कुछ हरिजन बालक अच्छे उत्तर-साधकों की भाँति उनका साथ देते हैं और यह काम सीख रहे हैं। यहां के कुछ परिवारों से उनका झगड़ा है, अतएव वे उनके पशु चराने के लिए नहीं ले जाते हैं। उन परिवारों की नारियां रोज मिन्नतें करती हैं, पर वे नहीं पिघलते। भविष्य में आगे ले जाने का आश्वासन वैसे देते ही हैं। महादेवजी के मन्दिर का मोटा पुजारी रोज उनको मन्दिर के बाहर खड़ा मिलता है। उसके जजमानों ने उसे कई गाएँ दान में दे रखी हैं। लेकिन सबसे अधिक परेशान तो उस मन्दिर का साँड करता है। वह वहां से गिरोह के साथ हो लेता है। आजकल उसका एकाधिपत्य है। पिछला बूढ़ा सांड कस्बे से आज बाहर रहता है। पहले कई बार दोनों के बीच

दंगल जमा है और सदा इसकी विजय हुई है। अब पुराना सांड मैदान छोड़ कर भाग चुका है और आस पास के गांव-गाँव में डोला करता है।

एक बार इन पुजारीजी ने उनको मालपुआ खिलाया था। पुजारी जी का काफी रोबदाब है। वे सोने की बालियां और कड़े पहनते हैं। बहुधा उनके यहाँ नौटंकी, रामलीला आदि उत्सव हुआ करते हैं। ये दोनों उनमें शामिल हुए हैं। यहाँ से वे प्रसाद आदि भी आसानी से पाते ही रहते हैं। दीवाली में जब गाय की पूजा होती है तो यहाँ से उनको खासा इनाम भी मिलता है।

कस्बे के अंत में कुछ दिनों से एक छोकरे ने खोंचा लगाना शुरू किया है। वह एलान करता है कि आगरा और दिल्ली के मशहूर चाट वालों के यहां उसने तीन-चार साल नौकरी की है। यह हुनर उसने किससे सीखा है, यह जानने के लिए कोई इच्छुक नहीं है। पर उसका खोंचा लेकर नारे लगाते हुए बाजार से गुजरना, एक कौतूहल की बात अवश्यमेव बन गई है! अब तक तो भाटिए तथा चूड़ी वाले ही इस तरह फेरी लगाया करते थे। नौरतू को उसके यहां के नमकीन काबुली चने बहुत पसन्द हैं। वह प्रति दिन शाम को दो-चार पैसा इस पर आसानी से खर्च कर देता है। उसका वहां हिसाब है और महीने पर पैसा चुकाता है। मंगलू इस बात पर कुछ नहीं कहता और कभी-कभी उसके साथ इस ऐयाशी में सम्मलित हो जाता है तथा पानी के बताशे खाया करता है।

अब उनके गिरोह में सौ से अधिक मवेशी हो गए थे। नौरतू ने हाल ही में मुँह से बजाए जाने वाला बाजा मोल लिया है। वह उस पर नौटंकी में सुने हुए गाने बजाया करता है। इस समय वह जोर से 'अमरसिंह राठोर' का एक टुकड़ा बजा रहा था। सड़क पर बीच-बीच गड्ढों में पानी भरा हुआ था। गाएँ चुपचाप आगे बढ़ रही थीं तथा बैलों के

गलों की घन्टियाँ बज उठती थीं। कुहरा और भी घना होता जा रहा था। उनके मुंह पर भी वह थपेड़े मारता लगता था। वे तो जंगलाती बंद जंगल पार कर रहे थे। वहाँ स्वस्थ चीड़ के पेड़ों की कतारें खड़ी थीं। ऊपर पतरोल के कुत्ते के भूंकने की आवाज कानों में पड़ती थी। मंगलू उस व्यक्ति की सराहना करता है। वह बहुत जीवट व्यक्ति है। इस घने जंगल के बीच अकेला रहता है। सुना कि उसके पास एक नली बारूद तथा छर्रे भरने वाली बन्दूक है। उससे वह जंगली मुरगियों का शिकार करता है। मंगलू की हार्दिक इच्छा है कि उससे दोस्ती कर ले। वह भी जंगलात की नौकरी करना चाहता है। उसे उसकी खाकी वर्दी भली लगती है। उसने उसका कुत्ता देखा है और वह भी एक अच्छी नसल का कुत्ता पालना चाहता है। पिछले साल जंगलात का बड़ा साहब आया था, उसके कुत्ते के जोड़े को देखकर, उस पशु के प्रति उसका मोह बढ़ गया है। एक बार वह कैन्टूनमेंट जाना चाहता है। सुना कि वहां साहब लोगों के भंगी पिल्ले बेचते हैं। लेकिन चालीस मील आने-जाने में पांच-सात रोज आसानी से लग जावेंगे। वैसे कस्बे के तीन-चार लुंडेरू कुत्ते उनके गिरोह के साथ स्वइच्छा से हो लेते हैं। उनके साथ में रहने से एक लाभ है कि थोड़ी बघेरे से रक्षा हो जाती है। लेकिन बघेरा कभी-कभी कुत्ते को भी तो पकड़ लेता है।

अब पशु पहाड़ी घटिया पर ऊपर की ओर चढ़ रहे थे। ऊपर चोटी के आस-पास अच्छा चारागाह है। वैसे बरसाती घास सर्वत्र भली भाँति उगी हुई थी। मेह बन्द हो गया था, पर हवा के तेज झोंके चल रहे थे। कुहरा घना-घना सा होता जा रहा था। पेड़ों पर से पानी की बूदें टपक रही थीं। नौरतू कम्बल ओढ़े हुए था। उसका बदन फिर भी जाड़े से थर-थर काँप रहा था। मंगलू तो उसकी नेकी पर सोच रहा था। आज गाएँ खोलने की कोई आवश्यकता नहीं थी। नौरतू की जिद के आगे फिर भी वह चुप रह जाता है। नीचे की ओर एक गाय

मरी पड़ी हुई थी। उसके थन बघेरे ने खा डाले थे। वहां विचित्र सी चीलें बैठी हुई थीं। नौरतू उसे पहचानने की चेष्टा कर रहा था। मंगलू ने बताया कि वह कस्बे के बख्शी की गाय है। वे आलसी लोग हैं। सोचा होगा कि कौन घर बैठे-बैठे उसे खिलाए। इसीलिए शायद पिछले दिन खोल दी होगी कि स्वयं जंगल से चर कर लौट आवेगी। नौरतू का पशुओं से बड़ा स्नेह है। वह एक टक उस गाय की ओर देख रहा था। पशु ऊपर की ओर बढ़ रहे थे। मंगलू तो बोला, "नौरतू, होशियारी बरतनी होगी, इधर कहीं बघेरा है।"

तभी कुत्तों के भूँकने का स्वर कानों में पड़ा। पशु भी चैतन्य हो गए। गाएँ रांभने लगीं। मंगलू आगे बढ़ कर बोला, "मैं ठीक कहता था। बकरी को पकड़ कर ले गया है। तू इनको देख। वह कहीं पास ही झाड़ी में होगा।"

—मंगलू बड़ा साहसी है। वह चुपचाप नीचे खड्ड की ओर बढ़ गया। बकरे के मिमयाने का स्वर उसके कानों में पड़ा। उसने पीटर को पुकारा और तेजी से नीचे की ओर बढ़ गया। कई झाड़ियां उसने ढूँढी और फिर आगे बढ़ गया। बघेरा अभी उसे खा नहीं गया होगा। फिर मरी बकरी ही सही, उसके मालिक को तो सौंपना ही है, ताकि वह उसका गोश्त बेच सके। वह इन बकरियों के मारे परेशान हैं। पिछली गरमी के दिनों में एक साथ तीन बकरियां कंकड़ी खा कर मर गई थीं और उनको लाद कर घर पहुँचाना पड़ा था।

आकाश में चीलें मंडरा रही थीं, जो कि गाय खाने के लिए तेजी से झपटती थीं। इधर बहुत दिनों के बाद फिर बघेरा आया है। अतएव कल से उनको दूसरे जंगल की ओर गाएँ चराने के लिए ले जानी होगी। वह बड़ी देर तक झाड़ी-झाड़ी बकरी के बच्चे को ढूँढ़ता रहा।

भारी अथक परिश्रम के बाद उसे ढूँढ़ने में सफल हो गया। वह अन्तिम साँसें ले रहा था। उसकी गरदन पर बड़े-बड़े घाव थे, मानो कि बघेरा उसे अपने दांतों से दबोच करके रगड़ता हुआ ले आया हो। कुत्ता उसे सूँघ पूँछ हिला कर मंगलू के चरणों में लोट-पोट रहा था। उसने उसे कंधे पर लटकाया और ऊपर चढ़ने लगा। इस कठिन जीवन पर उसकी कोई आस्था नहीं रह गई है। वह सोचता है कि वह कई काम कर सकता है। भावी जीवन के कई ढांचे वह बना चुका है। वे कार्यान्वित नहीं हो पाते, अतएव वह अपने पर झुँझलाया करता है। आजकल तो जीवन कट रहा है, ठीक बात है; पर आगे वह यह काम छोड़ देने का निश्चय कर चुका है। गौमाता की सेवा से उसे कोई खास दिलचस्पी नहीं रह गई है! पिछले साल ही एक भालू से उसकी मुठभेड़ हो गई और वह मरते-मरते बचा था। बारूद भरने वाली बन्दूक की चर्चा उसने पटवारी से की थी तो वह खिलखिला कर हँस पड़ा था। मानो कि उसकी हैसियत का उपहास उड़ाया हो। यदि उनके पास कुछ खेत होते, तो गांव के जीवन के बीच अपनी एक हैसियत तो होती।

वह ऊपर पगडंडी पर चढ़ रहा था। रास्ते में कई कँटीली झाड़ियों से वह उलझा और एक बार तो बिच्छू के झाड़ से टकराते-टकराते बच गया। वह कुत्ता उसके आगे-आगे भूँकता हुआ बढ़ रहा था। कभी-कभी मुड़ कर पीछे देख, पूँछ भी हिलाने लगता था। अभी तक बकरी की गरदन से खून टपक रहा था। वह निर्जीव सुकुमार बच्चा चुपचाप उसकी गरदन पर लटक रहा था। एक बार उसके मन में बात उठी कि उसे चुपचाप कस्बे में किसी के पास बेच दे। गोश्त का एक हिस्सा अपने लिए भी रख लेगा। कौन इसकी जांच-पूँछ करेगा। वह किसी का गुलाम भी तो नहीं है। रात को वह सरसों के तेल में उसे भूनेगा। बरसात की इस ठंड में शोरबा पीकर गरमी आवेगी। इधर एक महीने से ऊपर हो गया है कि उन्होंने गोश्त नहीं खाया। पिछले दिनों उन लोगों ने एक

खरगोश मारा था; किन्तु उसे साहुकार परिवार ने क्रय कर लिया था। उनकी बहू की रुचि उसे खाने पर गई थी। अतएव वे लोग चुपचाप सहमत हो गए। पर आज मंगलू का मन डांवाडोल हो रहा था।

नौरतू अब तक ऊपर पहाड़ की चोटी पर खोह के पास पहुँच गया था। कुहरा छट रहा था। चोटियां चमकने लगी थीं। फिर भी नीचे की ओर कुहरा बहुत घना था। चारों ओर धुली हुई हरियाली की अपूर्व शोभा थी। सामने पहाड़ों पर गांव फैले हुए थे। उसने नीचे से मंगलू को आते हुए देख, हँस कर कहा, "मैं जानता था कि आज कुछ जरूर होगा। मेरी बाईं आंख फड़क रही थी।"

"मेरा इरादा इसे कस्बे में बूचड़ के पास बेच देने का है।"

"बख्तवार चाचा क्या सोचेंगे ?"

"बूढ़ा सीधा है, कुछ नहीं कहेगा। पर बहू चांडालिन है। अपने को न जाने क्या समझती है। जब से उसके आदमी ने केले की रंगीन साड़ी और कुरता भेजा है, तब से उसका मिजाज ही नहीं मिलता है।"

"तुम तो बेकार गरोशी से खार खाए बैठे हो।"

"मैं नौरतू! क्या यह झूठ है कि वह सीधे मुँह बात तक नहीं करती। उस दिन मजाक में कहा था कि, भाभी आजकल उड़ी-उड़ी फिरती हो तो उसने ऊँचे स्वर में मेरे चार पुश्त को आशीर्वाद दिए कि वे तर गए होंगे।"

"जब वह बुरा मानती है तो तुम उससे मजाक ही क्यों करते हो।"

"मैं उसे छेड़ता हूँ। वही तो मुझे डाक्टर साहब और तुमको मैनेजर साहब कहती है। उस दिन वही तो शिकायत लेकर आई थी कि पतरोल ने उसकी दराती छीन ली है।"

"तो हमें इससे क्या मतलब है।"

"नौरतू भैया तुम तो कहते हो कि उसकी हँसी में फुलझड़ी छूटती है।"

"चुप मंगलू!"

"और बता दूं......।"

"क्या?"

"गांव वाले कहते हैं कि तू उसके लिए काली मूँगा की माला लाया था।"

"वह तो उसने मँगवाई थी।"

"और तूने चुपचाप बिसाती से उधार ला दी। ऐसी भी क्या बात थी। किसी और के लिए तो तुम उधार नहीं लाते हो। मुझे तो डर है कि किसी दिन वह भाग न जाय। उसकी कुछ परतीत थोड़े ही है।"

"चुप रह मंगलू। किसी की बहू-बेटी की बात करना शोभा नहीं देता।"

"अच्छा नौरतू, अगर तेरी शादी जग्गू की भतीजी से कर दें तो......।"

"जग्गू की भतीजी?"

"कुछ काली जरूर है और चेचक के दाग भी कम नहीं हैं फिर भी घर गृहस्थी के काम में निपुण है।"

"वह तमोटे की बेटी है।" नौरतू ने रोनी सूरत बनाई।

"कुल का सवाल है। भला कौन कुलवान परिवार गाय चराने वालों को अपनी लड़की देगा।"

"तो मैं क्वांरा ही रहूँगा, पर......"

"मुझे तो वह लड़की खास बुरी नहीं लगती है। इस पर खर्च कुछ नहीं करना पड़ेगा। घर गृहस्थी में सहारा मिलेगा। कुछ और न सही,

कम से कम पकी-पकाई रोटी खाने को तो मिल जायगी। फिर तीन-चार साल बाद भतीजे मेरे कंधों की सवारी करेंगे।"

यह सुनकर नौरतू हँस पड़ा। कुछ गाएं दूर निकल गई थीं। मंगलू उधर दौड़ पड़ा। वह नीचे की ओर तेजी से दौड़ा। कुछ गाएँ बहुत शरारती हैं और चुपचाप यहाँ से खिसक कर कस्बे के पास वाले खेतों में खड़ी फसल खाने के लिए पहुँच जाती हैं। जैसे ही उन्होंने नौरतू को देखा वे पूंछ उठा कर दौड़ने लगीं। लेकिन नौरतू भी उस्ताद है। वह आगे एक पगडंडी से उतर पड़ा और रास्ते में उनके आगे खड़ा हो गया। फिर जो उसने पत्थरों की बौछार की तो वे हार कर पीछे मुड़ गईं। वह भी जल्दी-जल्दी पहाड़ी पर चढ़ गया। नीचे उस मरी पड़ी गाय के चारों ओर चीलें जमा थीं। आसमान पर भी वे उड़ रही थीं और तेजी से झपेटा मारने में न चूकती थीं। ये गाएँ उनको बहुत परेशान करतीं हैं और वे उनसे छुटकारा पाना चाहते हैं। लेकिन जिस परिवार की वे गाएँ हैं वे लोग बहुत सहृदय हैं। ये उनको अलग-अलग जजमानों ने दान में दी हैं। उन जजमानों की भक्ति के कारण परिवार की नारियाँ बहुत परेशान रहती हैं और यह तय कर चुकी हैं कि लड़कियों की शादियों में उनको एक-एक कर विदा कर देंगी।

उधर नौरतू के मन में तो मंगलू की बात उपहास सी उड़ा रही थी। वह गणेशी अकसर उससे मजाक किया करती है। पूछती है कि कब तक निठल्ले रहेंगे। लड्डू तो खाने के लिए मिलेंगे। कभी ऐसा सा कहती है कि औरत को चालाक आदमी से शादी न करके बुद्धू से करने में सुख मिलता है। कभी सुनाती है कि वह जाड़ों में दो-तीन महीने के लिए मैदान जाने की सोच रही है। जहाँ कि उसका पति चौकीदार है। नौरतू सब बातें जानता है। उसका पति एक तरह से गांव और कस्बे को छोड़ चुका है। वह कस्बे के आवारा लड़कों की संगति में बिगड़ चुका था। शराब पीना, जुआ खेलना तथा कई और ऐब उस पर थे। चोरी करने

के मामले में तीन महीने जेल काट आया था। बाप के मालताल को फूँकफाँक कर, बीबी के गहनों को लेकर एक दिन चम्पत हो गया था। दो साल हो गए हैं। कुछ लोगों का कहना है कि वह कस्बे के मोची की विधवा लड़की को साथ ले गया था, किन्तु वह रास्ते से ही लौट आई। उसका प्रेम पहले पड़ाव पर ही ठंडा पड़ गया था।

उस युवती के चाल-ढाल में बहुत आकर्षण है और वह बड़े नाज-नखरे के साथ गांव से निकला करती है। नौरतू अपने मन में बात गढ़ता है कि ऐसी ही बहू उसे चाहिए। मंगलू मजाक करने में पटु है, पर वह उसकी उपेक्षा करती है। उसके व्यक्तित्व को ठेस लगाती है और वह कुछ कह देता है तो वह गालियां सुनाती है। वह जानता है कि उसका नौरतू के प्रति अपार स्नेह है। लेकिन कभी वह नौरतू के परिवार में आयेगी, यह एक झूठा विश्वास है। नौरतू पिछली होलियों में जब उस पर रंग डालने गया था तो अपने मन की बात कहने में भी नहीं चूका था। उसने वही बात दुहराई थी कि मुंह मीठा कब होगा और नौरतू ने चटपट जवाब दिया था—जब तुम राजी हो जाओगी।

वह हँस कर बोली थी, "राम राम त्योहार के दिन तो ऐसा न कहो।"

नौरतू ने भी वादा किया था कि वह शादी करेगा तो उसीसे अन्यथा जीवन भर क्वांरा ही रहेगा। वह भावुक तो है ही, साथ ही उस युवती के आगे अपने मन की सारी बातें कहने में झिझकता नहीं है। उसके लिए वह कभी-कभी कस्बे से कुछ चीजें ले आता है। वह उन उपहारों को आसानी से स्वीकार कर लेती है। उसके बदले में वह गृहस्थी का सामान देती है तथा त्योहारों पर पकवान बना कर भेजती है। वह बिना किसी हिचक के उसके घर आती-जाती है तथा उन लोगों की भावी योजनाएँ सुनती है। एक बार नौरतू ने उसे चांट खाने का न्योता भी दिया था। नौरतू जिस बलवती आशा पर भविष्य का जीवन

ढाँचा बनाता है, वह आसान नहीं है। वह उसे बता चुकी है कि ससुर के जीवन-काल तक वहाँ रहेगी और उसके बाद अपने मायके लौट जावेगी। उसने कभी उसे आश्वासन नहीं दिया है कि वह उससे शादी करेगी। वह तो उसके लिये लड़की ढूंढ़ लेने का वादा करती है और मंगलू से इस मामले में सलाह-मशवरा लेती है। कभी नौरतू के मन में बात उठती है कि कहीं मंगलू तो सांठ-गांठ नहीं भिड़ा रहा है।

आज मंगलू के उस सुझाव के बाद उसका मन खट्टा हो गया और यह सा लगा कि वह उसकी शादी कराके फिर गणेशी को लावेगा। वह इस मक्कारी की बात को सोचकर खिन्न हुआ। वह जग्गू की भतीजी! उसका दिल भर आया। अनायास उसकी आखों से आँसू की झड़ी लग गई। वह स्वयं नहीं जान सका कि उसे क्या हो गया है? आज उसे अपने पिछले जीवन की एक-एक बात याद आने लगी। उस बूढ़े के साथ उसने क्या-क्या कष्ट नहीं सहे थे। उसका बचपन नंगा-भूखा रहकर बीता। अब वे कुछ ठीक सा खा-पी रहे थे। उसे अपनी सामाजिक स्थिति ज्ञात है। उसकी मां मर कर भी उसे सदा के लिए पंगु बना गई है। वह अपनी मां को कदापि क्षमा नहीं कर सकता है। उसने यह सोच कर सन्तोष कर लिया कि वह अवश्यमेव नरक गई होगी। ऐसी बदचलन औरतों को स्वर्ग नहीं मिलता है। फिर भी मन का भार नहीं हटा। वह एक ऐसा बोझा था, जिसे कोई नहीं हटा सकता था। उसे गाँव की औरतें 'बुद्धू' कहती हैं। वह मंगलू की भाँति समझदार नहीं है। लेकिन मंगलू ने तो जानकर उसका अपमान किया है। अन्यथा क्या वही तमोटे की भतीजी उसके रिश्ते के लिए बची हुई है। फिर तो वह राजपूत नहीं रह जायगा। वह सोच रहा था कि शादी के बाद सामाजिक प्रतीष्ठा बनावेगा। वह तो मंगलू की इस नासमझी पर ठहठहा मार कर हँस पड़ा। शायद वह उसका मन टटोल

रहा होगा। अन्यथा वह निश्चय सा कर चुका है कि बूढ़े बख्तवार चाचा के मरते ही वह उसकी पुत्र-बधू को घर में डाल लेगा।

मंगलू लौट आया था और वे दोनों उठकर झरने के पास चबेना खाने के लिए चले गए। वे दिन का खाना यहीं पर बैठ कर खाते हैं। अब काफी धूप छिटक आई थी, और सुहावना लग रहा था। झरने पर गौमुख की भाँति एक पत्थर जड़ा हुआ था। जिसके मुंह पर से अविरल गति से पानी बह रहा था। झरने के चारों ओर बड़ी-बड़ी झाड़ियाँ थीं। यहाँ पर बैठ कर वे सारी दुनिया की चिन्ता को भूल जाया करते हैं। मंगलू उस भाग-दौड़ के बाद बहुत थक गया था। यह रोज का ही धंधा है। पण्डितों का परिवार अपने जजमानों के यहाँ से पाए हुए सीधे-पानी में से बचा-खुचा अंश उसे दे दिया करता है। वह कभी-कभी किसी सम्पन्न जजमान की शादी में पण्डितजी का उत्तर-साधक बन कर भी सम्मिलित होता है! पण्डितजी ने तो उसकी एकाध कच्ची जन्म-पत्री बना देने का भी आश्वासन दिया है तथा एक दिन कुछ ऐसा सा बताया था कि धन का स्वामी बृहस्पति ऊँचे स्थान पर है। अतएव उसे जीवन भर आर्थिक कष्ट नहीं होगा। वह आसानी के साथ सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करेगा। जब गाएँ कस्बे के कटघर में किसी किसान द्वारा बन्द करवा दी जाती हैं तो उनके हृदय में गौमाता के प्रति श्रद्धा उमड़ आती है। उनको बन्द करवाने वाले को वे कसाई तथा कुछ और मीठे बचनों से सम्बोधित करते हैं। पंडिताइन तो न जाने कहाँ से मैले से पैसे निकाल कर देती हुई कहती है, 'मंगलू जा उसे छुड़ा कर ले आ!' फिर जजमानों को खरी-खोटी सुनाती है कि सब ऐसी गाएँ उनके लिए ही रखते हैं और कोरा पुण्य लूटते हैं।

नौरतू का मन तो खाना खाने पर नहीं लग रहा था। वह आज अपने में उलझा-उलझा था। उसकी बख्तवार के बेटे से दोस्ती थी। वह उसकी शादी में गया था। जब वह भाग गया था तो एक बार वह

बूढ़े के कहने पर उसकी हू बको मायके छोड़ आया था। नौरतू ने कंडी पर सामान रख कर, उसे पीठ पर लाद लिया था। उसमें साधारण हल्का सामान था। उस युवती के पिता ने उसे बख्शीश में एक रुपया दिया था। जब वह लौटकर आया था तो मंगलू ने उसे बहुत डांटा था कि क्या अब उनका काम इस भाँति बहू-बेटियों को पहुँचाने का रह गया है। वह नौरतू के आत्मसम्मान के लिए एक बहुत बड़ा धक्का था। आगे फिर उसने ऐसी बात नहीं दुहराई थी। लेकिन पिछले दिनों उस युवती ने फिर उसे मायके छोड़ देने के लिए कहा था तो उसके उस विश्वास के आगे पिघल कर, उसने मंगलू से पूछ के बताने को कहा था। उस युवती ने तभी हँस कर कहा था, 'अब समझी, घर के मालिक से बिना पूछे हुए भला कहीं थोड़े ही जा सकते हो।'

तो उसने ताव में आकर उत्तर दिया था कि मालिक वह है और वादा किया था कि किसी भी दिन जब वह ठीक समझे, उसे मायके छोड़ आवेगा। उस समय तो उसने शेखी बघारी थी, पर इसकी चर्चा आज तक मंगलू से न कर सका था। फिर भी वह झूठा नहीं बनना चाहता था। मंगलू तो उसका आश्रित है। वह उसकी धौंस नहीं सहेगा। अतएव वह बोला ही, "मंगलू, मैंने गणेशी को मायके पहुँचाने का आश्वासन दिया है।"

"अब के कितनी बख्शीस मिलेगी नौरतू ?"

"देख मंगलू, तू मेरी बातें हँसी में न उड़ाया कर।"

"अरे बाबा, मैंने तो सीधी-साधी बात कही थी। भला मुझे कहाँ मालूम था कि तू झगड़ पड़ेगा। मरज़ी हो, चला जाना। यदि आज्ञा हो तो शाम को बिसाती के यहाँ से चूड़ियाँ, फुन्दा और टिकुली ले चलूं। देख, मुझे भर पेट पेड़े गोपी हलवाई की दूकान पर खिलाने पड़ेंगे। लेकिन मुझे शक है कि अब वह लौट कर नहीं आवेगी।"

"तू क्या कह रहा है मंगलू ?

"सुना है कि उसका पिता उसे वहीं रोक कर कहीं दूसरी जगह शादी कर देगा।"

"यह झूठ बात है। वह तो बहुत सीधी है।"

"सीधी हो या टेढ़ी, इससे मुझे कोई मतलब नहीं है। हाँ बख्तवार चाचा ने एक दिन जरूर कहा था कि मैं गणेशी को समझाऊं, अन्यथा बुढ़ापे में उनका फजीता हो जायगा।"

आगे नौरतू का मन खाना खाने पर नहीं लगा था। वह चुपचाप उठा और झरने के पास पहुँच कर पानी पिया। फिर जल्दी-जल्दी ऊपर पहाड़ी पर चढ़ गया। पगडंडी की राह बढ़ कर ऊपर फैली हुई चौड़ी चट्टान पर बैठ गया। मध्यान की धूप खिली हुई थी। कुहरा इधर-उधर छंट रहा था और आकाश पर कहीं-कहीं हल्के बादलों की छाया सी पड़ रही थी। एक बार उसने नीचे की ओर दृष्टि फेरी और वहां वह कस्बा खिलौनों का एक सुन्दर नगर सा लगा। अस्पताल, थाना, मिडिल स्कूल, और डाक बंगले की लाल टिन से छाई हुई छतें अलग सी चमक रही थीं। वह निरुद्देश्य सा बड़ी देर तक उस सब को देखता रहा। नदी रुपहली रेत की चमकती कणों के बीच रेंक सी रही थी। दोनों घाटों पर य चल रहीं थीं। वह वहां कुछ ढूँढ़ सा रहा था। आज उसे अपने जीवन की पहली असफलता से वास्ता पड़ा था। मानो कि उसका जीवन एक भार सा हो। वह मंगलू की मस्ती पर सोचने लगा। आज गांव और कस्बे, सब जगह उसने अपनी एक हैसियत बना ली है। उसे सब जानते हैं। नौरतू तो पंगु है। वह मुर्दा है और उसे जीवन प्रदान करता है मंगलू। उसकी अपनी योजनाएँ मंगलू द्वारा सुनी हुई बातों को दुहराना भर है। मंगलू साथ न होता तो शायद वह एक पंगु की भांति गांव में अपना जीवन व्यतीत करता।

उसने अपना बाजा निकाला और चुपचाप बजाने लगा। वह क्या ग रहा था, यह स्वयं नहीं जान सका। वह एक ऐसा गीत था कि

जिसकी लय और ध्वनि उसके जीवन का कोई अंग नहीं बन पाई थी। वह किसी निराश प्रेमी की वाणी न थी। वह तो लड़की की विदाई का गीत था। वह सच ही गद्गद् होकर गणेशी की विदाई की बात सोच रहा था। वह उसे सुखी देखना चाहता था। अपनी ओर से उसने उसे स्वतंत्र कर दिया था। यह उसे अपने जीवन की सब से बड़ी सफलता लगी।

मंगलू नीचे की ओर गाएँ एकत्रित करने में लगा हुआ था। वे दूर-दूर चर रहीं थीं। नौरतू उसके विशाल हृदय की बात सोच रहा था। जिसे कि वह सदा कोसा करता है। वह उसे क्या-क्या नहीं कहता है—मंगलू तिकड़मी है, स्वार्थी है। उसकी तो आज तक यह धारणा थी कि वह उसे वक्त पर धोखा दे देगा। वह नीचे की ओर देखने लगा। मंगलू किसी नाले की सँकरी घाटी के बीच छुप गया था। उनके पशु चुपचाप चर रहे थे। उत्तर की ओर के बादल अब काले पड़ गए। उसने आश्चर्य में सा देखा कि आकाश पर इन्द्रधनुष छाया हुआ था। उसका एक अंश उस पहाड़ी को बीच से छू रहा था। उस सुन्दर दृश्य को देखकर उसका मन खिल उठा। जिस निराशा ने उसे घेर रखा था, वह न जाने कहां खो गई। उसने निश्चय कर लिया कि गणेशी से वह साफ-साफ कह देगा कि वह उसके जीवन पर छा जाना पसन्द नहीं करता है। उसे वह अपनी ओर से मुक्त कर देगा। वह सावन-भादों की बेलवती गंगा भले ही हो, पर वह तो एक चरवाहा है। जिसकी प्रेम कहानियां इन्द्रधनुष की भांति क्षणिक और रंगीन हैं। उसका दैनिक जीवन मौसमों की भांति ही बदलता रहता है। उसका प्रकृति से घनिष्ट नाता है। वह प्रकृति का बच्चा है। जिसकी मां ने अपनी भावुकता के उपहार-स्वरूप उसे इस पृथ्वी को दान दे दिया था। वह स्वतंत्र है......... लेकिन मंगलू तो......

उसने फिर एक बार जोर-जोर से मुँह का बाजा बजाना आरम्भ

किया। अक्सर होली पर गांव में जो स्वांग भरे जाते थे, उनके 'कन्सर्टों' में वह अपना बाजा बजाया करता था। उसकी अपनी धारणा है कि वह इस वाद्य को बजाने में प्रवीण है। उसने सामने की ओर देखा, धूप ऊँची पहाड़ी के उस ओर छुपने लगी थी। नीचे कस्बे की ओर परछांई छाने लगी। उत्तर की ओर बादल गरज रहे थे। वह इन्द्रधनुष उसी भांति तैर सा रहा था। वह उठ बैठा और गायों को जमा करने लगा। नीचे मंगलू एक पत्थर पर बैठा हुआ था। उसने उससे पूछा, "क्या कर रहा है मंगलू ?"

मंगलू के पांव पर झड़बेरी का कांटा चुभ गया था। केवल नीली छाया दीख पड़ती थी। उसकी पीड़ा का अनुमान नौरतू लगा कर बोला, "ला मैं निकाल दूंगा।"

वह पास में बैठ गया। उसने थूक कर उस स्थान को मला और फिर कुरते से पोंछ लिया। अब वह एक अच्छे जर्राह की भांति उसे ढूँढ़ने लगा। कांटे की नोक भीतर की ओर टूट गई थी। वह सुई से उस स्थान को सावधानी से खुरचने लगा। लेकिन जीवन में भावुकता की जो नोक उसके हृदय में टूट गई थी ? वह मंगलू की पीड़ा को जानता है। वह उसके लिए एक जोड़ी अच्छा जूता मोल ले लेगा। वह कांटा मांस के बीच था। वह उसे तेज सुई की नोक से हिलाता तो मंगलू पांव खींचने की चेष्टा करता। बड़े परिश्रम के बाद हिला-डुला कर वह कांटा बाहर निकला। उसने वह मंगलू के हाथ पर ऐसे रख दिया कि मानो वह गणेशी को उसी भांति निकल कर 'किसी' को सौंप चुका हो।

उनके पशु एक स्थान पर एकत्रित हो चुके थे। दोनों गांव और कस्बे की गायों को चिन्हने लगे। पहले मंगलू ने सब को देखा और फिर नौरतू ने गिनती की। पूरी गायें एकत्रित हो गई थीं। सूरज पहाड़ी के उस ओर छुप सा रहा था। ठंड पड़ने लगी थी। नदी

की घाटी पर कुहरा छाने लगा। नौरतू बोला, "लगता है कि रात को फिर बरसेगा।"

मंगलू चुप रहा और उस पगडंडी पर गायों के आगे-आगे चलने लगा। उसने अपने कंधे पर वह मरी हुई बकरी डाल रखी थी। वह चुपचाप आगे चला जा रहा था। अब वे नीचे सड़क पर पहुँच गये थे, जिसके दोनों ओर बरसाती फसलें खड़ी थीं। मेंढक तथा झिल्लियों का गुंजन कानों में पड़ रहा था। जिस मोह की दासता को तोड़ना नौरतू आज तक कठिन समझता था, वे बन्धन टूट चुके थे। आज वह अपनी मुक्ति पर बहुत प्रसन्न था। उसका हृदय इन्द्रधनुष के रंगों से जगमगा उठा था। वह चांट वाले की दूकान पर नहीं रुका। कस्बे के लोग अपने-अपने पशु ले जा रहे थे। वह सिर झुकाए चुपचाप आगे बढ़ रहा था। आज किसी युवती की ओर उसने आंख उठा कर नहीं देखा। पहले तो वह मन ही मन गणेशी के चेहरे तथा रूप-रंग का मिलान कस्बे की नारियों से करता था। कभी उसने उसे कलेजी रंग की मखमल की वास्कट भेंट करने का संकल्प भी किया था। आज वह उस पिछले अध्याय को बन्द कर आया है। भविष्य में वह उस ओर झांकना नहीं चाहता था। एक बार उसने मंगलू से वह मरी बकरी लेकर अपने कंधे पर लादी तथा बड़ी देर तक उसके कोमल बालों को सहलाता रहा।

कब वह गांव पहुँच गया, जान नहीं सका। और दिन तो इस रास्ते को काटने में एक बहुत बड़ा वक्त लग जाया करता था। आज वह कुछ अधिक थक गया था। भूख भी बड़ी लग रही थी। उस युवती को उसने मरी बकरी सौंप दी। वह तो हंस कर बोली, "अच्छा ही हुआ। महीने भर से गोश्त नहीं खाया था। थोड़ी देर के बाद आकर एक रान ले जाना।"

"हमें नहीं चाहिए" नौरतू रुसआया सा बोला।

"सन्यास कब से ले लिया है ?" वह खिलखिला कर हँस पड़ी।

तो वह बोला ही, "तेरे लिए तपस्या करनी छोड़ दी है।" कहते-कहते उसका गला भर आया।

"यह सब मंगलू की शरारत होगी।"

वह अधिक उत्तर नहीं दे सका। चुपचाप आगे बढ़ गया। जिससे उसका कोई सगा नाता नहीं है, उसके लिए मन में व्यर्थ का बवंडर भर लेना अनुचित लगा। वह उसे भूल जाने का निश्चय कर चुका है। वह उसे किसी पिछली यादगार से दूर रखना चाहता है। वह गाँव उसे वीरान सा लगने लगा। लड़कों का कोलाहल लोगों की चहल-पहल; सब-सब नीरस लगी। मानो कि वह गाँव से दूर भाग रहा हो। गणेशी में उसे आज कोई आकर्षण नहीं मिला। मानो कि वह मन का भ्रम भर था। उसकी बातों में कोई लोच नहीं था। उसका वह न्योता ठुकरा कर अब हृदय खाली हो आया था!

अब वह घर पहुँच गया था। मंगलू सदा ही देर से लौटा करता है। कुछ काम न होगा तो नीचे हरिजनों की बस्ती में गपशप करता रहेगा। वे लोग मुर्गियाँ पालते हैं और मंगलू अंडे खाने का शौकीन है। वह ठाकुर है, अतएव हरिजन उसे सम्मान के साथ बैठाते हैं। वह उनको जड़ी-बूटियाँ बताता है तथा छोटी-मोटी डाक्टरी करने का दावा रखता है। वह उन लोगों का नेता भी इधर गिना जाने लगा है। पतरोल ने फिर एक बार मंगलू को डाटने की चेष्टा की थी कि वे चोरी से बन्द जंगल में गाएँ चराते हैं, तो उसने धौंस के साथ कहा था कि वह जो उसके मन में आवे करले। वह पतरोल आगे कुछ नहीं बोला था। मंगलू जानता है कि वह कभी न कभी चोट करेगा। अतएव वह ऐसे अवसर पर मुठभेड़ के लिए कुछ हरिजन युवकों को तैयार कर चुका है। उसका पक्का इरादा है कि किसी दिन वे उसकी मरम्मत करेंगे। पतरोल पियक्कड़ है और इस गाँव की एक चरित्रहीन नीच स्त्री से उसकी यारी है। वहीं वे उसे पकड़ कर गाँव में आसानी से अपना सिक्का जमा लेंगे।

नौरतू को ज्ञात है कि आज वह आवेगा। मंगलू ने ऐसा ही कुछ कहा था। शायद वह इसी के लिये सलाह करने गया है। नौरतू स्वयं उस मोरचे में सम्मलित होकर अपनी खुरखुरी मिटाना चाहता था। पर मंगलू ने मना कर दिया।

नौरतू ने कोदो का काला आटा निकाला और गूंधने लगा। सोचा कि नमक और गुड़ से ही वे खा लेंगे। पर उसका मन एकाएक भर आया। वह चुपचाप उठकर दरवाजे पर खड़ा हो गया। बड़ी देर तक वहीं खड़ा रह गया। अब लौटा और हिम्मत बाँध करके रोटियाँ बनाने लगा। आग फूँकते-फूँकते उसकी आखें दुःखने लगीं। वह फिर मंगलू की प्रतीक्षा में बैठा रहा। जब वह बड़ी देर तक नहीं लौटा तो वह चुपचाप अपने खटोले पर जाकर लेट गया।

मंगलू ने आकर उसे जगाया और सुनाया कि आज पतरोल की दावत बख्तवार चाचा के यहाँ रही। वहाँ बहुत लोग जमा थे। बूढ़े ने पाँच रुपए में बकरा बेच डाला। वह भी चार आना का एक हिस्सा लाया है। यह भी बताया कि वह पतरोल मजेदार आदमी है। नौरतू चुपचाप सुन ही रहा था। मंगलू ने तो पूछा, "गोबरु की बहू ने मुझे आज भली-बुरी सुनाई। शाम को तू क्या कह आया था?"

नौरतू क्या उत्तर दे समझ में नहीं आया। तो बोला मंगलू, "जब वह तुझे अपनी बात नहीं बताती, तो तू बेकार उससे उलझता है।"

नौरतू मन ही मन सोच रहा था कि आगे वह दुनिया में किसी से वास्ता नहीं रखेगा। कहा फिर, "मंगलू चल खाना खाले। अब गोश्त बनाना तो मुश्किल है। भुना है ही नमक-मिर्च मिला कर टुकड़े खा लेंगे।"

नौरतू ने हामी भरी। दोनों चुपचाप खाना-खाने लगे। मंगलू उन हरिजनों की न जाने क्या-क्या बातें सुना रहा था। वह उसके लिए एक

उबाला हुआ अंडा भी ले आया था। उसने वह चुपचाप खा लिया। अब अंगारे राख में दबा कर वह बाहर दरवाजे पर खड़ा हुआ। आकाश पर काली घटाएँ उमड़ रही थीं।

तभी किसी की आहट कानों में पड़ी। गोबरू की बहू आई थी। वह पत्तों की छोटी डलिया उसे सौंप कर बोली, "मैं कल मायके जा रही हूँ, मां की तबीयत ठीक नहीं है। भैय्या लेने के लिए आए हैं।"

उसके मुँह पर से प्याज की गंद आ रही थी। नौरतू यह सब सुन कर अवाक रह गया। वह फिर बोली, "कौन जाने लौटूँगी या नहीं।"

"गणेशी?"

"देखो, यह सन्यास लेना ठीक नहीं। शादी कर लेना।"

नौरतू एक गहरी सांस लेकर चुप रहा।

"कभी मौका लगे मेरे मायके आना।"

वह इसका उत्तर सोचे कि वह चली गई थी। अब पके हुए गोश्त की महक का उसे अनुभव हुआ। वह डलिया लेकर भीतर पहुँचा और पाया कि मंगलू हँस रहा था।

समानान्तर रेखाएँ

रेलगाड़ी स्टेशन पर खड़ी हुई तो अखिलेश की आँखें एकाएक खुल गईं। डिब्बे में बाहर से एक भारी भीड़ भीतर घुसने का प्रयास कर रही थी। तभी उसने देखा कि तीन-चार पंजाबी युवतियाँ अन्दर चली आईं। फिर जो उन्होंने सामान रखवाना शुरू किया तो सारा कमरा खासा माल-गोदाम बन गया। इसके बाद एक अधेड़ औरत अपनी सास के साथ भीतर आई। बच्चों को सास को सौंप कर चुपचाप सामान रखवाने लगी। कुछ देर के बाद उसने ठंडी सांस ली और अपनी चादर से माथे का पसीना पोंछ डाला। अविनाश तो चुपचाप आँखें मूँदे हुए लेटा हुआ था। उसे पंजाबियों से स्वाभाविक घृणा सी है। उसकी धारणा है कि वे बहुत छोटी तबीयत तथा मोटी बुद्धि के लोग होते हैं। उनकी औरतों की बात-बात पर झगड़ने वाली प्रकृति से भी वह परिचित सा है। अतएव जब लाहौर में अशान्ति हुई तो उसने पंजाब के नक्से पर खास नज़र नहीं डाली। वह वहाँ के लोगों पर कुछ भी व्यर्थ नहीं सोचना चाहता था।

उन युवतियों ने तो सोए हुए मुसाफिरों को जगा-जगा कर अब अपने बैठने के लिए जगह बना ली। एक-दो व्यक्तियों ने उठने से आनाकानी की तो वे बोली कि वे भी टिकट लेकर चढ़ी हैं। यही नहीं उनको तो चौगुने दाम देकर टिकट चोर-बाजार में खरीदने पड़े थे।

आराम से लेटे हुए सज्जन सौजन्य से हो अथवा उनकी रूप-छटा देखकर, उठ बैठे। अब उन दोनों ने इस भाँति कमरे को मुसाफिर खाना का रूप दे दिया कि उस हो-हल्ला के बीच सोने की चेष्टा करनी निरर्थक लगी। अतएव अखिलेश ने एक पुस्तक उठाकर, उसके पन्ने

खोले और पढ़ने लगा। वह बंगाल के अकाल की कहानी थी। वे धुंधले पन्ने……

'अकाल और भुखमरी के साथ-साथ वेश्यावृत्ति भी बढ़ रही है। कलकत्ते की सवा लाख कंगाल औरतों में कोई नौजवान नहीं है। उनमें अधिकतर बूढ़ियाँ हैं या कई बच्चों की माएँ। विवाहिता और कुमारी सब युवतियाँ वेश्यालयों में पहुँच चुकी हैं। जब गाँवों से कंगाल शहरों में पहुँचते हैं, तो वेश्याओं के दलाल उनके पीछे लग जाते हैं। कुछ दिन हिचकने के बाद स्वयं माताएँ अपनी लड़कियां या बहुओं को उन दलालों के हाथ बेच देती हैं कि लड़कियां को कम से कम भूख से तो नहीं तड़पना पड़ेगा। और फिर………'

उस अकाल के पीछे जो शक्तियां काम कर रही थीं, अखिलेश उनसे परिचित है। युद्धकाल में बंगाल की संस्कृति और सभ्यता को मिटाने के लिए साम्राज्यवाद ने चोर-बाजार का अस्त्र छोड़ा था। गल्ला मंहगा हुआ, समाज का आर्थिक ढांचा टूट गया। अकाल ने आकर फिर सब कुछ नष्ट कर दिया था। वह स्वतंत्रता की अनूठी परम्परा वाला बंगाल, फिर नोआखाली का साम्प्रदायिक झगड़ा, गढ़मुक्तेश्वर, बिहार और आज पंजाब देश एक तूफान से गुजर रहा था। केन्द्र में कांग्रेस और लीगी संयुक्त मंत्रिमंडल था। देश आजादी का तराना गा रहा था, पर पंजाब में एक नई चिंगारी सुलग चुकी थी। धनी-मानी लोग शहरों को छोड़ रहे थे। पुरुष वहीं रह कर व्यापार करना चाहते थे, पर अपने परिवार वालों को सुरक्षित स्थानों में भेज रहे थे। लाहौर सुलग चुका था। सिख मोरचा लेकर मुसलमानों से लड़ रहे थे। दोनों पक्ष अपनी विजय की अहमन्यता में, धार्मिक जिहाद का नारा लगाकर अपने उन भाइयों से लड़ रहे थे, जिनके साथ वे सादियों से रहे हैं; और जो लूटमार का बाजार गरम था……

अखिलेश ने तो पुस्तक एक ओर रख दी। वह अधेड़ अपनी सास

से कह रही थी कि उनकी तरकारी वाली, उनके शहर छोड़ने पर बहुत दुखी थी। बुढ़िया ने उसकी बात मान ली कि वह मुसलमान थी तो क्या हुआ? चौदह साल से उनके परिवार वालों को तरकारी देती थी। पिछले दिनों किसी ने उसके बूढ़े पति को मार डाला था। लेकिन उसके बाद भी उसने आकर कहा था कि यह झगड़ा गरीबों का नहीं है। एक सप्ताह 'करफ्यू' लग जाने से तो उनको बिलकुल निराहार रह जाना पड़ा था। आजकल के जमाने में पांच बच्चों को खिलाना-पिलाना कोई आसान काम नहीं है। लाहौर तो अपनी केंचुली बदल चुका था। वहां तबाही आ गई थी। वर्षों पुराना भाई-चारा टूट चुका था। मानव-मानव के रक्त का प्यासा हो गया था। वह मौत अपना आंचल फैला चुकी थी, जीवन बुझ रहा था। मानव मर रहा था। हैवानों की उस बस्ती में मायूसी छा रही थी।

वे तितली बनी युवतियां यह सुन कर चेतन हुईं। एक तो तपाक से बोली कि अब तो सब मुसलमानों को लाहौर छोड़ देना पड़ेगा। यह सा उसने बतलाया कि वे छोटी जाति वाले मुसलमान ही सारे झगड़े की जड़ हैं। वह उनको उस बड़े हमले की बात सुना रही थी, जिसमें कि सिखों ने एक मसजिद पर हमला किया था। वे फौजी सामान से लेस थे। उसके बड़े भाई ने भी उस हमले में भाग लिया था। उसकी धारणा थी कि मुसलमान हरामकौम के होते हैं। उन पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। वे गुंडे हैं और अंग्रेजों के टुकड़ों पर जी रहे हैं। सिख खानसामाओं की इस कौम को मिटा कर ही चैन लेंगे।

लेकिन वह अधेड़ तो फफक-फफक कर रो उठी। इससे उसके बच्चों की नींद टूट गई। फिर जो सब ने ऊँचे स्वर में रोना शुरू किया तो सारा कम्पार्टमेन्ट कांप उठा। सब मुसाफिर भौंचक्के से उनको देखते-देखते ही रह गए। बुढ़िया उसे ढाढ़स देने लगी कि वह उसी की कोख से जन्मा था। इस बुढ़ापे में धोखा देगा, कौन जानता था? वह लाश

पहचानने के लिए पुलीस चौकी पर गई थी। किसी ने छुरा भोंक दिया था और प्राण निकल गए। उसकी उस निर्मम हत्या पर वह भौंचक्की रह गई थी। उसके आंसू सूख गए थे।

वह छुरेबाजी अब किसी के मन पर प्रभाव नहीं डाल पाती है। वह तो प्रतिदिन व्यवहार में आने वाली बात सी बन गई। वे हत्याएँ जीवन की झूठी परिभाषाएँ बनती चली गईं। जिनके प्रति एक जाति का दूसरे के प्रति घृणा का भाव था। इस पर सही सी भावना निर्जीव और मृत्यप्राय लगती थी। समाज में जातियों की सदियों पुरानी स्नेह की मजबूत डोरियां सड़-गल कर टूट गईं थीं। किसी ने उनको जोड़ने की चेष्टा मानों कि सालों से न की हो। जब कि आज हिन्दू और मुसलमानों के बीच की खाई निर्दोष व्यक्तियों की लाशों से पट रही थी। उनका आपसी नाता-रिश्ता प्रतिहिंसा तक सीतिम रह गया था—एक खूँखार भावुकता!

उन युवतियों के बीच यह घटना विकार पैदा नहीं कर सकी। दंगे में तो गरीब मरते हैं—हिन्दू हों चाहे मुसलमान! एक ने दूसरे के कान में चुपके से कहा, "शायद इनके पास तीसरे दरजे का टिकट है।"

मानो कि इस सामाजिक अपराध से वे दुनिया की दृष्टि में बहुत गिर गई हैं।

दूसरी ने तो इस अदा से आँखें मीचते हुए इसका समर्थन किया कि उसकी मोहनी चितवन से सामने बैठे भगोया वस्त्र पहने हुए बाबा भी विचलित हो गए। वे उसे आँख फाड़-फाड़ कर देखने लगे, मानो कि वह मेनका फिर इस कलयुग में विश्वामित्र का तप भंग करने के लिए पैदा हुई हो। एक बार उन युवतियों ने ऊपर की बर्थ पर नजर डाली। अखिलेश की आखें उनसे मिलीं। उसे तो उनमें कोई जीवन नहीं मिला। बस वह आखें मँदे हुए अपने में ही चुपचाप न जाने क्या

सोचता रह गया। उस अधेड़ के पति का ध्यान उसे था। बूढ़ी तो बता रही थी कि वह बनिश्रायन, अँगोछे, गमछे आदि का व्यापार करता था। लुधियाना तथा अमृतसर अक्सर उसे समान मोल लेने के लिए जाना पड़ता था। वही अकेला कमाने वाला था और खाने वाले पांच प्राणी। अब वे बच्चे अपने मामा के पास जा रहे थे। जो कि कनखल में किसी ठेकेदार के साथ लकड़ी चीरने की मजदूरी करता है। इस विपत्ति में वही एक मात्र सहारा बचा हुआ था। जिस धरती में जीवन पाया उसे वे छोड़ चुके थे। वहाँ के जीवन के प्रति आज कोई मोह नहीं बचा हुआ था। भविष्य अभी विचाराधीन है। उस पर आगे वे निश्चित होकर सोचेंगी।

उन छोकरियों के खिलखिलाने का स्वर कानों में पड़ा। वे आपस में कोई अश्लील मजाक कर रही थीं। अखिलेश चुपचाप ऊपर वाली बर्थ पर से नीचे उतर पड़ा। सुबह के पांच बजे थे। गाड़ी तेजी से कनखल की ओर बढ़ रही थी। मई के महीने में भी सुबह की ठंडी हवा शरीर पर कँपकँपी फैला रही थी। बाहर खेतों में ओस पड़ी थी। अब वह नीचे की सीट पर बैठ गया। सामने जंगल से ज्वाला उठ रही थी। शायद गांव वालों ने उसे सुलगाया था। उसकी लाली इधर-उधर चमकती हुई फैल रही थी। धुली चाँदनी में सामने खड़े हुए पहाड़ों की चोटियाँ दीख पड़ती थीं। एक हल्का-सा धुँध ऊपर उठ कर सामने के दृश्यों को ढक रहा था।

उसके पास बिहार के एक जमीन्दार बैठे हुए थे, जो कि शायद गंगोत्री यात्रा करने के लिए जा रहे थे। वे उससे वहाँ की जानकारी प्राप्त करते हुए, हिचकते पूछ बैठे कि कहीं रास्ते के कस्बे की दूकान में ह्वस्की मिलेगी। उसके मना करने पर उनकी आस्था उस तीर्थ स्थान पर से हट गई। लेकिन अखिलेश ने तो बताया कि देशी शराब की भट्टियां मिलेंगी, जहां कोदो की दारू आसानी से प्राप्त हो सकती है। बस उनका

चेहरा खिल उठा। वे गदगद स्वर में अपनी यात्रा की सारी तैयारियों का वर्णन करने लगे। कई आदतें बचपन से पड़ गई हैं, अतएव वे बेबश हैं। भला आज पचपन साल की अवस्था में वह आदत कैसे छूट सकती है। वे हरिद्वार में सब कुछ समान ले लेना चाहते हैं। उन्होंने उसे एक लम्बी सूची दिखलाई।

तभी किसी ने पूछा, "महाराज आप लोगों ने तो यवनों···।"

यह सुन कर उनका राजपूती खून उबल आया। वे बात काट कर बोले, "कांग्रेसी गड़बड़ न करते तो एक मुसलमान आज वहां नहीं दिखलाई पड़ता। हम लोगों ने पूरी फौजी तैयारी करली थी। गांव के गांव अपने हो गए थे। हम मर्दों से लड़ते थे, मुसलमानों की तरह उनकी बहू-बेटियों को हमने नहीं छेड़ा। हम धर्म के पक्के हैं। मुसलमानों की बहू-बेटियों को घर में डाल लेना राम राम! हे भगवान भयंकर कलयुग आ गया है।"

अब तो सब मुसाफिरों का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हो गया था। केवल वह अधेड़ और उसका परिवार अपने को अकेला पा रहा था। इस प्रतिहिंसा में वे अपने जीवन की सब से प्रिय वस्तु खो चुकी थी। वे अनाथ थे। लेकिन डिब्बे का वातावरण बदल चुका था। एक सज्जन खड़े हो गए, बोलने लगे, "हिन्दू धर्म मिट रहा है। जब तक कांग्रेस का नाश नहीं हो जाता, हमारी रक्षा नहीं हो सकती है। गढ़मुक्तेश्वर में जाटों ने बहादुरी की कि यवनों को गंगा में बहा दिया और उनकी औरतों को घर में डाल लिया। नोआखाली का सही बदला उन लोगों ने लिया है। कांग्रेस ने तो उल्टे हिन्दुओं पर जुल्म ढाया है।"

फिर वे भगवान और धर्म के नाम पर पर्चा बांटते हुए कहने लगे, हिन्दू धर्म की रक्षा करो; गायमाता का कलयुग में अपमान हो रहा है।" अब वे सबके आगे खड़े हो कर गौशाला के लिए चंदा करने लगे।

कुछ खास सा उत्साह लोगों में न देखकर, चुपचाप बैठ गए।

लेकिन तभी कोने में बैठे हुए दो मुसाफिर आपस में झगड़ पड़े। एक चिल्ला रहाथा, "बड़ा आया बहादुर बन कर, भगोड़ा कहीं का। मर्द था तो वहीं मुसलमानों से लड़ता। अपने भाइयों को लूट कर, यहां कारोबार फैलाने आया है। हरिद्वार और देहरादून में वे तीगुने-चौगुने दाम लगा कर जायदाद मोल ले रहे हैं। शाले कहते हैं, शरणार्थी हैं। हमी पर धौंस! सर पर सवार हो रहा है।"

वह लंबा पंजाबी चुप था। वह डर रहा था कि झगड़ा बढ़ाकर वह जीत नहीं पावेगा। पर दूसरा तो मनमानी गाली दिए जा रहा था। तभी एक युवती उठी और मधुर वाणी में बोली, "क्या कहते हैं जी। हम तो बड़े दुःखी हैं। सब मुसलमानों ने लूट लिया। आप हिन्दू भाई हैं। आपके आसरे यहाँ आए हैं...।"

झगड़ा निपट गया था। किसी ने उस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया। गौशाला बनाने वाले महाशय भी अगले स्टेशन पर उतरने की सोच कर, खिड़की से बाहर झांकने लगे। उनके दिमाग में गौशाला की इमारत से अधिक शाम का रंगीला कार्यक्रम था। पहले आमदनी अधिक थी। अब सब काँग्रेसी हो गए हैं। धर्म की बात नहीं सुनते। भगवान को नहीं मानते। वे भी कुरता, धोती और जवाहर-कट पहनते हैं; पर लोगों की श्रद्धा के पात्र फिर भी नहीं बन पाए हैं।

अखिलेश तीन-चार दिन के लिए हरिद्वार जा रहा है। वह जानता है कि हरि की पैड़ी आज अपनी केंचुली बदल चुका है। सेठों के दान से उसमें एक नई चमक-दमक आ गई है। वह जानता है कि 'राशन' के इस युग में भी कई मन आटे की गोलियां भक्तजन प्रति दिवस मछलियों को खिलाया करते हैं। भले ही म्युनिसिपेल्टी ने मछलियां मारने की मनाही करदी हो; उनमें से अधिक शाकों के गले से प्रति

दिवस आसानी से उतर जाती हैं। वह उन महन्तों के महीनों गुप्तवास रहने की बात सुन चुका है। उसे फकीरों के अखाड़ों की बातें भी ज्ञात हैं। जहाँ कि चारों धाम की यात्रा से लौटे हुए साधु, बड़ी-बड़ी रात तक सुलफे की चिलमें फूँकते हुए, उन देशों के यजमानों का हाल-चाल बताते हैं। वे वहां की भूगोल की पूरी जानकारी रखते हैं। साथ ही साथ अन्य हलचलों पर भी गंभीरता से विचार करते हैं। उसने वहां की रास लीलाएँ देखी हैं। जीवन पर धर्म के इस हथियार का पूरा-पूरा ज्ञान उसे है तथा आज फिर वह धार्मिक भावनाएँ किस भाँति उभर रही थीं, वह उनसे परिचित है।

उसने डिब्बे के भीतर दृष्टि डाली। एक कोने में कुछ फौजी नीली वरदी पहने हुए बैठे थे। वे पलटन की नौकरी से निकाल दिए गए हैं। अब अस्थाई रूप से कुछ दिनों के लिए अपने गांव जा रहे हैं। वह युद्धकाल कल की बात हो गया है। पर उसकी याद ताजी थी। उसकी स्मृतियां मुनाफाखोरी और चोरबाजार आज भी देश पर छाया हुआ था। सुना था कि युद्ध के बाद अँग्रेज जाने वाले थे और भारत स्वतंत्र हो जायगा, यह भावना सबके मन में थी। लेकिन युद्धकाल के मुनाफे से भरी हुई तिजोरियां खोल कर सेठ लोग नया रोजगार फैला, राष्ट्रीय सरकार को भुलावे में डाल रहे थे। साम्राज्यवाद ने हिन्दू तथा मुसलिम चेतना को उभार कर देश को गृहयुद्ध की आग में झोंक दिया था। सदियों पुराने सनातन् आपसी बन्धन टूट गए थे। सारा देश इस अंधी आँधी से पागल हो उठा था। अकाल ने बंगाल देश की छाती को चीर कर वहाँ जिस भाँति एक तूफान ला दिया था, पंजाब आज उसी ओर बढ़ रहा था। फौज से लौटे हुए किसानों के बेटों को धार्मिक जिहाद में झोंक देने की तैयारी हो चुकी थी। सालों के बाद युद्ध से लौटे हुए नौजवान अभी अपनी थकान मिटा, अपने परिवारों में ठीक तरह से जम भी नहीं पाए थे कि एक नया बवंडर

उठ गया। वे आजाद देशों से लौटे थे। उनमें नया जोश था। वे उसे अपनी समझ से कहाँ तोल पा रहे थे।

वे फौजी डिब्बे में चुपचाप बैठे हुए बीड़ियां सुलगा रहे थे। वे खेतिहर मजदूरों के बेटे ही हैं। उनके बंधे हुए बिस्तरों से मग लटक रहे थे। उनके चेहरों पर वह युद्धकाल वाली जिज्ञासा नहीं थी। उनको आज अपने भविष्य की खास परवा नहीं है। वे आज पिछली बीती युद्धकाल की घटनाओं पर कभी-कभी सोचकर हँस भर देते हैं।

वे आज यह सा पाते हैं कि अब उनकी समाज में कोई खास हैसियत नहीं है। वे अपने को भले ही विजयी सैनिक मान लें, जनता इसे स्वीकार नहीं करती है। जनता और उनके बीच एक खाई १९४२ के आन्दोलन ने डाल दी थी। जनता उसका उपहास सा उड़ाती है। वे इस हिन्दू और मुसलमान के झगड़े को नहीं समझ पा रहे थे। फौज में तो सब एक थे। पर अभी तो उनको अपने परिवारों में जाना है। आगे क्या होगा, वह देख लेंगे। भरती तो जल्दी ही खुलेगी......।

उधर एक परिवार मसूरी हवाखोरी के लिए जा रहा था। गृहस्वामिनी पूर एक बर्थ पर लेटी हुई थी और बच्चे सो रहे थे। वह इस शोरगुल के बाद सोने की निरर्थक सी चेष्टा कर रही थी। एक बार आँखें खोलकर उसने पति से पूछा था कि गाड़ी देहरादून कब पहुँचेगी और उत्तर पाकर आँखें मूँदली थीं। उसे डिब्बे के भीतर की बातों के प्रति कोई उत्साह नहीं था। न उसका नारी दर्प उन युवतियों को देख कर ही पैना हुआ था। उसे भारत की स्वतंत्रता या पंजाब की करुण-कहानी से दिलचस्पी कब थी! गृहस्वामी जितने दुबले थे, उसके विपरीत श्रीमतीजी मोटी थीं। गृहस्वामी ने तो नीचे पड़ी हुई पुरानी पत्रिका उठाई। जिस पर कि हल्दी के पीले दाग पड़े हुए थे। एक बार

देखकर उसे रख दिया। अब अखिलेश की किताब उठाई। उसके पन्ने पलटे और एक कोने में रख कर पूछा, "यह तो प्रचार पुस्तिका लगती है।"

"इसकी घटनाओं पर आप कह रहे हैं?"

"जी नहीं, लिखने की शैली पर। बंगाल के अकाल की सारी जिम्मेवारी मुसलिम लीग और कम्यूनिस्टों पर है। मैं उन दिनों कलकत्ते में था। इस्फानी साहब ने लीग की थैली भरी और कम्यूनिस्टों ने राशन की बात उठा कर क्रान्ति के रास्ते में रोड़ा लगाया।"

अखिलेश उनके 'सूटकेश' पर लिखे हुए खिताबों को पढ़ चुका था, जिनको कि अंग्रेज उपनिवेशों के साम्राज्यवादी समर्थकों को देकर, देश पर हुकूमत करने का हथियार उनको बनाया है। बंगाल के भूख से मर जाने की कहानी उपनिवेशों की गुलामी की एक सच्ची तसवीर थी। वह मानवीय स्वार्थों का एक व्यंग था। वह कुछ बोले कि कहा उन्होंने, "मैं उन दिनों कलकत्ते एक मामले में गया था। सारी बदमाशी मुसलिम लीग की थी। लार्ड वेवल वहाँ न गए होते तो और तबाही आती। पंजाब को देखिए......।"

"पंजाब की मिसाल आप ले रहे हैं। वहाँ का मध्यवर्ग फैशन का गुलाम हो गया था। वहाँ का मझोला किसान अपने खेतों की फसल पर फूला नहीं समाता था। उनके बच्चे फौज में थे। सेठों का बोलवाला था। कांग्रेस कमजोर थी। वर्ग चेतना नहीं थी। अतएव आज सेठों के मंत्रिमंडल के बदले गवर्नर का राज है।"

"आप अभी नौजवान हैं। मेरा बड़ा लड़का आपके ही विचारों का है। लेकिन कांग्रेसी और लीगियों से तो अंग्रेज ही अच्छे थे। आज तो हिन्दू जाति मर रही है। ये राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ वाले न होते तो शायद हिन्दू जाति मर जाती।"

अखिलेश चुपचाप उनकी बातों को सुनता रहा। इस पर उनका

पूरा विश्वास और भरोसा था। वे फिर कहने लगे, "मैं सन् १६२० से कांग्रेस को जानता हूँ। तब की कांग्रेस मर चुकी है। वे जिन्ना साहब की चालों में फँसते जा रहे हैं और सुना कि अब पाकिस्तान भी उनको दे-देंगे।"

वे उस पुस्तक को उठा कर उसके पन्न पलटने लगे और एकाएक बोले, "हरएक अपने को धन्ना सेठ समझ बैठा है। चोरबाजारी बढ़ रही है। चीजों के दाम ऊँचे हो रहे हैं। लड़ाई के बाद भी तो सांस लेने की फुरसत नहीं मिली है। हरएक चीज चोरबाजार में मिलती है। कांग्रेस से काम नहीं चलता है, तो शासन की बागडोर किसी और को सौंप दे।"

अब अखिलेश चुप नहीं रह सके. कहा ही उसने, "देखिए, कांग्रेस की राष्ट्रीय परम्परा है। उनकी तपस्या और त्याग भी है। यदि वे अपनी चिरसंचित निधि की रक्षा नहीं कर सकेंगे तो स्वयं ही उससे अलग हो जावेंगे। जनता के विश्वास पात्र ही उसमें रह सकते हैं। कांग्रेस की स्वस्थ आलोचना ठीक लगती है।"

ऐडवोकेट साहब चुप रहे और जमीदार साहब से बातें करने लगे। जमीदारजी कह रहे थे कि वे जमीन का एक भी टुकड़ा नहीं देंगे। कांग्रेस वाले चोर और डकैत हैं। एक भी भला आदमी वहां नहीं है। यदि बिहार में नेहरू ने हिन्दुओं पर हमला करने की धमकी न दी होती तो आज वहां एक मुसलमान नहीं रहता। अब राष्ट्रीय संघ वालों पर भरोसा है। कांग्रेस अगला चुनाव नहीं जीत सकती है।

तो दूसरे साहब ने ठंडी सांस लेकर कहा, "कांग्रेस पर हमने कितनी आशाएँ नहीं लगाई थीं। पर वे तो कुछ नहीं कर पा रहे हैं।"

अखिलेश ने फिर चुपचाप वह पुस्तक पढ़नी आरंभ करदी। उस अकाल में किसान, मजदूर और मध्यवर्ग मिट गया था। उसे देश आज भूल गया था। पर वह ऐसा कलकं था कि मानवता जिसे कदापि क्षमा

नहीं कर सकती है। और सामने वह अधेड़ बैठी हुई थी। उसकी आँखें सूजी हुई थीं। वह लट्ठे का मैला सफेद सलवार पहने थी। जिस पर कि हल्दी के पीले-पीले दाग पड़े थे। वह बुढ़िया तो आँखें मूँदे हुए कुछ सोच रही थी। उसके सिर के सुफेद बाल रेशों की भांति चमक रहे थे। उसे अपने वतन को छोड़ने का भारी दुःख था। वह इस नए आश्रय में अपने पोतों के कारण जा रही है। अन्यथा उसका जीवन के प्रति कोई मोह नहीं है। उधर वे युवतियां तो चंचलता से इधर-उधर देख रही थीं। एक ने अपनी अटेची खोली और आइना-कंघी निकाल कर ठीक तरह से बाल काढ़ लिए। आँखों में काजल डाल कर तिकोनी टेकुली माथे पर लगाई। अब अप्सरा की भाँति सजधज कर बैठ गई। दूसरी ने कुछ चुपके कहा, तो हँस दी।

उनके खिले हुए चेहरों के विपरीत जो उस दूसरे परिवार में धुंध-छाया हुआ था, वह चमक उठा। उसकी तुलना अखिलेश नहीं कर सका। उसका हृदय भर आया। अब तो एक उठी और अधेड़ के पास आकर पूछा कि वे कहां रहती थीं।

वह इस अदा से खड़ी थी कि अखिलेश का मन क्षुब्ध हो गया। बुढ़िया उसे कुछ समझा पाई थी कि कनखल आ गया। वह उन सोए हुए बच्चों को जगाने लगी। वे अधनींद से उठ कर रोने लगे। दादी बड़े का हाथ पकड़ कर छोटे बच्चे को समझाने की चेष्टा करने लगी। सबसे छोटा बच्चा तो मां की गोदी से चिपका हुआ था। गाड़ी एक झटके से खड़ी हो गई। बूढ़ी तो उठ कर बुड़बुड़ाने लगी कि उसका लड़का बहादुर था। यदि दस-बारह मुसलमान......! उसकी आखों से आंसू की धारा बह निकली। अखिलेश ने उनका सामान उतरवा दिया। गाड़ी छूटी। अखिलेश उन पर कुछ भी नहीं सोच पा रहा था। जब तक कि वह उनको भली भांति पहचान ले, वे तो जीवन में पीछे छूट गए थे। वह कुछ भरोसा भी कहाँ कर पाया था। उस छोटे प्लेटफार्म

पर उतरने के बाद मानों कि उनसे उसका कोई मानवीय सम्बन्ध नहीं रह गया हो।

लेकिन याद आ रहे थे, उस अधेड़ के आंसू, जो कि अपना देश और स्वामी खोकर इतनी दूर अपने भाई के आश्रय में आई थी। उसकी कच्ची गृहस्थी का पूरा भार संभवतः उसका भाई नहीं उठा सकेगा। यह देश भिन्न है। यहाँ सभवतः वह स्वस्थ और सुन्दर जीवन नहीं मिलेगा। इस गृह युद्ध ने तो जीवन के टुकड़े-टुकड़े कर डाले थे।

गृहयुद्ध······! इनसानों के आपसी स्वार्थ धार्मिक मतभेद के नाम पर देश के टुकड़े-टुकड़े करने तुल गए थे। देश की राजनीति को बनाने में जनता का हाथ नहीं था। अन्यथा आज उस बुढ़िया को अपना देश न छोड़ना पड़ता। डिब्बे में कुछ सूना-सूना सा लग रहा था। मानो कि वह परिवार उस गृहयुद्ध का अवशेष था—बचा-खुचा एक निर्जीव अंग? परिवार का स्वामी······, वह फेरी लगाता था। लाखों नागरिकों की भांति मजदूरी करके अपने परिवार का पेट पालता था। पिछले महायुद्ध के भारी झोंके के बीच किसी भांति परिवार की रक्षा करने में सफल रहा। एक दिन झुटपुटे में वह शायद घर लौट रहा होगा कि किसी ने उसके छुरा भोंक दिया और वह अपने अरमानों को अपने दिल में दबा कर चुपचाप सो गया। वह गरीबों का आपसी झगड़ा नहीं था। न वह डकैती थी। वह धन की प्राप्ति के लिए हत्या भी नहीं थी। वह किसी विरोध का प्रश्न नहीं था। वह मजहब का एक अंधविश्वास था, जिसे उभार कर, नेताशाही 'जीवित' थी और सेठ साहूकारों से गठबन्धन कर जनता की क्रान्ति को नष्ट कर रही थी।

एक युवती ने तो उसकी किताब उठा कर नम्रता से पूछा, "ले लें!"

वह कब वहाँ चली आई, अखिलेश की समझ में नहीं आया। वह तो जीवन के विरोध की बात सोच रहा था। तभी उसका ध्यान दूसरी

युवती की हँसी ने आकर्षित किया। वह अपने साथी से कुछ कह रही थी। अब वह गुनगुनाने लगी:—

जवानी लुट गई की कराँ
······की कराँ

उसके कानों में वे शब्द चुभ गए। उस स्वर में एक ऐसी भावुकता थी कि जीवन के प्रति एक अवरोध खड़ा हो जाता था। जो गति उस अधेड़ में मिली, उसी को वह युवती व्यर्थ रोक लेने की चेष्टा कर रही थी। मानवता तो गृहयुद्ध में नष्ट हो गई थी। वह साम्प्रदायिक जिहादों में जल कर राख हो चुकी थी। उस अधेड़ के आंसू उसे सींच कर, एक नया मानवीय पौधा उगाने में सफल हो रहे थे।

दूसरी युवती तो एक खाली पींजरे को देख कर हँस पड़ी। वह ऊपर लटक रहा था और वह परिवार उसे ले जाना भूल गया था। वह लोहे का बहुत ही भद्दा पींजरा था। वे दोनों उसे देख रही थीं। शायद उसमें कभी कोई पक्षी कैद रहा होगा। वह तोता-मैना अथवा कोई और पक्षी होगा। परिवार उसे बहुमूल्य वस्तु की भांति साथ लाना नहीं भूल सका था।

—वह सामने बाहर देख रहा था। वहाँ दो पंजाबी एक बड़े आरे से लकड़ी का चिरान कर रहे थे। सोचा उसने कि उस युवती का भाई भी ऐसा ही काम करता होगा। उस मजदूरी का सहारा कच्चा लगा। जब कि देवताओं की उस छाया में चोरबाजार खूबी के साथ चल रहा था और साधारण चीजों के दाम सात-आठ गुने बढ़ गए थे। तब क्या उस लूले परिवार को आश्रय देना उसके लिए सं भव होगा। जीवन की यह अपेक्षित विभिन्नता अखरी, पर वह चुप रहा। लगा कि वह उस खाली पींजरे की भांति है, जो केवल एक ढांचा है। प्राण और गति वहाँ नहीं हैं। वह तो केवल एक व्यक्ति था। लेकिन आज का यह समाज,

सांस्कृतिक परम्परा ! लेकिन सम्पूर्ण देश तो उस खाली पींजरे के भांति ही लगा; बंगाल और फिर बिहार ! जहां कि जीवन को व्यर्थ कैद कर लेने की चेष्टा हो रही थी। वहाँ मानों कि सम्पूर्ण स्नेह बन्धन टूट चुके थे।

वे युवतियां भी अपना सामान ठीक करने लगीं। उनको उस पींजड़े से कोई मतलब नहीं था। उनको भविष्य की कोई चिन्ता नहीं थी। उनके कानों के सुन्दर टॉप के पत्थर सुबह की धूप की किरणों में कई रंगों में चमक रहे थे। जब कि वह पिछली अधेड़ भद्दे से गिलट के गहने पहने हुए थी। वह बार-बार इस तुलना से मानो कि जीवन के किसी मोड़ को समझने की चेष्टा कर रहा था। एक उसके पास आकर पूछ बैठी, "कहाँ जाना है जी ?"

"हरिद्वार !"

"क्या करते हैं ?"

"घूमने आया हूँ।"

"कैसा शहर है जी। लाहौर तो......?"

"अच्छा ही है।"

"हम तो शरणार्थी हैं जी......सब कुछ लुट गया। अब आप लोगों के यहाँ आए हैं जी। सुना देहरादून अच्छा है। यहां मन नहीं लगेगा तो वहीं चले जावेंगे।"

उसकी बातों के बाद भी अखिलेश उसके प्रति कोई सहानुभूति नहीं बटोर सका। वे शरणार्थी हैं। बार-बार मन में कोई चोट करता था, पर वह बात हृदय में नहीं पैठ पाती थी। लाहौर उसने कभी देखा था। वहाँ की दिलपसन्द और मनमोहनी छबि वह भांप चुका है। पर ये जो एकाएक हरिद्वार और देहरादून की ओर धनी परिवार भाग कर आ रहे थे। उन भगोड़ों में एक ऊँचा वर्ग था, जो कि अभी अपने धन को यहाँ फैला रहा है और यहाँ के व्यापार में हिस्सा बटाने के लिए उत्सुक था। चीजों के दाम बढ़ रहे थे। स्थानीय मध्यवर्ग इस नई मँहगी के कारण उन

पंजाबी सेठों; से घृणा करने लगा था। सीमाप्रान्त के जो गरीब शरणार्थी आए थे, उनके प्रति सब की स्वाभाविक सहानुभूति थी।

गाड़ी तो प्लेटफार्म पर फैल गई थी। मुसाफिर उतर रहे थे। उन युवतियों के अभिभावक आ गए थे। स्टेशन पर दूर-दूर तक ऊँचे मध्यवर्ग के पंजाबी परिवार उतर रहे थे, जिनके सलवार, कुरते और ओढ़नी की झिलमिलाहट आखों में तैरने लगी। और जो निम्नवर्ग के परिवार थे, वे मुरझाए से जीवन के भविष्य की ओर उदासी से देख रहे थे। वे अपने पुराने जीवन को भूल जाना चाहते थे। पर वे युवतियाँ तो नागिन की भांति अपनी पुरानी केंचुली बदल कर चमक रही थीं। वह नई चमक अपूर्व लगी।

वह चुपचाप बैठा का बैठा रह गया। लोग उतर रहे थे। वह सूना पींजड़ा लटका हुआ था। उसने उसकी ओर देखा; वह तो मौन सा अपने पुराने स्वामियों के अनाथ हो जाने पर उनका मजाक उड़ाता हुआ हिल रहा था। वह युवती भी तो अपने लाहौर वाले पींजड़े, जहां उसका परिवार सालों कैद रहा है, आज उससे भाग आई है। उस कैद से आस्था हट गई थी; पर वह स्वतंत्र आज भी नहीं है। उनकी गृहस्थी का आर्थिक ढाचा गृहस्वामी के मर जाने पर टूट गया है। वह उजड़ा हुआ परिवार उस भार को अपने एक निकट के स्नेही को सौंपने आया है। जान कर भी कि यह परिवार युद्धकाल के भारी बोझे में चटक चुका था। पर उसका एक मात्र सही सहारा वही था। स्नेह की वह अन्तिम डोरी थी।

अखिलेश ने डिब्बे से बाहर नजर डाली। स्टेशन पर अपार भीड़ थी, जो कि अब छंटने लगी। चुपचाप उतर कर उसने एक कुली को अपना सामान सौंप दिया। लेकिन कुली तो भाव तोल करता हुआ कहने लगा कि वह एक रुपया से कम नहीं लेगा। उसने चुपचाप स्वीकार कर लिया। चलते-चलते वह कुली कहने लगा, "बाबूजी ये पंजाबी बड़े

झूठे होते हैं। पैसा वादे पर नहीं देते, उलटे धौंस गाँठते हैं। इस पर कहते हैं कि हम शरणार्थी हैं। लाखों रुपया तो लूट कर लाए हैं।"

पंजाबी! अखिलेश सोचने लगा कि पंजाब तो शहरों में नहीं रहता है। ये लोग वहाँ के किसान या मजदूर नहीं हैं। ये तो ऊँचे मध्यवर्ग के अवसरवादी व्यक्ति हैं; ठेकेदार और पैसे वाले! झूठ बोलना उनका पेशा है। अंग्रेज एक वसीयत उनको सौंप गए हैं कि उनका चरित्र नष्ट कर दिया है। वे एक सामाजिक व्यवस्था बना गए; एक वर्ग की रचना उन्होंने की। लेकिन यह सब तो उसे कोरी भावुकता लगी। वह उस अपार सी भीड़ के बीच खो गया

......रात्रि को अखिलेश गंगा के किनारे अपने साथियों के साथ घूम रहा था। चारों ओर हरि की पैड़ी के फैले हुए प्लेटफार्म पर सैकड़ों परिवार बैठे हुए थे। बिजली की रोशनी की झिलमिलाहट में गंगाजी का पानी काला-काला सा लग रहा था। सामने वाले पुल पर बल्ब लट्टू की भाँति चमक रहे थे और गंगा का पानी छप-छप, छप करता हुआ उस प्लेटफार्म पर थपेड़े मार रहा था। वे वहां निरुद्देश्य से घूम रहे थे।

तभी अखिलेश ने देखा कि वे सुबह वाली युवतियां सामने से आईं! वह उनका बनाव श्रृंगार देख कर दंग रह गया। वह चुपचाप उनको निहारता ही रहा। तभी एक साथी दूसरे के कान में कह रहा था, "राजाराम सुबह कह रहा था कि पीपल के पेड़ के पास वाले मकान पर सुबह ये दोनों लड़कियाँ आई हैं। बुढ़िया के तो मिजाज ही नहीं मिलते। कहा कि महन्त के छोकरे से पहले वादा कर चुकी हैं। कल के लिए सौ पेशगी दिया है।"

अखिलेश के हृदय पर किसी ने भारी चोट मारी। उसे बंगाल का वह बड़ा अकाल याद आया जिसने कि नारी को अपने तन बेचने पर विवश किया था; और आज! वह आखें फाड़-फाड़ कर चारों ओर देखने लगा। मन्दिर में आरती हो रही थी। घंटे बज रहे थे। सामने शरणार्थियों के परिवार सीढ़ियों पर बसेरा ले रहे थे। उनमें कोई खास सौन्दर्य नहीं मिला। वे उसे निर्जीव और कुरूप लगे।

अब वह गंगा की धारा की ओर देख रहा था, जहाँ कि कभी-कभी मछलियां उठ कर छुप-छुप करती थीं। वह पुल का रेलिंग पकड़े हुए अब चुपचाप उस ओर देख रहा था।

उसका साथी कह रहा था, "अखिलेश गधा है। आज उसे ह्विस्की पीनी पड़ेगी और वे छोकरियां...! अखिलेश भाग नहीं सकता है।"

गृहयुद्ध, धार्मिक जिहाद और नारी का व्यापार! सोचा अखिलेश ने कि क्या आज सचमुच मनुष्य पशु बन गया है। उसे उन लड़कियों का खिलखिलाना याद आया। लेकिन वह अधेड़ जो कि नया आश्रय ढूँढ़ने आई है।

अखिलेश तभी चौंक उठा। एक युवती ने दूसरी से कहा कि वे रेल वाले साथी हैं। वह तो भीड़ में रल गया था। वह मानवता के इस पतन पर सोच रहा था। जिसका पथ प्रदर्शन धनी और सेठों का वर्ग कर रहा है, पर भविष्य उनका नहीं है...

वासना के बाद

सुशीला गुस्लख़ाने से नहा कर बाहर निकली थी कि यकायक चीख़ पड़ी। उसके पैरों से बिल्ली का एक छोटा सा बच्चा टकरा गया था। वह तेज़ी से आगे बढ़ गई और पूजा की कोठरी के बाहर से हांफते हुए बोली, "मांजी, कहीं से एक बिल्ली का बच्चा चला आया है।"

बूढ़ी सास ने माला फेरना रोक कर हँसते हुए ताना मारा, "तो मोहल्ले में लड्डू बांट और मायके वालों को तार से खबर भेज कि वे पालना बनवा रखें।" कह कर वह मोक्ष प्राप्ति के लिए कुछ गुनगुनाती हुई माला फेरती रहीं।

सुशीला को बिल्ली से कोई विशेष स्नेह नहीं है, बल्कि उस जाति से घृणा है। उसे बिल्ली से बहुत डर लगता है। बहुत स्वार्थी और चोर जानवर है। वह स्वयं एक बिलौटे से बहुत तंग है, जो रोज ही उसे परेशान करता है। दूध पी जाएगा, बरतन उलट देगा और उसके बाद वह कब किस चीज़ पर धावा बोल दे—यह कोई नहीं जानता। उसने सारे घर को बमपुलिस ही समझ लिया है। जगह बेजगह ख़राब कर देता है। कभी खड़ा होकर पूँछ उठा के ऐसा घूरता है कि उसे देख कर डर लगने लगता है।

उसका रंग भी अजीब सा काला और भूरा है। किसी ने उसकी एक आंख फोड़ डाली है। इसीलिए उसका चेहरा काफ़ी डरावना लगता है। सब के सो जाने पर मध्य रात्रि को वह जब बरतनों पर कूदता है या जालीदार आलमारी में रखी हुई चीज़ों को निकालने की चेष्टा करता हुआ खड़बड़ाहट करता है, तो सुशीला को आधी नींद से उठ कर भागना

पड़ता है। तब वह चुपचाप ऊपर रसोई के छप्पर पर उचक कर छिप जाता है। फिर जोर से भारी स्वर में 'म्याऊँ, म्याऊँ' करता है कि सारे मोहल्ले में उसका स्वर गूंज उठता है। सूनी रात में सुशीला अकेली डर जाती है और भाग कर पति के पास चुपचाप चली आती है। बड़ी देर तक उसका दिल धड़कता रहता है और उसे नींद नहीं आती।

सास के व्यंग और यकायक मायके पर होने वाले हमले के कारण वह मुरझा गई। यह सच है कि वह उस परिवार के भविष्य के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं हो पाई, पर इसमें उसका क्या दोष है? पहले वह उन बातों को चुपचाप सुन लेती थी। पर अब उसका दिल पके हुए फोड़े की भांति भर चुका है।

उसकी आंखें डबडबा आईं और वह चुपचाप बरामदे पर एक कोने में खड़ी हो गई। उसका हृदय एक बार तो विद्रोह से सुलग उठा। उसे लगा कि परिवार को पांच साल में एक लूली अंधी सन्तान तक न प्रदान कर सकने के कारण उसका दर्जा घट गया है। वह परिवार का एक आवश्यक अंग नहीं बन पाई है। लेकिन यह तो उसके अपने हाथ की बात नहीं है। इसीलिए वह अपने को अपराधी मानने के लिए कदापि तैयार नहीं है।

उसकी एक सहेली ने उसे समझाया था कि सन्तान हो जाने पर भी कोई ख़ास सन्तोष नहीं होता है। उसके बाद मृगतृष्णा बढ़ जाती है। जीवन में उदारता नहीं रहती। भावनाएँ संकुचित हो स्वार्थ में बदल जाती हैं। जीवन का वास्तविक सुख तो भविष्य की बलवती कल्पना के लिए जीवित रहने में ही है।

वह सहेली हर दूसरे वर्ष एक बालक परिवार को समर्पित कर स्वयं रोगिणी हो गई थी। परिवार की आमदनी से ख़र्च बढ़ गया था। पति-पत्नी का बात-बात पर मनमुटाव हो जाता था।

लेकिन कल्पना में जीवन-मुक्त रह कर सुन्दर भविष्य की कोई आकांक्षा मन को प्रफुल्लित नहीं कर पाती है। वह अपने को पूर्ण नहीं पाती है—एक अभाव अखरता है। एक काल्पनिक भावना फिर भी प्रबल थी कि शायद किसी दिन वह मां बनेगी। वर्तमान सुखद नहीं है, फिर भी अज्ञात आशाएँ निराशा से उसकी रक्षा करती थीं। अपनी इस कुरूपता का वैयक्तिक डर उसे था और वह जानती थी कि उसका यह बाहरी रूप-रंग, आचार-विचार और व्यवहार परिवार के लिए किसी महत्व का नहीं है।

लेकिन सुशीला परिवार में अपनी प्रतिष्ठा की भूखी थी। वह परिवार के भीतर अपनपा की एक स्नेह डोरी के बीच रहना चाहती थी। सास कुछ कहे, वह अपराधी की भांति उससे किसी प्रकार का भी समझौता करने के लिए तैयार है। सास के सब आदेश अपेक्षित मानती आई है। कई दाइयों का इलाज करा चुकी है। सब उसे आश्वासन देती हैं कि ऐसी कोई बात नहीं है। अस्पताल की बूढ़ी नर्स ने तो कहा था कि यह तो खुदा की देन है। एक छोटा सा ऑपरेशन कराने की सलाह दी थी, जिसे स्वीकार कर के वह एक सप्ताह तक अस्पताल के ख़ास वार्ड में पड़ी रही। फिर परिवार के पंडितजी ने उसकी जन्म कुंडली देख कर बताया था कि सन्तान के योग हैं। गोपाल मन्त्र जपने का आदेश दिया था। एक वैद्यजी के नुस्खे भी छः सात महीने चालू रहे। इन सब से जब कुछ नहीं हुआ तो उसने हार कर सबके प्रति उपेक्षा ठानली और भाग्य की कच्ची दीवार के सहारे आज अपनी समस्त आशाएँ खड़ी कर के वह निश्चिन्त हो गई है।

उस दिन वह अपनी सहेली के आगे फूट-फूट कर रोई थी। वह उसके बच्चों के लिए कई ऊनी कपड़े बुन चुकी है, पर बच्चे फिर भी चाची से ख़ास स्नेह नहीं रखते। अपनी मां की फटकार सुन कर भी सदा उसी के समीप खड़े रहते हैं। चाची को वे परिवार से बाहर का

अतिथि भर मानते हैं। वह भले ही उनके लिए टॉफ़ी, लेमनड्रॉप और बिस्कुट ले जाए, वे उन्हें खा कर फिर उसके पास से दूर भाग जाते हैं। एक बार वह छोटे मुन्ने को अपने साथ ले आई थी, किन्तु आधी रात को ही उसने जो माँ की पुकार मचा कर चिल्लाना शुरू किया, तो उसे उसी वक़्त नौकर के साथ भेजने के लिए वह बाध्य हो गई। फिर उसे रात भर नींद नहीं आई। अपने व्यक्तित्व का अभाव उसे अखरा।

यह साधारण बात नहीं थी। यह तो जीवन की एक ऐसी कठिन परीक्षा थी, जिसमें सफल होना आसान न था। तभी उसे अपने प्रति एक झुंझलाहट हुई कि उसका जीवन व्यर्थ है। किसी को उसके प्रति सहानुभूति नहीं है। अपने इस असमर्थता वाले निम्न आत्मभाव को छिपाने में वह सफल नहीं हो पाती। यह सब एक कुरूपता का प्रभाव उसके मन पर डालने लगा।

कभी-कभी सास का व्यवहार असह्य हो उठता था। वह उसकी अवहेलना को आसानी से पहचान लेती। अपने विवेक से जीवन के प्रति मोह पर सोचती हुई पाती कि पति के साथ रह कर भी उसका जीवन अधूरा है। वह बेकार एक रोगिणी बन कर उस परिवार में पड़ी हुई है। यदि वह मर जाती तो एक भार हलका होता। वह परिवार के उस टूटे सामान की भांति है, जिसे उपेक्षा के साथ कबाड़ख़ाने में रख कर परिवार अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखता है। कभी-कभी तो वह अपने को परिवार की सीमाओं से बड़ी दूर पाती है। पति उदार हैं—यह एक भारी सन्तोष है। सास की फटकार सुन कर जब वह अपनी गुलाबी आँखें लेकर पति के पास आती है, तो वह हँस कर पूछते हैं, "क्या आज फिर गृहयुद्ध हो गया? कौन जीता—सामन्तवाद या समाजवाद?" यदि वह चुप रहती, तो वह मज़ाक़ करते, "दूसरा मोर्चा खोलने का इरादा तो नहीं है?"

इस दूसरे मोर्चे के खुलने की बात अब पुरानी पड़ चुकी है। मायके

जाने की धमकी आज नए युग वाला अस्त्र नहीं है। इसीलिए जब वह कोई उत्तर नहीं दे पाती, तो वह कहते, "सास-बहू के झगड़े को निबटाने की कोई व्यवस्था जब मनु महाराज लिख कर नहीं छोड़ गए हैं, तब भला मैं ही क्या करूँ? फिर मायके की लाड़ली बेटियों के लिए क्या हम कोई नई व्यवस्था बना भी सकते हैं?"

वह बात सुशीला के लिए असह्य हो उठती। मायका उसके लिए एक आफ़त की बात हो गई है। शादी के बाद ही सास ने दहेज देख कर मुंह फुला लिया था कि कंगाल घर की लड़की ले आए हैं, जिन्होंने लेन देन में साधारण शिष्टाचार की भी परवा नहीं की। यह बात थी तो अच्छे खानदान में लड़की देने की क्या सूझी थी? आगे जरा-जरा सी बात पर नुक्ताचीनी बढ़ती चली गई।

वह मां के व्यवहार को देख कर केवल हँस देते हैं। वह बहुत कहेगी तो जवाब देंगे कि, नए और पुराने युग के विचारों के बीच का संघर्ष देखें कौन जीतता है?

सास ताव में आकर लड़के को बहू का गुलाम घोषित कर देती है। मोहल्ले की सब सासों का दल अक्सर दिन में वहां अपनी गोष्ठी जमाता है और बहुओं को दिए गए नए अधिकारों की आलोचना करता है। अपनी आज की प्रतिष्ठा के अतिरिक्त उनको भविष्य की चिंता अधिक है। वे सब इस नतीजे पर पहुँचती हैं कि सास वर्ग का भविष्य उज्ज्वल नहीं है। वे अपने बचे-खुचे अधिकारों की रक्षा करना ही हितकर समझती हैं।

सुशीला को उस दल की बातों की कोई चिंता नहीं है, पर पति कभी-कभी जो अपनी मां का पक्ष ले लेते हैं, वह उसके लिए असह्य

हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह धौंस के साथ कहती है, "अच्छा, कभी तो मेरी मां के पास चलोगे! वहीं मजा चखाऊँगी।"

महेंद्र जानता है कि वह मजा चखना बहुत ही सरल है। किंतु ससुराल के प्रति उसका न कोई खास अनुराग है और न विराग सास बहू के झगड़े के बीच वह अपनी सास को वकील बनाने के लिए भी तैयार नहीं है।

सुशीला चुपचाप खड़ी थी। पर वह बिल्ली का बच्चा मानों उसे पहचान गया हो। उसने फिर उसे चौंका दिया। वह उसके पांव के पास खड़ा था। एक बार तो उसे गुस्सा चढ़ा कि उसी के कारण सुबह-सुहब उसे सास का आशीर्वाद मिला। फिर उसे पशुओं से खास स्नेह भी नहीं है, अतएव उसने नौकर को पुकारा, "भोला! भोला!!"

नौकर शायद अभी दूध नहीं लाया था। उसने स्वयं एक बार उस बच्चे को पकड़ने की चेष्टा की, पर जरा छूते ही सारे बदन में सिहरन फैल गई। अब उसने तय किया कि उसे भगा देना ही हितकर है। उसकी सास अकसर कहा करती है कि बिल्ली भ्रष्ट जानवर होता है। यह सोच वह एक बांस लेकर बच्चे को डराने लगी। लेकिन वह भागने का नाम ही न लेता था।

तभी भोला दूध ले कर आया। बिल्ली के बच्चे को देख कर उसने उसे चुपचाप गोदी में उठा कर सीने से चिपका लिया। उसे ले कर भीतर चला गया और रसोई से एक कटोरी में दूध ले आया। बच्चे को जमीन पर छोड़ कर कटोरी उसके आगे कर दी।

सुशीला आश्चर्यचकित सी देखती ही रह गई। वह बच्चा चुपचाप दूध पी रहा था, मानो बहुत भूखा हो। कभी-कभी वह कटोरी से बाहर मुँह निकाल कर कुछ देर सुस्ताता था। उसके बाल सफ़ेद थे और उन

पर सुंदर काली-भूरी धारियां पड़ी थीं। छोटा सा मुँह और आँखें चमकीली। अब वह फिर दूध पीने लगा। उसकी जीभ का धीमा स्वर सुनाई दे रहा था। दूध पीकर उसने अंगड़ाई ली और चुपचाप एक ओर पड़ी हुई कुरसी के नीचे बैठ गया। सुशीला कुतूहल के साथ कुरसी के पास आई और उसे अपने पास बुलाने की चेष्टा करने लगी। पर बच्चा उसी भांति छिपा रहा। सुशीला की समझ में नहीं आया कि वह उसे क्या कहे और कैसे बुलाए?

कुछ देर खड़ी रह कर वह न जाने क्या सोच भीतर पहुँची। महेन्द्र जाग कर भी अभी तक रजाई का मोह नहीं छोड़ सक रहा था। सुशीला सिरहाने खड़े हो कर बोली, "अब उठो भी। एक बिल्ली का बच्चा न जाने कहां से चला आया है। बाहर बरामदे में कुरसी के नीचे पड़ा है।

"बिल्ली का बच्चा!" महेन्द्र ने सिगरेट केस से एक सिगरेट निकालते हुए दोहराया। फिर उसे सुलगा कर बोला, "मैं समझा कि शेर का बच्चा है। नहीं तो सुबह-सुबह घर भर में एक नई चेतना नहीं आती।"

"सुनो, अगर हम उसे पाल लें..." आगे वह कुछ न कह महेन्द्र का मुँह देखने लगी कि वह क्या कहता है। अपनी इच्छा को भी वह उसकी सलाह के बिना पूरा नहीं कर पाती है, फिर सास के विरोध का भी डर था।

महेन्द्र सुन कर भी चुप रहा। सुबह ही बिल्ली के बच्चे का प्रसंग ले कर सुशीला आई है। आज उसने उसमें एक नया उत्साह कई सालों के बाद पाया है। वह शादी के कुछ दिनों पश्चात् निखरी हुई रही। उसने उसमें नया लावण्य पाया था, जो उसके समस्त व्यक्तित्व पर छा गया। उसकी आंखों, गति तथा अन्य व्यवहार में उसने एक नयापन देखा। उसका बचपन वाला ज्ञेय कुतूहल और विवेक

मानो कि लुप्त हो चुका हो। वह उसे एक दृष्टि से टकटकी लगा कर देखती रहती थी कि वह क्या कह रहा है।

फिर यकायक उसमें परिवर्तन आया। उसकी चपलता गंभीरता में परिणित हो गई। वह अब कम बोलती थी। किसी वस्तु के लिए उसका आकर्षण नहीं था। उसके चेहरे पर पीली सी झांई पड़ रही थी। वह किसी बात पर उत्साह प्रकट नहीं करती थी। उसने परिवार में मानो अपने को खो दिया। कभी-कभी वह उसकी गुलाबी आंखें भरी पाता। उसमें कोई जीवन नहीं मिलता। मायका भी आज उसके लिए खास लोभ की बात नहीं रह गया। वहां बिताए बचपन की सुनहरी स्मृतियाँ कोई समझौता नहीं कर पाती हैं।

जब महेन्द्र कुछ नहीं बोला तो उसने सफ़ाई दी, "सुबह न जाने कहां से चला आया। गुसलखाने के बाहर यकायक मिल गया।"

महेन्द्र उसमें छोटे बच्चों जैसा कुतूहल देख कर दंग रह गया। सुशीला को जीवन के प्रति कोई मोह नहीं है। वह भले ही सास से झगड़ा मोल न ले, पर आज उस मोरचे से चुपचाप हार कर नहीं लौटती है। आठ-दस बातें सुन कर, एक-दो आसानी से सुना भी आती है। महेन्द्र उनके झगड़े से भले ही अलग रहना चाहे, दोनों—मां और पत्नी—समय मिलते ही अपने पक्ष की बात सुना जाती हैं। दोष दोनों उसी को देती हैं। मां का कहना है कि बहू ने नकेल डाल रखी है और बहू की शिकायत है कि मातृ-भक्ति उमड़ पड़ी है।

भोला आ कर बोला, "बहूजी चीनी का डिब्बा रसोई की आलमारी में नहीं है।"

"मांजी से पूछ।"

"वह पूजा कर रही हैं।"

चीनी का राशन हो जाने के कारण मांजी को शक रहता है कि भोला रोटी के साथ चीनी खा जाता है। इसके अलावा उनका ख्याल

यह है कि वह चाय में भी आवश्यकता से अधिक चीनी पीता है। इसीलिए वह चीनी का नियंत्रण अपने हाथ में रखना चाहती हैं। सुशीला को यह नापसंद है। एक-दो बार इस विषय पर तनातनी हो चुकी थी। कुछ दिनों से चीनी का डिब्बा बाहर ही रहता था। आज यकायक इस बात को सुन कर वह चुप रह गई। लेकिन मांजी तो अभी एक घंटे और पूजा करेंगी। बोली, "मांजी को मालूम होगा। वह बतला देंगी।"

"मैंने पूछा था, पर वह तो मुंह फुलाए बैठी हैं।"

सुशीला हंस कर महेन्द्र से बोली, "आप जा कर अपनी मां को मनाइए ।

लेकिन स्थिति संभल गई। मांजी भीतर से भोला को पुकार रही थीं। वह चुपचाप चला गया। महेन्द्र ने सुशीला को देखा। वह अभी-अभी नहा कर आई थी। बाल भीगे हुए थे—वह उनको ठीक तरह से काढ़ नहीं पाई थी। चेहरे पर एक नूतन लावण्य झलक रहा था।

वह तो उसे भूल ही सा गया था। आज वह उसे पहचान लेने की चेष्टा करने लगा। वह एक साधारण घटना से बदल जाएगी, इसका उसे कोई ज्ञान नहीं था। एक बार उसने अखबार पर नजर डाली। सुशीला अनायास ही मन में समायी हुई सी लगी। अखबार के पन्ने पलट कर उसने उसे फर्श पर फेंक दिया। रजाई हटा कर उठ बैठा और पूछा, "बिल्ली का बच्चा कहां है?"

"बाहर बरामदे में कुरसी के नीचे।"

महेन्द्र उठ कर चुपचाप बाहर निकला और कुरसी के नीचे से बच्चे को पकड़ कर ले आया। पलंग पर बैठ कर उसे रजाई के भीतर ढक लिया। बच्चा वहां चुपचाप सो गया। सुशीला कुरसी पर बैठ गई। उसने एक बार रजाई उठा कर उसे सहलाने की चेष्टा की, पर फिर

डर कर हट गई। दोबारा जा कर कहीं उसने उसे हलके से सहलाया और बोली, "सुंदर बच्चा है ! और बिल्लियों की भांति बदसूरत नहीं है।"

सुशीला के उस खिले हुए चेहरे को देख कर महेंद्र बहुत खुश हुआ। उसने सोचा कि सुशीला के जीवन की एक कमी की अस्थाई पुर्ति तो हुई। वह जानता है कि सुशीला कितनी चिंतित है। तेईस पार कर चुकी है। वह उस से भले ही कह दे कि कोई बात नहीं है, पर डॉक्टर उसे विश्वास दिला चुके हैं कि मातृत्व का दर्जा पाना सुशीला के लिए संभव नहीं है। सुशीला मन-ही-मन फिर भी भविष्य की किसी सुखद कल्पना के लिए जी रही है। वह उसकी प्यास को पहचानता है। कई बार वह अपनी इस इच्छा को प्रकट भी कर चुकी है।

"कुछ मुँह मीठा तो करना ही होगा।"

"क्या कहा ?" सुशीला को कुछ संदेह हुआ।

"और कुछ न सही, जलेबियां तो आ ही सकती हैं। फिर अम्मा को भी वे नापसंद नहीं हैं। वैसे बजट फ़ेल हो जाने की कोई गुंजाइश नहीं। अभी तो महीने की आठ तारीख़ ही है।"

कोई और दिन होता तो सुशीला इसे बेकार ख़र्च कह कर टाल देती, पर आज उसने आध सेर जलेबी लाने की स्वीकृति दे दी। भोला जब बाजार जाने लगा तो महेन्द्र ने आदेश दिया, "देखो, चार गरम समोसे और लेते आना।"

सुशीला को समोसे बहुत पसंद हैं। वह पति की इस उदारता पर गद्गद हो उठी। जब नौकर जलेबियां ले कर आया तो उसने बांटनी शुरू कीं। महेन्द्र चाय पी रहा था। प्याला मेज पर रख उसने बिल्ली के बच्चे को उठाया और मेज पर बैठा कर उसे जलेबियां खिलाने लगा।

बच्चा टुकर-टुकर उसे देख रहा था। सुशीला इस अचरजपूर्ण व्यवहार पर मुग्ध हो गई।

पति-पत्नी ने आपस में मोहल्ले की बिल्लियों पर बातचीत करनी शुरू की। इस रंग की कोई बिल्ली वहां नहीं थी। काफ़ी सोच-विचार करने पर भी वे अनुमान नहीं लगा सके कि वह कहां से आया है। आख़िर यह तय हुआ कि उसे पाला जाए। महेन्द्र इसकी स्वीकृति मां से ले लेगा। यह प्रस्ताव मां के आगे रखना आवश्यक समझा गया कि अबके जाड़ों में यदि खास वर्ग की बुढ़ियाएँ तीर्थ-यात्रा का कोई कार्यक्रम निश्चित करें तो वह भी जाएँगी। सुशीला ने पूरी बांह का एक स्वेटर उनके लिए आज ही से आरंभ करने का निश्चय कर लिया। यह योजना बनाई गई कि 'भोला यात्रा जाने की बात का प्रचार करेगा, फिर सुशीला स्वेटर बुनने की बात कहेगी और महेन्द्र आसानी से अपनी स्वीकृति दे देगा। कुछ भी हो, वह बिल्ली का बच्चा अवश्य ही पाला जाएगा।

तभी यकायक वह बच्चा नीचे कूद पड़ा। सुशीला को उसे पकड़ने का साहस नहीं हुआ। बच्चा चुपचाप पलंग के नीचे बैठ गया। उसके नामकरण का प्रश्न महेन्द्र ने उठाया तो सुशीला बोली, "देखिए, इसका नाम खुशी रखेंगे।"

"खुशी!" महेन्द्र हंस पड़ा।

"देखिए, शायद..."

"भई, शायद क्यों, जरूर इसके आने पर खुशी होगी।" वह खिलखिलाया।

"आप तो..." सुशीला रूठ गई।

"क्या, सुशीला ?"

"देखिए न, अचानक सुबह ही वह अपने आप हमारे यहां आया है। बेचारा न जाने रात भर कहां रहा होगा। फिर भला..." उसका गला रुंध गया। आँखों में आंसू छलछला आए।

महेन्द्र उठ कर चुपचाप बाहर चला गया। कुछ देर बाद लौट कर आया, तो देखा सुशीला ने खुशी की मेज पर बैठा रखा है और उसे बिस्कुट खिला रही है। उसके व्यवहार पर उसे बड़ी हंसी आई। उसने सुशीला को गौर से देखा। आज उसे पहले-पहल अनजाने ज्ञात हुआ कि सुशीला बहुत निर्बल हो गई है। लगता था कि बीमार है। उसके चेहरे पर वह पुरानी ताजगी और स्वस्थता नहीं थी। आंखों के नीचे काली झांई साफ चमक रही थी। आज वह उसके दुःख का सही अंदाज लगा सका है। पहली बार समझा कि नारी के हृदय की सही थाह पाना आसान नहीं है।

सुशीला उसकी आहट पा कर भी चुपचाप बिल्ली के बच्चे से खेलती रही। कभी उसका मुँह खोल कर दांत देखती, कभी उसकी आंखों के भावों को अपनी पैनी दृष्टि से पहचानना चाहती। अब उसके पंजों को देख कर उसे कोई भय नहीं हुआ। वह बच्चा भी आश्रय पा कर चुप था। सुशीला यकायक चौंक उठी और पुलक कर बोली, "देखिए, यह तो 'घुर्र-घुर्र' करने लगा।"

"अम्मा ने कहा है कि एक बिल्ली का बच्चा तो घर में चाहिए ही था—चूहे बहुत हो गए हैं", महेन्द्र बोला।

सुशीला ने चुपचाप वह समझौते की बात सुनी और बिल्ली के बच्चे को रजाई के भीतर सुला कर रसोई में चली गई। बीच-बीच में कई बार उसे देख जाती थी। आज वह बहुत सतर्क थी। उसके व्यवहार में एक नई आशा और नया जीवन देख कर महेन्द्र कृतार्थ हो गया। आज तक मूक रहने वाली, अपने को व्यक्त न करने वाली नारी के हृदय का ताला टूट गया। महेन्द्र उसे देख कर मुग्ध हो गया।

लगभग डेढ़ महीना बीत गया। सुशीला ने अपने को खुशी को समर्पित कर दिया। जब महेन्द्र ऑफिस से लौटता तो वह उसकी दिन भर की शरारतों का जिक्र करती। बच्चा हर वक्त उसके पीछे-पीछे चलता था। अनजान बच्चा भूख लगने पर 'म्याऊँ-म्याऊँ' कर के उस से खाना मांगता था। अब वह आसपास के परिवारों में भी कभी-कभी चक्कर काट आता था। कभी तो आधी रात को 'म्याऊँ-म्याऊँ' कर के खाने की मांग करता था। महेन्द्र नींद टूटने पर कभी झुंझला कर कुछ कहता, तो सुशीला बात काटती कि वह पशु है। वह उसी वक्त उसे दूध-रोटी खिलाती और पलंग पर अपने पैंताने मसहरी के भीतर सुलाती थी। उसे डर था कि वह काला बिलौटा कहीं उस पर हमला न कर दे।

वह अपनी मालकिन से बहुत हिल-मिल गया था। वह खाना खाने के बाद इधर-उधर खूब कूद-फांद मचाया करता था। कभी वह किसी कोने में दुबक कर बैठ जाता। कभी पूँछ उठा तन कर खड़ा हो जाता और इस भांति उछलता था कि सब हँस पड़ते। सुशीला ने उसके खेलने के लिए कपड़े की एक गेंद बना कर सुतली से खूँटी पर लटका दी थी। बच्चा उस से खेलता रहता था। कभी सुशीला गेंद उतार कर जमीन पर इधर-उधर हिलाती थी तो वह बच्चा उस पर जोर से झपटता था।

भला, भोला अपनी शरारतों से बाज आता! वह कभी-कभी गोश्तवाले के यहां से छीछड़े खरीद लाता और बिल्ली के बच्चे को दिखा-दिखा कर ललचाता। वह गुर्रा कर उस पर झपटता और गोश्त पर ऐसा टूटता कि देख कर सब हँस पड़ते। भोला उसे धोखा देने के लिए अकसर कागज की पुड़िया बना लेता था। पर जब बच्चा उसके अंदर कुछ न पाता, तो भोला की शिकायत करने के लिए सुशीला के पैरों पर अपना

सिर रगड़ता या अपना बदन उस से सहलाता। जब भी सुशीला अपनी आलमारी खोलती तो खटका पा बिस्कुट या और कोई चीज पाने की लालसा में वह सुशीला की धोती का छोर पकड़ कर खींचता था। जब तक वह कोई खाने की चीज न पाता 'म्याऊँ म्याऊँ' करता रहता।

जब सुशीला रेडियो सुनती तो वह भी उचक कर उसकी गोदी में बैठ जाता था। यदि वह उसकी उपेक्षा करती तो वह 'म्याऊँ म्याऊँ' कर उसके पैरों पर अपना शरीर रगड़ कर खुशामद करता। यदि तब भी सुशीला उसकी ओर ध्यान न देती तो उसकी धोती का छोर पकड़ कर खींचता था। तो सुशीला मन-ही-मन हंस कर पुकारती थी, "खुशी!" और वह उचक कर उसकी गोदी में चढ़ जाता।

महेन्द्र को सुशीला का इतना लाड़-प्यार भला नहीं लगता था। वह सुबह अख़बार पढ़ता होता, तो सुशीला उसे छीन कर पुकारती, "खुशी!" और वह बिल्ली का बच्चा उस पर ऐसा झपट्टा मारता था कि अख़बार फट जाता। महेन्द्र मेज़ पर बैठा पैर हिलाता हुआ कुछ लिखता होता था, तो वह चुपके से उसके पैरों पर हमला कर देता। वह फिर भी चुप रहता, तो वह उचक कर मेज़ पर चढ़ जाता और हाथ का फ़ाउनटेन पेन पकड़ने की चेष्टा करता! अगर तब भी वह उसे नहीं पुचकारता, तो वह सच्चे सत्याग्रही की भांति चुपचाप काग़ज़ के ऊपर बैठ जाता था।

वह भले ही हँस पड़ता, पर कभी-कभी झुंझलाहट भी उठती थी। यदि कभी वह कुछ निकालने के लिए दराज़ खोलता तो वह उचक कर उसके भीतर बैठ जाता था। मज़ाक में वह दराज़ बंद कर देता और सुशीला को पुकारता। उसके आने पर पूछता था कि खुशी कहां है? वह इधर-उधर तलाश करती। पुकारती और अंत में उसे दराज़ के भीतर देख कर खूब हँसती थी।

किंतु महेन्द्र को सब से बुरा तब लगता था। जब वह आधी रात को मसहरी के बाहर से 'म्याऊँ-म्याऊँ' कर के आदेश देती थी कि

मसहरी उठा कर उसे अंदर रजाई के भीतर ले लिया जाए। या जब कभी वह भीतर से बाहर जाने के लिए संकेत करती। सब से ज्यादा गुस्सा उसे तब चढ़ता था जब रात को उसके बदले का खाना खाने के लिए वह काला बिलोटा आता और वह भीतर से गुर्रा के उसे भगाने की चेष्टा करने में विफल रहती।

धीरे-धीरे महेन्द्र इस सबका आदी हो गया। अब उसके हृदय के एक कोने में उस बच्चे ने अपनी जगह बनाली थी। वह पिता बनने की चाह को भले ही दार्शनिक बनने की चेष्टा कर के छिपाना चाहता हो, फिर भी उस छोटे बच्चे ने यह बात उभार दी थी। वह बाहरी मन से जितना ही उस से दूर रहने की चेष्टा करता, उतना ही उसके प्रति उसका मोह उमड़ता जा रहा था।

शायद कोई छुट्टी का दिन था। दिन को रेडियो का प्रोग्राम सुनता हुआ वह आराम के साथ पलंग पर लेटा हुआ था। कुछ नींद सी आ गई थी। तभी सुशीला, ने भीतर वाले कमरे से पुकारा, "सुनते हो?"

पहले तो वह चुपचाप आंखें मूंदे पड़ा रहा। पर भीतर सुशीला की खिलखिलाहट सुन कर नींद भाग गई। तभी तेजी से सुशीला कमरे में आई। उसके सिर का आंचल खिसक गया था। वह बोली, "भीतर चल कर अपनी खुशी का तमाशा तो देखो।"

लाचार महेन्द्र उठा और अंदर जा कर देखा कि वह कहीं से एक चूहे का बच्चा पकड़ कर ले आई है और उस से खेल रही है। वह बार-बार उसे अपने पंजों से पकड़ कर पुलकित सी हो उछल-कूद मचाती। चूहे का बच्चा चुपचाप कुछ देर पड़ा रहता, मानो मर गया हो। सोचता कि छुटकारा मिल गया है और भागने की चेष्टा करता, पर बिल्ली तेज़

से उसे पकड़ लेती थी। फिर वह दोनों पंजों के बल खड़ी हो कर उसे उछालती थी।

महेन्द्र ने देखा कि उसकी मां उस खेल में दिलचस्पी ले रही थी। वह भी कभी-कभी दोनों की आंख चुरा कर उस बिल्ली को अपने साथ सुलाने के लिए ले जाती थी। बहाना करता थीं कि उनके कमरे में चूहे अधिक हैं और बिल्ली की आदत बिगाड़नी नहीं चाहिए। जंगली जानवर है, उसको अधिक पालतू बनाना उचित नहीं। अम्मा कितना ही लाड़-प्यार क्यों न करती हों, खुशी आधी रात को सुशीला के पास आ जाती थी। कभी सुशीला मज़ाक में कहती, "देखा अपनी नवाबज़ादी को, बिना तकिए के नींद नहीं आती। ऐसी सो रही है जैसे कोई लड़की ही सो रही हो।"

वह उस चूहे-बिल्ली के खेल को देख कर लौट आया। चारपाई पर लेट गया, तो कुछ देर के बाद खुशी 'म्याऊँ-म्याऊँ' करती हुई उसके पलंग पर चढ़ गई और पैताने लेट गई। महेंद्र सुशीला के जीवन में आए हुए नए प्राणों पर विचार करने लगा। पहले उसका ख़्याल था कि वह रोगिणी है और ताक़त बढ़ाने वाली कई दवाइयां पिलानी शुरू की थीं। भला उसे क्या मालूम था कि उसका रोग तो बहुत ही साधारण है। पहले उसे रुचिपूर्वक कपड़े पहनने का शौक था, फिर यकायक बुढ़ापा आ गया। कई साड़ियां तो बक्स में बंद-की-बंद पड़ी थीं। किसी नए डिज़ाइन के गहनों की ओर दृष्टि भी नहीं जाती थी। किंतु धीरे-धीरे उसका वह पुराना यौवन जैसे फिर उमड़ आया था। वह घर की बातों में दिलचस्पी लेने लगी और चेहरे पर जो एक निराशा छाई रहती थी, वह हट गई। जब वह आफिस से लौटता तो वह बड़े उत्साह से उसे खुशी की बातें सुनाती।

मोहल्ले में जो उसकी सहेलियां या उनके बच्चे थे, वे भी बिल्ली से स्नेह करने लगे। जहां कहीं वह जाती वहीं से पुकार मचती, "चाची, खुशी यहां दूध पी रही है।" यह हक़ उसे आसानी से मिल गया था।

यदि बच्चे उसे मारने की चेष्टा करते तो उनकी माँ समझाती थी, "चाची की बिल्ली है।" सुशीला भी उस बच्चे की तारीफ़ करती थी कि खाने की किसी चीज़ में मुंह नहीं डालती है। किस भाँति खेलती है, किस तरह सोती है। चाय-बिस्कुट खाती-पीती है।

पड़ोस में कुछ शरारती बच्चे भी थे। वे कभी उसके घर आ जाते, तो वह उचक कर आलमारी के ऊपर बैठ जाती थी और उनके चले जाने के बाद ही उतरती थी। सुशीला रोटी बनाती होती तो वह भी उसके पास लेट जाती।

यदि कभी खुशी इधर-उधर मोहल्ले में चली जाती तो सुशीला का मन नहीं लगता था। वह भी अपने लौट आने की सूचना 'म्याऊँ-म्याऊँ' कर के देती थी। देर से लौटने पर सुशीला उसे डांट-फटकार न लगाए, इसलिए वह कोशिश करती थी कि चुपचाप महेन्द्र के पास चली जाए। यदि वह घर में नहीं होती तो वह मांजी के पास पूजा की कोठरी में चुपचाप लेट जाती थी। सुशीला यह देख कर चुप रहती, पर कभी-कभी उसे धमकाती भी थी।

सुशीला की छोटी बहन का एक पत्र आया था, जिस में उसने अपने बच्चे का फ़ोटो भेजा था। सुशीला ने भी पति से अनुरोध किया था कि वह खुशी का एक फ़ोटो खिंचवाए। वह फ़ोटो सुशीला ने अपने मायके भेज दिया। उस दिन वह बहुत खुश लगी। मानो कोई बहुत बड़ी बाज़ी जीत ली हो।

खुशी बड़ी होने लगी। एक संध्या को सुशीला की कोई सहेली उसके घर आई। गोदी में बच्चा लिए थी। वे बैठी बातें कर रही थीं। खुशी मेज़ पर पड़े हुए काग़ज़ों से खेल रही थी। सुशीला ने एक बार अपनी सहेली का बच्चा अपनी गोदी में लेना चाहा, तो खुशी कूद कर उसकी गोदी में बैठ कर गुर्राने लगी।

उसकी सहेली हँस कर बोली, "देखा, पशु भी डाह करना जानते हैं।"

सुशीला खुशी के इस व्यवहार पर दंग रह गई। उसने खुशी को नीचे हटा कर उस बच्चे को पकड़ने की चेष्टा की, तो वह उसके हाथ को अपने अगले पंजों से पकड़ कर खींचने लगी।

रात को महेन्द्र खाना खा रहा था, तो सुशीला बोली, "सुनते हो, आज अपनी बिल्ली ने एक तमाशा कर दिया।" और उसे सारी बात सुनाई।

महेन्द्र बोला, "यह समस्त नारी जाति का हाल है। भला जब मनुष्य अपना स्वभाव न बदल सका, तब पशुओं की क्या सोची जाए!"

"और आप लोग?"

महेन्द्र चुप रहा, तो बोली, "पशुओं में अपने-पराए का इतना ज्ञान होता है, मैं नहीं जानती थी। वह तो उस बच्चे पर झपटना चाहती थी। पर मेरे डर से चुप रही। मुझे बड़ी शरम आई। भला उन्होंने क्या सोचा होगा?"

तभी खुशी 'म्याऊँ-म्याऊँ' करती हुई आई और अंगड़ाई लेती हुई सामने कोने की आलमारी पर उछल कर बैठ गई। वहां से ऊपर छत पर लगी हुई लोहे की कड़ी पर छलांग मार कर चढ़ गई। महेन्द्र और सुशीला उसके व्यवहार पर दंग रह गए। अब वह दीवार की ओर की कड़ी के बीच खुरचने लगी। कुछ देर बाद एक चिड़िया के बच्चे की 'चूँ-चूँ' सुनाई दी। वह उसे अपने पंजे से पकड़, फिर मुँह से दबा कर आलमारी पर कूद पड़ी। सुशीला के मुँह से निकल पड़ा, "हे राम चिड़िया का बच्चा पकड़ लिया है! अच्छा, नालायक़, आज तुझे मजा चखाऊंगी!"

लेकिन महेन्द्र जोर से हंस पड़ा बोला, "उसका क्या क़सूर है ? यह तो स्वाभाविक आदत है ।"

कुछ देर तक उस चिड़िया के बच्चे के पंख इधर-उधर नीचे फर्श पर उड़ते रहे । खा कर नीचे उतरें और चुपचाप सुशीला के पैरों के पास आ कर खड़ी हो गई । सुशीला गुस्से में भरी हुई थी । वह कुछ नहीं बोली, तो वह सामने दीवार पर टंगी हुई गेंद से खेलने लगी । सुशीला बड़ी देर तक उस चिड़िया के बच्चे की हत्या वाले पाप पर सोचती रही । अभी तक खुशी के मुँह पर उसके पंख चिपके हुए थे ।

महेन्द्र खाना खाने के बाद आलमारी से एक किताब निकाल कर पढ़ने लगा । यह सच बात थी कि आज उसके भावुक हृदय पर इस घटना का काफी गहरा प्रभाव पड़ा था । महेन्द्र से सुशीला ने स्वीकार किया कि आज उसका खाने में मन नहीं लगा । वह चाह कर भी कुछ नहीं खा सकी ।

उसने जब चुहिया वाली घटना का जिक्र किया तो वह चुप रही । मानो चूहा मारना तो बिल्ली का जन्मसिद्ध अधिकार हो । इस पर महेन्द्र बोला, "वह चुहिया तो शायद ज्यादा नुक़सान भी नहीं करती थी । पर चिड़िया तो रोज़ बीट कर के सारी अलमारी और फर्श ख़राब कर देती थी ।"

सुशीला को फिर भी संतोष नहीं हुआ । वह खुशी को इस अपराध के लिए कदापि क्षमा करने के लिए तैयार नहीं थी । उसने यह निश्चय कर लिया था कि वह आज उसे दूध नहीं पिलाएगी, न कल सुबह गोश्त के छीछड़े मंगाएगी । महेन्द्र ने कितना ही समझाया पर वह न मानी । शायद खुशी भी उसका रुख़ समझ गई और पास नहीं फटकी ।

लेकिन भोला उसके डिब्बे में दूध डाल कर ले ही आया । उसने उसे पलंग के पास वाली खिड़की पर रोज़ की जगह रख दिया । कुछ देर के बाद खुशी चुपचाप आ कर दूध पीने लगी । सुशीला अभी जाग

रही थी, पर चुप रही। दूध पी कर पलंग पर चढ़ कर एक कोने में लेट गई। तभी सुशीला बोली, "देखिए, कल रात यह दब गई थी। ठीक तरह से सोती भी नहीं है। कहीं मर गई तो हत्या लगेगी। सँभल कर सोइएगा। रात को न जाने कहाँ से घूमघाम कर आती है।"

महेन्द्र इन बातों पर अधिक विचार नहीं करता, इसीलिए चुप रहा। वह बिल्ली की गुरगुराहट सुन रहा था। एक बार उसने उसे अपने पैर से छूआ, तो उसके बाल बहुत मुलायम लगे।

कई महीने बीत गए। महेन्द्र एक सप्ताह के लिए दौरे पर चला गया था। गरमी के दिन आ गए थे। सुशीला रोज़ शाम को अपनी सास के साथ घूमने के लिए जाया करती। एक दिन भोला ने कहा, "बहूजी, खुशी को भी घूमने ले चलेंगे।"

यह बात सुशीला की समझ में आगई और फिर कहीं दूर घूमने के लिए तो जाना नहीं था। भोला ने खुशी को अपनी गोदी में ले लिया। सुशीला अपनी सहेली के यहां पहुँची। उसने सहेली से उसके गुणगान शुरू कर दिए। परिवार के बच्चे खेल से लौट कर आ गए थे। सब उसके साथ खेलना चाहते थे। खुशी डर कर सुशीला की गोदी में जा कर बैठ गई, पर बच्चों ने ताली पीट कर शोर मचाना शुरू कर दिया, "चाची, हमें दो!"

खुशी इसकी आदी नहीं थी। वह घबरा कर ऊपर छत पर चढ़ गई। कुछ देर वहीं रही, तो बच्चे भी छत पर चढ़ गए। खुशी कूद कर दूसरी छत पर पहुँची। बच्चे ताली बजा-बजा कर हँसते रहे। लेकिन वह वहां से नीचे उतर कर लोप हो गई। भोला ने उसे ढूंढ़ा, पर वह नहीं मिली। लोगों से उसने पूछा तो वे उसकी हंसी उड़ाने लगे कि मोहल्ले में तो कई बिल्ली के बच्चे हैं।

सुशीला ने सुना तो वह सन्न रह गई। हारी और खोई सी घर

लौटी। खाना खाने में मन नहीं लगा। सास ने बहुत समझाया, फिर भी वह नहीं मानी। रात को एकांत में फूटफूट कर खूब रोई। जरा झपकी लगी थी कि एक सपना देखा कि वह जंगल में खड़ी है। चारों ओर बिल्लियां-ही-बिल्लियां हैं, पर वह उनके बीच में खुशी को नहीं देख पा रही है।

कुछ खटका सुन कर उसकी नींद टूट गई। उसने पुकारा, "खुशी !" खुशी !! लेकिन वह तो छछूंदर था, जो 'चूँ-चूँ' कर के भाग गया। अब उसे बहुत डर लगा। उसका हृदय बार-बार भर आता था।

बड़ी देर तक रोने के बाद उसे लगा कि मानो उसका जीवन एक निचोड़े नींबू की भांति खाली हो गया है। उस बिल्ली के बच्चे के लिए उसने अपने हृदय में इतनी ममता भरली होगी, इसका कोई भी अनुमान उसे आज तक नहीं था। आज पहले-पहल उसे पति का अभाव अखरा। अपने को बहुत कोसा कि वह क्यों उसे अपने साथ घूमाने ले गई। फिर होनहार को बलवान मान कर चुप रही। रात को बड़ी देर में वह थकी मांदी सो गई।

सुबह को देर से उसकी नींद टूटी। देखा कि भोला कहीं से खुशी को ले आया था। उसके अगले पैरों पर कमर की ओर एक बड़ा सा घाव था। सुशीला ने पुकारा, "खुशी !"

खुशी ने उठने की कोशिश की पर उठा नहीं गया। सुशीला ने उसे अपनी गोदी में उठाया। भोला भीतर से दूध का डिब्बा ले आया। वह ज़रा-ज़रा कर के पीने लगी। सुशीला उठी और भीतर से रुई और पट्टी ले आई। मरहम लगा कर उसने ऊपर से पट्टी बांध दी। कुछ देर बाद पट्टी अपने आप खुल गई और वह घाव को चाटने लगी।

भोला ने बताया कि वह गंदे नाले के नीचे छिपी हुई थी। पहले पहल उसे देख कर डर के मारे गुर्राई। जब उसने नाम पुकारा तो वह

कुछ चौंकी। उसने उठा कर उसे पुचकारा, तो खुशी को होश आया। जंगली बिल्लियों से लड़ कर घायल हुई थी।

महेन्द्र ने लौट कर सारी घटना सुनी, तो उसे बड़ी हँसी आई। कहा, "बिल्ली ऐसा ही जानवर है, क्या किया जाए? फिर यदि मर जाती तो कुछ कर नहीं सकते थे। कुत्ते की तरह समझदार तो होती नहीं है।"

"मर जाती? आप क्या कह रहे हैं?" सुशीला की आंखों से झर-झर आंसू बह निकले। उसने अपने आंचल से आंसू पोंछ कर कहा, "देखिये, आप इसके लिए कोई बुरी बात न कहा करें। आखिर इतने दिनों पाला-पोसा है!"

महेन्द्र चुप रह गया। कुछ सोच कर पूछा, "घाव बड़ा तो नहीं है? क्या लगाया है?"

"मरहम लगाया है।"

—एक सप्ताह तक खुशी बिलकुल नहीं उठ सकी। रात में कई बार सुशीला उठ कर उसे देखती थी। उसे डर था कि कभी वह काना बिलौटा उस पर हमला न कर दे। फिर जब एक दिन वह लंगड़ा-लंगड़ा कर चलने लगी, तो सुशीला को बड़ी खुशी हुई। घाव भर रहा था किंतु वह एक दिन शाम को कहीं बाहर मोहल्ले में चली गई। रात को जब लौट कर नहीं आई तो सब बहुत चिंतित हुए। कई बार उठ कर उसने देखा कि कहीं वह आ कर चुपचाप सो तो नहीं गई। पर सुबह वह लौट आई थी।

खुशी ठीक हो गई, पर उस में वह तेजी नहीं थी। वह सुस्त पड़ गई। बहुत कमजोर भी लगती थी। पहले के भाँति खेलती नहीं थी। सुशीला उसकी काफी परवा करती। खाने-पीने का विशेष ध्यान रखती।

इधर कड़ी गरमी भी पड़ने लग गई। खुशी दिन भर गुस्लखाने में नल के पास पड़ी रहती थी। उसके इस नए अनुभव को देख कर सुशीला बहुत हँसी। उसकी बुद्धि की सराहना की। दिन को गरमी असह्य लगती।

अब वह उतनी अधिक चिन्ता नहीं करती। वे छत पर सोया करते थे। जब मन में आता खुशी ऊपर चली जाती या नीचे गुसलखाने में ही पड़ी रहती। वह उसे ज्यादा नहीं छेड़ती थी।

एक दिन आधी रात को बिल्लियों का लड़ना सुन कर वह तेजी से नीचे रसोई में आई। महेन्द्र की नींद भी उचट गई। कुछ देर के बाद उसने देखा कि खुशी सीढ़ियों से दौड़ती हुई ऊपर आई और पलंग के नीचे खड़ी हो गई। वह कांप रही थी। वह खून से लथपथ थी। महेन्द्र ने उसे पुचकार कर बुलाने की चेष्टा की, तो वह गुर्राने लगी। उसने उस पर एक चादर डाली और पकड़ कर चारपाई पर डाल दिया। उस पुराने घाव से फिर खून बह रहा था। काने बिलौटे ने उस पर हमला किया था। सुशीला ने कसम खाई कि वह उस बिलौटे को जरूर मारेगी। भोला ने भी बदला लेने का वादा किया।

सुशीला ने उसे चुपचाप अपनी मसहरी के भीतर सुला दिया। वह पीड़ा के मारे उठ कर बार-बार 'म्याऊँ-म्याऊँ' करती थी। सुशीला उसे सहलाती हुई कहती, "बेचारी बोल नही सकती—पशु ठहरी।"

महेन्द्र की से्‌त ठीक नहीं थी। वह पहाड़ जाने की सोचने लगा। सुशीला परेशान थी कि खुशी का क्या होगा। कई बार सोचती थी कि वह उसे साथ ले चलेगी। वह उसे यहीं पर छोड़ जाने के पक्ष में नहीं थी। भोला कहता, "बहूजी आप फिक्र न करें। वह यहां ठीक रहेगी।

सुशीला को फिर भी न जाने क्यों संतोष नहीं होता था। उसे पहाड़ ले जाना संभव नहीं था। कुत्ता होता, तो बात दूसरी थी। बिल्ली के बच्चे का लोग मजाक उड़ाएंगे और फिर एक कठिनाई यह भी थी कि वह वहां भी इधर-उधर चली जाएगी। सुशीला बार-बार पछताती थी कि उसने बिल्ली का बच्चा क्यों पाला। फिर पालतू बिल्ली को जंगली बिल्लियाँ

मार डालेगी। एक सहेली से उसने उसे अपने पास रखने की बात कही, तो वह हँस कर बोली कि कहीं बच्चे मार डालेंगे, तो कौन पाप का भागी बनेगा।

सुशीला कोई ठीक योजना नहीं बना पा रही थी। भोला के पास छोड़ने के लिए मन नहीं करता था, पर वह बेबस थी। क्या किया जाय; आखिर उसने यही तय किया कि भोला रोज सुबह खुशी को चार पैसे का गोश्त ला कर देगा और वह लोभ के मारे कहीं नहीं जाएगी। दिन में तो वह गुसलखाने में पड़ी ही रहेगी। रात को वह उसे अपने पास सुलाएगा पर मसहरी लगानी जरूरी है।

महेन्द्र सुशीला की बातें सुन कर भले ही हँस पड़े, पर वह भी खुशी को यकायक इस भांति छोड़ने से बहुत दुःखी था। उसने उसके मन पर अपने व्यक्तित्व की एक अनूठी छाप लगादी थी। लगभग दस महीने से वह उसके साथ रह रही थी। बिल्ली सुशीला के मातृत्व के अभाव की पूर्ति तो करती रही थी, साथ ही महेन्द्र के पुरुष हृदय को पिघलाने में भी वह सफल हो गई। वह बलवान महेन्द्र भी कभी-कभी भावुकता की उस साधारण और कच्ची चोट से तिलमिला उठता। उस पशु का अभाव न जाने क्यों इतना अखर रहा था।

फिर भी एक दिन खुशी को भोला के पास छोड़ कर वे पहाड़ चले गए। वहां पहुँचने के एक सप्ताह बाद भोला का खत मिला :—

'आप लोगों के चले जाने के बाद खुशी ने खाना-पीना छोड़ दिया। रात भर वह 'म्याऊँ-म्याऊँ' करती रही। परसों सुबह से उसका कोई पता नहीं है। दो दिन से उसे ढूँढ रहा हूँ, पर कोई पता नहीं मिला। मिलते ही आपको सूचना दूंगा।'

महेन्द्र ने वह पत्र पढ़ कर फाड़ डाला। सुशीला को दिखलाना उचित नहीं था। उस से इसकी कोई चर्चा न करने का भी निश्चय कर लिया।

शेषनाग की थाती

जवाहर चुपचाप जहाज के डेक पर रेलिंग के सहारे खड़ा हो गया। सामने भारत के प्रवेश द्वार पर उसकी दृष्टि गई। दूर-दूर तक अरब सागर में कहीं-कहीं किश्तियां और जहाज खड़े थे। एक जहाज का बड़ा लंगर 'डेक' पर फैला हुआ था। पास ही कुछ डुबकी लगाने वाले अपनी विशाल पोशाकों में पानी के भीतर पैंठ रहे थे। सुदूर क्षितिज पर उसकी आंखें फैल गयीं! वहां काले रंग की चिड़ियां कई झुण्डों में उड़ रही थीं। बन्दरगाह को छूती हुई 'मिलिटरी इंजिनियरिंग डिपार्टमेंट' की सफेद टीन से छाई ऊँची इमारतें निर्जीव-सी खड़ी थीं। पिछले दिनों लोहे के बड़े-बड़े घनों से कूटने का धमाका वहां से बार-बार कानों में गूँजता हुआ हृदय पर एक अजीब-सा कंपन फैला देता था। आज वहां मौत का-सा सन्नाटा था, जिससे एक नूतन जीवन को पाने की बलवती भावना का संचार अनायास ही हो जाता था!

उसकी सफेद वर्दी के किनारे वाली नीली डोरियां चमक रही थीं। अब तो वह चार इंच वाली तोप को देखने लगा, जिसके साथ उसने छै साल काटे थे। आंधी-पानी, सुख-दुख, रात-दिन युद्ध के भारी संघर्षों के बीच वह एक सच्चे साथी की भांति उसकी गति का सञ्चालन करता रहा है। एक जापानी सब-मेरिन से मुठभेड़ हुई थी। किसी को आशा नहीं थी कि वे जीवित बचकर निकल सकेंगे। वह घटना आसानी से नहीं भुलाई जा सकती है। उस सब-मेरिन को चलाने वाला बहुत होशियार था। वह बरफ की बहती हुई चट्टानों के नीचे से छिपकर मार करता था, लेकिन वे उसे नष्ट करने में सफल हुए थे। उन लोगों ने कई

भीषण समुद्री लड़ाइयां भी लड़ी थीं। तीन मास तक वे शत्रुओं के घेरे के भीतर पड़े हुए इधर-उधर भटककर अपना बचाव करते रहे थे।

तभी पास खड़े हुए दूसरे जहाज का भोंपू बज उठा। वह जहाज पेट्रोल करने के लिये जा रहा था। उसका लंगर उठा। अब तो वह नीचे पानी की चादरों को चीरता हुआ आगे बढ़ गया। पीछे फेनिल से बुलबुले उठ रहे थे। आज शान्तिकाल में यह भोंपू हृदय में नए भाव नहीं उड़ेल पाता है। आज की यात्रा के पीछे कोई कौतूहल और भय कहाँ मिलता है! युद्धकाल वाली जिज्ञासा मिट चुकी है। फिर न जाने क्यों उसका हृदय भर आया। वह कई लम्बी-लम्बी यात्राएँ कर चुका है। रंगून, हाँगकाँग, पैसफिक महासागर के विभिन्न बन्दरगाहों तथा टापुओं का ज्ञान उसे है। वहां वे बहुत दिनों तक रहे हैं। कभी 'राशन' चूक जाता था तो कभी कोयला और गोला-बारूद की कमी भी यदाकदा अखरती थी। वे फिर भी हिम्मत नहीं हारते थे। युद्ध-काल का अज्ञेय-सा जीवन। एक नूतन उत्सुकता और भेद की बात स्वयं ही व्यक्त करता था! वह युद्ध का जहाज था जो कि छै साल तक भयंकर समुद्री लड़ाइयां लड़कर पिछले महीने विजयी होकर लौटा है।

अब वह शत्रु के गोलों से बचे हुए सुराखों को देखने में लग गया। मध्य रात्रि को हमला हुआ था। सबको विश्वास हो गया कि वे हार जायेंगे। आत्म-समर्पण की तैयारियाँ हो रही थीं। तोपें दनादन गोले उलग रही थीं। आकाश पर रंग-विरंगी फुलझरियों की-सी रोशनियाँ चमक कर चकाचौंध कर रही थीं। तूफान उठ चुका था। सब निराश हो गये थे। 'वायरलेस आपरेटर' हार कर बैठ गया था। किसी सन्देश की आशा न रही। कप्तान ने अपनी केबिन से कीमती शराबें लाकर टीन के डिब्बों वाला आखिरी राशन निकलवाकर एक बड़े उत्सव के साथ सबको खिलाया था। शत्रु के हवाई जहाज मौत की भांति आकाश पर मँडरा

रहे थे। किन्तु एकाएक सन्नाटा छा गया। शत्रु के वायुयान लौट गये थे। उनका जहाज उसी भांति असहाय-सा खड़ा था। उसकी तोपें गोले उगल रही थीं, वे विजयी हुए थे। कप्तान का मुरझाया हुआ चेहरा खिल उठा था। उस वातावरण में जवाहर का दिल बैठ गया था कि यदि जहाज डूब जाता......! ठीक, तब उसे साहुकार के कर्ज से छुटकारा मिल जाता। एक हजार रुपया उसने अपनी शादी के अवसर पर कर्ज लिया था! उसके ससुर ने कहा था कि लोग उस गबरीली लड़की के लिये दो हजार रुपया देने के लिये तैयार हैं। पर वह होनहार लड़का है, इसी लिये उन लोगों ने काफी टोटा सह लेने का निश्चय किया है। हरएक लड़के का ऐसे अच्छे कुल की सुघड़ लड़की पाना सम्भव नहीं है। पर जो बेड़ियां उसके भविष्य को साहुकार पहनाने में सफल हुआ था। उस कैद से छुटकारा पाना आसान नहीं था।

"कप्तान, चाय-वाय नहीं पीओगे!" उसका साथी बोला। उसे चाय से भरा हुआ मग दे दिया। बावर्ची उनके पास आकर खड़ा हो गया। उसने चौड़ी प्लेट पर से पेस्ट्री के टुकड़े निकाल लिये। वह अब चुपचाप चाय पीने लगा।

जहाज पर टंगे हुए लाल, हरे और तिरंगे झण्डों को फहराता हुआ देखकर उसका दिल खिल उठा। वे आज आजाद थे। उन्होंने दासता की जञ्जीर को तोड़ कर अंग्रेजी साम्राज्यशाही के खिलाफ बगावत का झण्डा उठाया था। उनकी मांग किसी की मांग नहीं थी। निम्न मध्यवर्ग और किसानों के बेटों ने जापानियों और नाजियों से युद्ध लड़ा था। वे वहाँ से विजयी होकर लौटे थे। उनमें राष्ट्र प्रेम की तीव्र भावना थी। वे अंगरेजों से अपने देश को स्वतन्त्र करना चाहते थे। गोरे अफसर वर्षों से उनके साथ दुर्व्यवहार करते आये थे। उनको कुलियों के बच्चे और कुलियों की औलाद कहकर पुकारते थे। वे नौजवान यह सब कहाँ तक सहते? उन्होंने विद्रोह किया था। देश-प्रेम में पागल

होकर वे इस आग में कूद पड़े थे! दुनिया की आजादी के लिये लड़ने का पिछले छै साल वाला सबक, वे आज अपने देशवासियों को सिखाना चाहते थे।"

"साला कोर्ट मार्शल करने की धमकी देता था। यहां सब बन्दरगाहों और जहाजों को इस बगावत की खबर भेज दी गई है।"

जवाहर ने शहर में नागरिकों की सभाएँ देखी हैं। 'जयहिन्द,' 'इन्किलाब जिन्दाबाद,' 'हिन्दू-मुस्लिम एक हो', 'आजाद हिन्द फौज के साथियों को रिहा करो,' ये नारे इस समय भी उसके हृदय में गूँज रहे थे। सड़कों पर अपार भीड़ छाई हुई रहती थी। जहाजियों ने आजादी का नया संदेश दिया था। युद्धकाल के लम्बे सालों से थकी हुई परेशान जनता में भी आजादी और आशा की लहर दौड़ रही थी। पुलिस ने लाठियाँ चलायी थीं। जनता ने भी अँगड़ाई लेकर चेतना की करवट बदली। उसने भी सोचा है कि क्या वह भी अब साहुकार के उस चंगुल से छुटकारा पा जायेगा।

उसका साथी चला गया था। वह उस मग को हाथ में लिये हुए ही, चुपचाप अपार फैले हुए समुद्र को देखने लग गया। जहाज लंगर फैलाए हुए किसी नये संघर्ष से मोर्चा लेने के लिये तैयार खड़े थे। नाविकों ने अब उस नाटकीय जीवन से छुटकारा पाने का निश्चय कर लिया था। अब उनको झूठे वादों पर कोई भरोसा नहीं रह गया था।

······अब उसे एकाएक अपने घर की याद हो आई। वह गाय, बैल, भैंस, बकरी आदि की दुनिया; वे पहाड़ी झरने, वे सुन्दर बन, वे बर्फीली चोटियाँ और वह उनका अपना गाँव ! साहुकार के कर्ज के कारण उसे यह सब छोड़ देना पड़ा था। घर पर वह सालाना सूद तक

नहीं जुटा पाता था। वह रहमदिल साहुकार केवल पन्द्रह प्रतिशत सूद लेता था। इसके अतिरिक्त कभी दूध देने वाली गाय-भैंस अलग से ले जाता था। शादी के अवसर पर घी के कनस्तर सस्ते दामों पर मोल लेने की मांग भी जरूर होती थी। साहुकार इस सब का कोई खास हिसाब नहीं रखता था। उसकी बहू की चाँदी के रुपये गुंथी हुई मूँगे की माला और चाँदी की झँवरियों की माँग थी, जिसे पूरा करना उसके लिये सम्भव नहीं था। कभी वह उसके लिये गुलाबी सरज की एक वास्कट तक तो नहीं बना सका था। साहूकार की परेशानी, बीबी के ताने और ससुराल का निरादार पाकर, वह एक दिन चुपचाप घर से भाग आया था। पहले घरेलू नौकरी की, फिर पुलिस में भरती होने की चेष्टा की और अन्त में वह फौज में भरती हो गया था।

उसका हृदय भर आया। उन पहाड़ों में जाने के लिये उसका मन तड़पने लगा। उसने हिसाब लगाया और पाया कि पच्चीस रुपया माहवार वेतन से कटाकर भी पाँच साल में उस साहूकार का पूरा कर्जा नहीं चुका सका है। अभी वह घर नहीं लौट सकता। उसके साथी एंग्लो-इण्डिन गोरे उससे बारह-तेरह गुनी तनख्वाह पाते थे और उससे एक चौथाई काम भी नहीं करते थे। वह चुपचाप मन में हिसाब लगाने लगा। उसने अपनी पत्नी के लिये सिर्फ आठ रुपया माहवारी कटाया था। इस महंगाई में बेचारी ने न जाने कैसे गुजर की होगी। उसे उस साहुकार पर बड़ा गुस्सा आया। इस समय यदि वह साहुकार उसके आगे पड़ जाता तो वह उसे तोप के आगे खड़ा करके गोले से उड़ा देता। वह बड़ा काइयाँ आदमी है। साल भर में एक बार पटवारी के साथ अपने काने बूढ़े घोड़े पर चढ़कर वसूली करने आता था और झूठी रसीदें देकर चला जाता था। गाँव का पटवारी तो जवाहर के बाड़े से मोटा तगड़ा बकरा अपने नौकर द्वारा मंगवाकर कटवाता था। फिर वे छोटी जाति की लड़कियों के साथ खाते-पीते और रात भर गाना

सुनते तथा नाच देखते थे। उनके उस अश्लील व्यवहार से सारे गाँव वाले परेशान हो गये थे। उस साहुकार की कैद में उसके कई रिश्तेदार फँसे हुए थे। सब उसके चंगुल से छुटकारा पाना चाहते थे, पर वह तो उनको चूस-चूसकर मार डालने में प्रवीण था। एक बार जिस किसी ने भी उससे कर्ज लिया, उसका परिवार आगे कई पीढ़ियों तक कर्ज से कभी मुक्ति नहीं पाता था। वह तो युद्धकाल में घर की बातें बिलकुल भूल जाता था, किन्तु अब तो वहाँ की याद रह-रहकर आ रही थी।

पहले कभी उसने उस साहुकार की हत्या करके, उससे अपना दस्तावेज़ छीन लेने की बात सोची थी। अपने खास साथियों से बातचीत की तो ज्ञात हुआ कि साहुकार के दो वफादार नैपाली नौकर और तीन भोटिया कुत्ते हैं, जो किसी को घर के पास नहीं फटकने देते हैं। एक बार उसे ज्ञात हुआ कि वह किसी शादी में जा रहा है। अतएव वह एक ऊँची पहाड़ी पर चढ़ गया और वहाँ से उसने बड़े-बड़े पत्थर लुढ़काए थे; पर साहुकार तो बचकर निकल गया। उसने फिर सोचा कि उसका मामा पुलिस में कान्सटेबिल है। वह उनसे बन्दूक माँगकर लावेगा। बस साहुकार और पटवारी दोनों को उड़ा देगा। लेकिन यह भी नहीं हो सका। उसके मामा आये और बताया कि केवल गारद के साथ जाने पर बन्दूक मिलती है।

जवाहर के सारे दाँव-पेंच असफल रहे तो वह घर से बाहर भाग निकला। एक कस्बे में उसने दस महीने नौकरी की। गृहस्वामी से तनख्वाह माँगने पर उन्होंने कहा कि वह आवारा लड़का है। बीड़ी-सिगरेट सिनेमा और चाँट-पानी में ही सब कुछ फूँक-फाँक देगा। आश्वासन दिया था कि आठ-दस महीने का वेतन वे एक साथ मनिआर्डर से घर भेज देंगे। आठ महीने के बाद आज-कल करके दो महीने और कट गये। अब एक दिन सुबह को गृह-स्वामिनी ने घर भर की चीजों की एकाएक ही छानबीन करनी शुरू कर दी। वे बड़ी परेशान लगती थीं।

गृहस्वामी के पूछने पर उनसे कहा कि सोने का दस्तबन्द न जाने कहां चला गया है। कल रात को आतिशखाना पर सिनेमा से लौटकर रखा था। जवाहर के अतिरिक्त उस कमरे में और कौन जा सकता है? जवाहर की पेशी हुई। पुलिस में दे देने की धमकी दी गई। दिन को जबकि गृह-स्वामिनी आराम कर रही थी तो वह चुपचाप वहां से भाग गया। उस चोरी की बात का उसके हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा। भला उसे कहां मालूम था कि गृह-स्वामिनी का वह दस्तबन्द, नौकर के तनख्वाह मांगने पर पहले भी कई बार खो चुका है।

फिर उसने पुलिस-लाइन का चक्कर लगाना शुरू कर दिया। वहां उसके देश के लोग रहते थे। एक से वह अपनी सारी बातें कह देता था। दस्तबन्द के खो जाने का कच्चा चिट्ठा सुनकर वह हँस पड़ा। मजाक किया कि उसने मालकिन से सांठ-गांठ तो नहीं कर ली थी। इस व्यंग्य से जवाहर मुरझा गया। उसने कसमें खाकर उस कलङ्क का प्रतिवाद किया। वह फिर अपनी तनख्वाह का हिसाब करने लगा। सौ रुपया तनख्वाह पाने पर वह सोच रहा था कि पारसल करके अपनी बहू के लिये कुछ सामान भेजेगा। कुछ और सही गुलाबी सरज की वास्कट; पीतल के झुमके और केले वाले रेशम की साड़। लेकिन साहुकार साले को वह कुछ देने का पक्षपाती नहीं था। वह कराले जमीन की कुरकी? लेकिन यह सच तो कोरी कल्पना ही रह गई। उसे उन रुपयों के न मिलने का बड़ा अफसोस हुआ था। आगे के लिये उसने सबक सीख लिया कि महीना बीतते ही वह अपना वेतन मांग लिया करेगा। वह मन में अपनी उस मालकिन के लिये कोई बात नहीं सोच पाता था। वह बहुत सरल और मीठी थी, शायद दस्तबन्द सिनेमा में खो गया होगा। यह भी सम्भव लगता था कि उसका आवारा भाई जो कि मैट्रिक में तीन साल फेल होकर अबके प्रायवेट परीक्षा देने की बात सोच रहा था, वह उठाकर ले गया हो।

वह तो उस परिवार की कई बातों पर विचार करता ही रह गया। पति-पत्नी सुबह बिस्तर पर ही चाय पीते थे। बच्चों के लिये 'आया' थी। गृहस्वामिनी अधेड़ थी और भालू की भाँति भले ही मोटी थी, पर शृंगार करने में बहुत प्रवीण थीं। वह भौंचक्का-सा कभी-कभी उस नारी-रूप को निहारा करता था। वह अक्सर उससे उसके घर की बातें भी पूछा करती थी। कई बार उसने सोचा था कि वह उससे साहुकार के क़र्ज़े की बात कह दे। कौन जाने, वह दया करके उसे रुपया उधार दे दे! तब वह उस नरक से मुक्त होकर आजीवन इनकी चाकरी करेगा। चौकीदार की तरह अपनी बहू को साथ लाकर रहेगा। कई बार चाहकर भी वह यह बात नहीं कह सका था। गृहस्वामी तो नीरस से व्यक्ति थे। बाहरी कामों में ही अधिकतर फँसे हुए रहते। बात-बात पर बिगड़ जाना उनका स्वभाव-सा था। उसने कई बार उस पुलिसमैन की बात पर सोचा कि सांठ-गाँठ तो नहीं थी। 'नाके' पर के एक मुन्शीजी से उन लोगों ने सलाह ली थी। लेकिन वे भी उन सब रुपयों को प्राप्त करने का कोई उपाय नहीं बता सके। अतएव वह चुप ही रहा।

वह अक्सर अपनी पत्नी के बारे में सोचता था। वह सुबह तड़के उठती थी। पशुओं का बाड़ा साफ करती। जब वह उठता तो मालूम होता कि वह तो जंगली से घास का गड्डड भी ले आई है। वह तो उसे नीचे दही मथती हुई मिलती थी। चक्की, चूल्हा, खेत का काम, कूटना-पीसना; वह तो दिन भर काम पर जुटी हुई रहती थी। अम्मा को फिर भी सन्तोष नहीं था। उसका खयाल था कि पन्द्रह सौ रुपये का वह सौदा महँगा पड़ा है। जवाहर यह सब कुछ अवाक्-सा सुनता ही रहता था। वह तो उस साहुकार काली परछांई से परेशान था। एक बार शराब में उसने जहर मिलाकर उसे पिलाया था, पर वह उस्ताद तो उसे हजम कर गया। पत्नी उसके परदेश जाकर नौकरी करने की बात सुनकर रोने

लगती थी। उस सांवली छोकरी ने उसका मन मोह लिया था। जब वह उसके समीप होती थी। तो वह सारा दुख भूल जाता था। उसे साहुकार का ध्यान तक नहीं आता था। उस पत्नी को एक दिन वह चुपचाप छोड़ आया। उससे कहा था कि मामा के घर जा रहा है। फिर उसने उसके लिये एक चिठ्ठी तक नहीं भेजी थी। फौजी दफ्तर से मनिआडर पाकर उसने जाना होगा कि वह 'लाम' पर चला गया है। लेकिन गाव के और युवक भी तो भरती खुलते ही लाम पर चले गये होंगे! तब तो वह गाँव बहुत सूना-सूना-सा लगता होगा। कौन जाने कि कितने मरे हों, और आज इस विजय के बाद भी गाँव का वही पुराना ढाँचा होगा—गरीबी और गुलामी।

वह पिछले महायुद्ध की बातें सोचने लगा। तब वह चार-पाँच साल का रहा होगा। उसका कोई सही ज्ञान उसे नहीं है। पिताजी उस युद्ध में मरे थे। मां को पेन्शन मिलती थी। पिताजी भी अपना कर्जा छोड़ गये थे। एक सच्चे बेटे की भांति वह पितृ-प्रसाद भी उसके सिर पड़ा था। मां कहती थी कि कर्जा मुक्त होने पर ही उसके पिता स्वर्ग जायेंगे। इस नये महायुद्ध ने एक दिलासा उसे दिया था कि वह बहुत रुपया कमावेगा। जापान पर बम पड़ा था और उसके अजीब-से किस्से प्रचलित थे। लेकिन आज वह अपने को अधिक समझदार मानता है। सोचता है कि साहुकार और पटवारी ने मिलकर गांव का सारा जीवन नष्ट कर दिया है। वह एक दस्ती बम ले जाकर उनको मार डालने की बात सोचता है! उसने चोरी करके दो ऐसे बम किनारे से लगी जो टूटी हुई किश्तियां पड़ी हैं, वहां एक कपड़े में छिपाकर रखे हैं। अगले महीने वह छुट्टी पर घर जायेगा तो तब उनको अपने साथ ले जायगा। वह उन दोनों से बदला लेना चाहता है। जिन्होंने कि उसका जीवन नष्ट कर दिया है। यह उसके जीवन की सब से बलवती भावना है।

अब वह अपनी पत्नी के बारे में सोचने लगा। वह पूर्ण युवती हो

गई होगी ! तब बारह साल की थी और आज अट्ठारह पार कर चुकी होगी। उसे याद आया कि एक पूर्वी टापू के पास उनके जहाज ने लंगर डाला था। वहाँ एक लड़की अनायास ही उसके जीवन से आ लगी थी। वह कई नाविकों की प्रेयसी होने का दावा आसानी से कर लेती थी। वह धान की बनी हुई शराब पीती थी। वह उसके परिवार में तीन दिन तक रहा। नाविक जीवन के उस नशे का वह पहला अनुभव था। वह लड़की खास सुन्दर नहीं थी। फिर भी उसकी आन्तरिक सुन्दरता का स्वरूप भद्दा नहीं लगा। वहीं उसे नारी के सही शिकवे-शिकायत वाले अध्याय का कोमल ज्ञान सर्व प्रथम हुआ था। वह कई बातों पर चतुरता से सोचता था। लगता कि उसके गांव में तो सदियों पुराना अन्धकार छाया हुआ रहता है। वहां नई रोशनी न जाने कब तक पहुँचेगी। वहां जीवन को व्यक्त करने की सही गुंजायश कदापि नहीं है। लेकिन जितनी आसानी से वह नशा चढ़ा था, उसी भांति वह उतर भी गया। जब उसने उस परिवार को छोड़ा था। तो उस युवती ने फिर लौटकर आने की बात नहीं पूछी। न किसी भावुकता का भाव ही व्यक्त किया। वह तो हँस-हँस-कर बोली थी कि अब आगे जीवन में कभी मुलाकात नहीं होगी। भला कोई नाविक लौटकर भी आया कि उसकी प्रतीक्षा की जाय ! जवाहर के मन में उस युवती के प्रति घृणा का भाव उठा। जो तृष्णा स्वागत में मिली थी; वह प्यास मानो कि तीन दिन में बुझ गई। आगे नाविकों की प्रेमिकाओं के प्रति वह उदासीन रहने लगा। उनके मन में कोई जीवन और गति नहीं। वह एक बात सोचता था कि जापानी जल्दी हार जांय। तभी युद्ध समाप्त होगा और वह अपने गांव जा सकेगा। किन्तु उस युद्ध के समाप्त होने के कोई लक्षण नहीं दीख पड़ते थे। रोजाना जीवन नीरस लगने लगा। युद्ध के प्रति भी कोई खास आकर्षण नहीं रह गया। रोज का काम वही चार इञ्च वाली तोप पर गोले भरना रह गया। वह इसे भारी उत्साह से करता था।

एकाएक जहाज का भोंपू बज उठा। जवाहर चौंका। निहत्थे गोरे अफसर कैद कर लिये गये थे। उनके विश्वास-पात्रों को भी यही सजा दी गई थी। कुछ जहाजियों ने गार्ड-रूम तोड़कर वहां से राइफलें, पिस्तौल, टौमीगन, कारतूस की पेटियां आदि निकाल लिये। सब सामान बांटकर वे किसी आने वाले संघर्ष की तैयारी कर रहे थे; मशीन गनें उठ रही थीं; जहाजों की तोपें हवाई हमले का मुकाबला करने के लिए तैयार खड़ी थीं। सब सावधान हो गये। लोग आपस में फुस-फुस लगाये हुए थे। एक मेट पास आकर बोला, "अंगरेज धमकी दे रहे हैं कि सारा जहाजी बेड़ा उड़ा दिया जायगा।"

फट,फट,फट······फायरें शुरू हो गयीं। जवाहर चैतन्य होकर अपने तोपची को पुकारने लगा तो मेट हँसकर बोला, "ये छूछी कारतूसें मराठा सिपाहियों ने छोड़ी हैं। गोरे समझ रहे हैं कि झूठी फायरों से घबराकर जहाजी हिम्मत हार जायेंगे।"

एक अजीब समा छा गई। स्वतन्त्रता की एक नयी लहर उमड़ पड़ी थी! बीच-बीच में नारों की आवाजें गूंज उठती थीं। विद्रोही ब्रिटिश हवाई जहाजों का झुण्ड जो कि बन्दरगाह के ऊपर मंडरा रहे थे, उनको सावधानी से देख रहे थे। वे निहत्थे नहीं हैं। अपनी शक्ति का उन्हें पूरा-पूरा अनुमान था कि वे संघर्ष में पड़कर अपने देश का माथा ऊँचा करेंगे।

शाही बेड़े का एक जहाज सिग्नल भेज रहा था—सब जहाज युद्ध के लिये तैयार हो जावें······। ऊपर दोपहर की सीधी धूप पड़ रही थी। समुद्र शान्त था। जहाजी गुस्से में पागल थे। उनके दिलों में देश-भक्ति की धारा फूट रही थी। चुने हुए अनुभवी फौजी नये मोर्चों की ओर बढ़ रहे थे।

धड़,धड़, धड़ड़ड़......ड़ ड़ ड़; मशीनगनें चलने लगीं। अब खुलकर लड़ाई छिड़ गई। गोरे सिपाही हमला कर रहे थे......दस्ती

बम भी फेंके जाने लगे ! जवाहर जहाज पर चुपचाप अपनी तोप के पास खड़ा था। वह भी आदेश की बाट जोह रहा था। वे सब जंग की तैयारी में लग गए। वह सोच रहा था कि इस आजादी के बाद आगे साहुकार और पटवारी से भी आसानी से छुटकारा मिल जायगा। उसकी आंखों के आगे उस साहुकार का गिड़गिड़ाना आया। वह जवाहर से प्राणों की भीख मानो कि माँग रहा हो। लेकिन जवाहर ने सोच रखा है कि वह उस साहुकार और पटवारी दोनों को पहाड़ी नाले के पास वाले बड़े ऊँचे देवदार के पेड़ की टहनियों पर रस्सी डालकर फाँसी दे देगा। सारे गाँव के लोगों को खड़ा करके वह बतायेगा कि इन सूदखोरों ने कितने परिवारों, कितनी कुमारियों और युवकों का जीवन नष्ट किया है। ऐसे समाज-विरोधी अपराध की सजा केवल मौत है। फिर वह उनकी लाशों को उतार उनके मुंह पर थूककर चार-चार लातें लगायेगा। वह उनके प्रति एक विकृत घृणा पिछले कई वर्षों से बटोरे हुए है। कहीं वे भूत बनकर गाँव वालों को परेशान न करें। अतएव उसने यह भी निश्चय कर लिया है कि जहाँ पर उनकी लाशें गाड़ी जायँगी, वहाँ वह सुअर की हड्डियाँ रखवा देगा। यह उसके जीवन का सबसे प्यारा सपना है।

लोग नीचे की ओर भागे जा चले जा रहे थे। जवाहर भी सीढ़ियों से उतरा और उनके बीच खो गया। उसके घायल साथी आवश्यक चिकित्सा के लिये अस्पताल पहुँचाये जा रहे थे। दूर कहीं से हवाई जहाजों के उड़ने की भरभराहट कानों में पड़ रही थी। उनका एक नौजवान साथी मर गया था। वे सब उसके शव को आंगन में ले आए। सबके हृदय भरे हुए थे। उनकी आँखों में आँसू डबडबा रहे थे। वह पहला शहीद नाविक था। सबने उसके प्रति श्रद्धाँजलि

अर्पित की। जवाहर का हृदय उमड़ आया। उस युवक ने उसके जीवन में प्राणों का संचार किया। चारों ओर एक अजीब शोर मचा हुआ था। कुछ जहाज सहायतार्थ आये थे। उन्होंने भी दुश्मनों पर गोलियाँ बरसानी आरम्भ कर दीं। अब घमासान लड़ाई शुरू हो गई। जापानियों और नाजियों पर विजय पाने के बाद वे लोग एक नई प्रतिक्रियावादी ताकत के विरुद्ध संघर्ष करने के लिये उतारू हो गये थे। यह लूली नौकरशाही को एक भारी चुनौती थी।

अब जवाहर और उसके साथी चुपचाप समुद्र के किनारे खड़े हो गये। उन्होंने एक मोटरबोट ली और चुपचाप उसे खेने लगे। कुछ देर के लिये सशस्त्र लड़ाई रुक गई थी। सामने भारत का प्रवेश-द्वार दीख पड़ता था। जाड़े की धूप बहुत प्यारी लग रही थी। खाना चूक गया था। उनको खाना लाने का भार सौंपा गया था। यह उनको ज्ञात था कि सारे शहर के नागरिक हिन्दू, मुसलमान और पारसी, उनके लिये घण्टों से किनारे पर इन्तजार कर रहे हैं। नाविक सात घण्टे के इस घमासान युद्ध के बाद भी स्वस्थ थे, उनमें एक नया जोश था। उधर सारे शहर की जनता बन्दरगाह की ओर दौड़ पड़ी थी। इस विद्रोह के समाचार ने हर एक नागरिक के हृदय पर एक गहरा प्रभाव डाला था। उनका माथा ऊँचा करने में वे सफल हुए थे। वे किनारे की ओर मुड़े। वहाँ बच्चे, नवजवान, स्त्री-पुरुष मानो कि उनके स्वागत के लिये खड़े थे। उनके पास पहुँचते ही फल, मिठाइयाँ, मेवे, सिगरेट आदि उनकी नाव पर बरसाने लगे। जवाहर का दिल भर आया। वह एक बार जनता की उस अपार भीड़ की ओर देखता ही रह गया। जो कि नारे लगा रही थी, "ब्रिटिश साम्राज्यशाही का नाश हो"; "इन्कलाब जिन्दाबाद ?"

वह भी एक नये उत्साह में चिल्लाया "इन्कलाब जिन्दाबाद !"

उसका साथी बतला रहा था कि किस भाँति 'टाऊनहाल' में क्रम से

कम सत्रह ट्रक और कई हथियारों से सजी हुई गाड़ियाँ आई थीं। इन गोरों के पास ब्रेन-गन्स् और राइफलें भी हैं।

तभी जवाहर हँसकर बोला, "जापानियों के हमने छक्के छुड़ाए हैं। गोरों को तो लड़ना तक नहीं आता है। हमारे ही भरोसे तो आज तक लड़ते रहे हैं।"

सब ठहाका मारकर हँस पड़े। सूरज की आखिरी किरणें पड़ रही थीं। साम्राज्यवाद का कभी न डूबने वाला सूरज मानो कि सच ही आज डूब रहा था। एक नाविक बोला, "हम सब की किसी भी क्षण मौत हो सकती है। हमारे सिर पर कयामत खड़ी है। फिर भी गोरों के छक्के छुड़ाकर दम लेंगे।"

"लुच्चे!" *तीसरा गुस्से में बोला, "हम अब आखिरी फैसला* करवा करके ही दम लेंगे।"

"गोरे सिपाही पागल हो गये हैं। वे तो शांत नागरिकों को भी गोलियों से भून देने की धमकी दे रहे हैं।"

"खिसआई बिल्ली खम्भा नोचे!" एक ध्रुपद में हंसा।

समुद्र चुपचाप शान्त था। कभी-कभी अनायास ही ऊँची-ऊँची लहरें उठती थीं। सूर्य डूब चुका था, आकाश में तारे टिमटिमाने लगे थे। जवाहर एक गीत गाने लगा। वह मुसीबत मानो कि एक साधारण-सी बात थी। किनारे पर अभी तक शहर के लोगों का शोरगुल सुनाई पड़ रहा था। उनकी बैरिकें चुपचाप शान्त खड़ी थीं। वे मानो गोरों की गुलामी से छुटकारा पाने पर मन्द-मन्द मुस्करा रही हों। इधर-उधर छिटपुट बिजली की रोशनियां झिलमिलाती आंख-मिचौनी खेलती हुई-सी लगती थीं। सब अपनी-अपनी जगहों पर शान्त खड़े थे। उनकी अपनी कमीटियां संचालन कार्य कर रही थीं।

जवाहर बोला, "कराची, कोचीन, कलकत्ता तथा अन्य कई

बन्दरगाहों पर हड़ताल हो गई है। कराची में तो खूब गोलियाँ चलीं। हमारे कई साथी मारे गये और सैकड़ों घायल हुए हैं।"

"हमारे नेता इस काम को बढ़ाने के लिये हिचकिचा रहे थे, हमने उनको नया रास्ता दिखलाया है।" एक सावधानी से बोला।

"तो अब तुम्हें ही दिल्ली की गद्दी मिलेगी।" जवाहर ने चटपट जवाब दिया।

"भाई, हमारा कप्तान तो जवाहर बनेगा। वह गोरा साला तो बात-बात पर गालियां देता हुआ कहता था कि तुम सब कुलियों की औलाद हो।"

"वे भी तो लंगूर की औलाद हैं, साले! बड़ी हुकूमत करने आये थे। अब भाग जांय यहाँ से लन्दन।"

अब उनकी किश्ती बन्दरगाह पर लग गई थी। कई और नाविक तथा कमकर आ गये थे। वे नाव पर से सामान निकालने लगे। रेशमी फीतों से बंधे चाकलेट के पैकेट, जयहिन्द बिसकुट के डिब्बे और आजाद हिन्द का कार्ड मेवों से भरी टोकरी पर पड़ा हुआ था। किसी छोटे बच्चे ने टूटे हुए अक्षरों में लिखा था, "जहाजियों की बग़ावत ज़िन्दाबाद!"

वे यह देखकर हँस पड़े। छै साल के युद्ध के बाद यह नया मौका आया था। कहीं कोई मजदूर आजादी का तराना गा रहा था। सब सामान उतार कर स्टोर में पहुँचा दिया गया। उन बैरिकों में आज एक नयी हुकूमत और नया अनुशासन था। उनमें एक नई चेतना आयी थी। आज उनको अपने कर्त्तव्य का पूरा ख्याल था। आज विदेशी हुकूमत की नकेल तोड़ कर उन लोगों ने अपने हाथ में पूरा संचालन का भार ले लिया था। कभी कुछ सन्देह उठता था, पर वह उस नये उत्साह में न जाने कहां खो जाता था। स्वतन्त्रता के नये नारों और मस्ती के नये तरानों के बीच कभी एक मायूसी-सी छा जाती थी कि

उनका एक साथी शहीद हुआ है। वे उसके शव को सम्मान पूर्वक बाहर नहीं ले जा सकते।

स्ट्राइक-कमेटी अपनी बैठक कर रही थी। रक्षा-समिति बचाव के मसलों में उलझी थी। खाद्य-समिति राशन की चिन्ता में थी। दिन भर के भीषण संघर्ष के बाद कोई नहीं चाहता था कि जिस यूनियन जैक की वे धज्जियां उड़ा चुके हैं, वह उनके सिर पर फहराये। वे किसान, मजदूर और मध्यवर्ग के परिवारों के नौजवान लड़के शान के साथ मर जाना चाहते थे! पर किसी स्थिति में अपना सर झुकाने के लिये तैयार नहीं थे। वे उपनिवेशों की गुलामी के प्रतीक यूनियन जैक को उतार चुके थे। वहाँ तो अब शान के साथ तीनों झण्डे फहरा रहे थे।

जवाहर को याद आया कि वे पिछले दिन लारियों पर तीनों झण्डे लगाकर, जय हिन्द के नारे बुलन्द करते हुए शहर में निकले थे। वहाँ पर लोगों ने उनका स्वागत किया था। बच्चे से बूढ़ों तक हर एक गर्व से उस नारे को दुहराता था। जनता में एक नयी लहर आयी थी। जनता सोच रही थी कि गोरे उनको भूखों मारना चाहते हैं। तभी तो किनारे से लोग उनको खाना पहुँचा रहे थे। जब वह तट की ओर अपनी मोटरबोट ले गया था तो उसने देखा था कि एक मजदूर लड़का भुने हुए चने का एक पूड़ा लिये हुए उनकी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा था। ज्योंही वह उनकी ओर लपका था कि एक गोरे ने उस पर फायर कर दी। एक धड़ाका हुआ। वह वहीं पर गिर पड़ा, चनों का पूड़ा उसकी मुट्ठी से छूट कर बिखर गया। वह मर गया था। वहाँ मरना जितना आसान था, उससे कड़े वे अपनपा के बन्धन थे जो कभी नहीं टूट सकते। वह उसकी हमदर्दी सदा जवाहर और उसके साथियों के दिलों पर चमकती रहेगी। सोचा जवाहर ने कि वह मजदूरों के चालों में जायगा और उसकी माता के आगे माथा झुकावेगा। वह उसके पिता

को आश्वासन देना चाहता था कि उस बच्चे के खून की एक-एक बूँद का वे गोरों से बदला लेंगे।

वह बड़ी देर तक बैरिकों, इन्जिनियरिंग डिपार्टमेन्ट, मजदूर सभा के दफ्तर और न जाने कहाँ-कहाँ घूमता रहा। उसकी ड्यूटी गश्त लगाने की थी। अब वह चुपचाप अपने साथियों के साथ नाव पर सवार हो गया। उसका मन बेचैन था। उसे विश्वास था कि वे शीघ्र ही आजाद हो जायेंगे। तब वह ,छुट्टी पर जायगा। अब उसे ठीक वेतन मिला करेगा। फिर वह चैन के साथ अपना जीवन व्यतीत करेगा। अब तो उसे गोरे हाकिमों की नौकरी नहीं करनी पड़ेगी। वह अपने लोगों के साथ मिल कर काम किया करेगा। उनकी किश्ती चुपचाप पेट्रोल कर रही थी। चाँद की रोशनी में किनारे से लगी हुई कुछ तोपें दीख पड़ती थीं, जिनका मुँह उनको डराने के लिये जहाजों की ओर किया गया था। वहाँ यदा-कदा कोई गोरा सिपाही खड़ा हुआ दिखाई पड़ता था। वह यह सब देख कर हँस पड़ा और बोला, "हमारे आगे मौत का रास्ता साफ है, पर बेइज्जती से मौत भली।"

यह कह कर उसने केले निकाले और सब को बांटे। स्वयं केला खाता हुआ कहता रहा, "आज हमने अपनी तोपें गोरों के खिलाफ छोड़ी हैं।"

सब ठहाका मारकर हँस पड़े। एक ने तभी पूछा, "अब तो कप्तान अपना सुराजी जहाज लेकर टापू की राजकुमारी से मिलने पूरब जायगा न! वह सुनेगी कि तू कप्तान बन गया है, तो सीपियों की माला भेंट करेगी।"

"अरे उस्ताद, अभी लड़ाई तो ख़तम होने दो। कल को और गोलियां चलेंगी! सुना कि गोरों ने अपने हवाई जहाज बुलाए हैं। देखो कौन जीतता है?"

"सुना कराची में जहाजी हार गये हैं।"

"अच्छा कोई गजल तो सुना।"

"लो भाई सुनो

काम है मेरा तगय्युर, नाम है मेरा शबाब

मेरा नारा इन्क़लाब, ओ इन्क़लाब...ओ इन्क़लाब!"

वह जोर-जोर से गाने लगा। पानी की लहरें नाव से टकरा रही थीं। छप-छप का शब्द गूँज उठता था। पास चुपचाप खड़े जहाजों पर नजर टिक जाती थी। सबके डेकों पर आने वाले युद्ध की तैयारियाँ हो रही थीं। सबके सब नए मोर्चे को तोड़कर फतह प्राप्त करने की बात सोच रहे थे। कभी एक अज्ञात भय हृदय में कांटे की भांति चुभने लगता था। तो वे उसे नये जोश के साथ निकालकर फेंक देते थे। वह शहीद का शव चुपचाप पड़ा हुआ था। उसपर भी गारद लगा दी गई थी। वह वहीं चुपचाप पड़ा हुआ था। वह नवयुवक अधिकारी असाधारण साहस वाला था। वह एक ऊँची दीवार पर चढ़ गया और वहीं से बाहर गोली चला रहा था। किन्तु उसको एक गोली लग गई। उसकी बहादुरी की गाथा सब लोगों की जबान पर थी। चारों ओर उस दिन की सब घटनाओं की चर्चा थी। यह एक ऐतिहासिक विद्रोह था। सब लोगों में एक नया जोश था।

जवाहर चुपचाप किश्ती खे रहा था। उसका साथी अपनी गजल सुना चुका था। वह स्वतन्त्रा की गूँज उसके हृदय मे हिलोरें ले रही थी। उसमे छै साल तक अपने शत्रुओं से डटकर मोर्चा लिया था। तब वह शत्रु बाहर का था। एक दिन घर के दुश्मन से भिड़ना पड़ेगा, इसका कोई अनुमान उसे नहीं था! यहाँ उसे साहुकार के सूद वाले व्यवहार से कम अपमान नहीं सहना पड़ा है। वह मन लगाकर काम करता और गोरे फिर भी उसे गालियाँ देते थे। कुँए से खाई भली लगती है, इसीलिये वह नौकरी करता है। पहले कभी उसने इस नौकरी को छोड़ देने की बात सोची थी। लेकिन भगोड़ों को कैद हो

जाती है, यह भय बार-बार उठता है। धीरे-धीरे उसे नौकरी की आदत पड़ गई थी। वह मालिक जिसने सौ रुपया तनख्वाह नहीं दी थी, उससे यह नौकरी भली लगी, जहाँ समय पर वेतन मिल जाता था, तथा और कुछ सुविधायें भी थीं।

कभी वह अपनी गृहस्थी के नव निर्माण की बात सोचता। पशुओं का बाड़ा छोटा है। उसको बढ़ाना पड़ेगा। मकान भी पुराने जमाने का है। उसमें तोड़-फोड़ करके खिड़की निकालनी होगी। रसोई के लिये अलग कमरा चाहिये। आज अब उस मकान में गुजर नहीं हो सकती है। फिर वह एक छोटी फुलवाड़ी भी लगावेगा। अब वह सारी दुनिया घूम आया है। उन ऊँचे पहाड़ों की बातें सोचता था कि अब वह वहां तीन-चार साल रहेगा।

"जवाहर!"

जवाहर चैतन्य होकर बोला, "क्या है?"

"तुम तो ऊँघ रहे हो।"

"नहीं तो......!"

"मुझे डर लग रहा है कि हम सब मर जायेंगे।"

"नहीं साथी, हमारे साथ सब लोग हैं। वह देख, अभी तक लोग 'गेट-वे आफ इण्डिया' पर खड़े हैं। मेरा मन एक बार उनके पास जाने के लिये कर रहा है।"

आगे कोई कुछ नहीं बोला। पानी के छपाके साफ-साफ सुनाई पड़ रहे थे। चारों ओर नीरवता छाई हुई थी।

अब उनकी ड्यूटी पूरी हो गई थी। वे लौटने को थे कि तभी जवाहर बोला, "मुझे किनारे छोड़ दो। मेरा मन एक बार शहर देखने को कर रहा है।"

"शहर ?"

"सुबह तक लौट आऊँगा।"

सबने आश्चर्य से उसकी ओर देखा। किसी को भी जवाहर की बात काटने का साहस नहीं हुआ। नाव किनारे की ओर बढ़ गई। जवाहर उतर पड़ा। 'जय हिन्द' का अभिवादन करके चुपचाप आगे बढ़ गया। सामने विशाल समुद्र फैला हुआ था। शहर में रात्रि हो जाने पर भी कोलाहल था। टैक्सियां इधर-उधर भौंपू बजाती हुई दौड़ रही थीं। वह निरुद्देश्य-सा चुपचाप घूम रहा था। सड़कों पर सिपाहियों के जत्थे गश्त लगा रहे थे। मिलिटरी ट्रक भी यदा-कदा इधर-उधर निकल जाते थे। लोग अलग-अलग गिरोहों में नारे लगा रहे थे। एक गिरोह ने उसे घेर लिया। उनकी बातों से लगता कि वे किसी दूकान को लूटने की बात सोच रहे हैं। उसके देखते ही देखते उन लोगों ने एक दूकान का ताला तोड़ डाला। वहां से सारा सामान लेकर वे अपने ट्रक पर भाग गये। कई चीजें उन्होंने तोड़ डाली थीं। वह सब उसकी समझ में नहीं आया। मिलिटरी वाले तो चुपचाप तमाशा देख रहे थे। जब वे लोग चले गये तो मिलिटरी वाले वहाँ घुसे। जवाहर की समझ में नहीं आया कि बात क्या है। मिलिटरी वालों ने उन लोगों को पकड़ने की कोई चेष्टा नहीं की थी। क्या वे गुण्डे थे, जिनका काम समाज-विरोधी अराजकता फैलाना है? यह देखकर उसका मन मुरझा गया और वह चुपचाप एक पार्क में बैठ गया। उन लोगों का वह व्यवहार उसके मन में एक बेचैनी ला रहा था। सोचा उसने कि वे देश के दुश्मन हैं। अब उसे नींद आ गई थी। वह बेंच पर ही लेट गया। उसे नींद आ गई थी।

बड़ी सुबह उसकी नींद टूटी। उसने देखा कि कुछ कॉलेज के लड़के उसे घेरे हुए थे। वह उनके लिये एक आकर्षण की वस्तु बन

गया था। अब उसे ज्ञात हुआ कि वह तो जहाजियों की वर्दी पहने हुए ही निकल आया है। उसने 'जय हिन्द' कहकर उनका अभिवादन किया। लड़कों के चेहरे खिल उठे। एक बार आजादी के नारे उस पार्क में गूंज उठे। अब सड़कों पर भी जीवन और गति आ रही थी। ट्रामवे, बस, टैक्सी, विक्टोरिया आदि चल रही थीं। वे लड़के नागरिकों, मजदूरों और विद्यार्थियों से जहाजियों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिए हड़ताल का ऐलान कर रहे थे। एक समझा रहा था कि पिछली रात को बन्दरगाह पर से लौटते हुए एक भीड़ और पुलिस वालों की आपस में मुठभेड़ हो गई और पुलिस ने गोलियां चलाकर उनके जोश को ठण्डा करने की बेकार चेष्टा की थी। उसने यह भी बताया कि रात की पांती में काम करने वाले आठ मिलों के मजदूरों ने हड़ताल कर दी है। उसका गला चिल्लाते-चिल्लाते भारी पड़ गया था। चारों ओर भीड़ जमा हो रही थी। सब में एक नया जोश था। वे लड़के टैक्सी पर चढ़-कर इधर-उधर घूम-घूमकर हड़ताल करने के लिये लोगों से कह रहे थे। जवाहर भी एक टैक्सी पर उनके साथ बैठ गया। वह उन लड़कों को समझने की चेष्टा करने लगा। एक विद्यार्थी माइक्रोफोन पर कह रहा था कि किस भांति गोरे उनके हिन्दुस्तानी नाविकों को मिटा देना चाहते हैं। वह कह रहा था कि आजादी के इतिहास में उनका यह विद्रोह अमर रहेगा। अठारह सौ सत्तावन के बाद फौजियों की यह पहली सशस्त्र क्रान्ति थी। वह समझा रहा था कि साम्राज्यवाद आज सड़ कर खोखला पड़ गया है। वह झुंझलाहट में हमारे भाइयों पर हमला कर रहा है। शहर के नागरिकों को उनका कर्त्तव्य सुझाता था कि यही एक अवसर है कि क्रान्ति की चिनगारी सारे देश में फूट सकती है।

लेकिन जवाहर तो उस मजदूर लड़के की बात सोच रहा था जो कि उसकी भाँति किसी मोटे साहुकार का कर्जदार रहा होगा। वह उस कर्ज को चुकाने के लिये परिश्रम करता-करता आधा पेट खाता होगा। वह

किस थिरकती हुई खुशी में उनको बार-बार अपने पास बुला रहा था। वह उस पूड़े को नाव पर फेंकते समय मुस्कराया था। तभी उसके सफेद दाँतों की पांती चमक उठी थी। वह हँसी चेहरे पर ठीक तरह से खिल भी नहीं पाई थी कि एक गोरे ने उसका शिकार कर दिया। वह उसके घर वालों से मिलने के लिये लालायित था। पर इतने बड़े शहर में उनका पता पाना आज आसान नहीं था। वह यह भूल गया था कि शहर की आबादी बहुत अधिक है। फिर वह उन जीवन-मुक्त विद्यार्थियों को देखने लगा। एक कह रहा था, "गोरे एडमिरल ने धमकी दी है कि वह हमारे समुद्री बेड़े को नष्ट कर देंगे। यह हमारे देश का अपमान है, हम उसकी बदतमीजी को बर्दाश्त नहीं कर सकते हैं। हमारा खून नाविकों के साथ बहेगा।"

अपने उन बैरिकों के भीतर उसने यह अनुमान तक नहीं लगाया था कि उसके साथ इतने लोग हैं। उनको तो वहाँ डर लगता था कि सच ही गोरे उनको भून डालेंगे। अब उसे लगा कि उसके पीछे लाखों की जनता है, वे एडमिरल या किसी और कि गीदड़-भभकी से नहीं डरेंगे। तभी एकाएक तिरंगा झण्डा लगाये हुए एक टैक्सी उनके पास आकर खड़ी हो गयी, उसमें से एक स्वयंसेवक बोल रहा था, "कांग्रेस के नेताओं का आदेश है कि आज हड़ताल न की जाय। शहर की हालत ठीक नहीं है, गुण्डे इस अवसर से लाभ उठाकर दंगा करवा देंगे। जनता को उकसाना आसान है, पर उसका नतीजा अच्छा नहीं होगा। काँग्रेस की हमदर्दी जहाजियों के साथ है। नेता समझौते का रास्ता निकाल रहे हैं। गुण्डों के बहकावे में आकर उनको होश नहीं खो देनी चाहिये।"

जवाहर की समझ में वह बात नहीं आई। उनपर मुसीबत पड़ी तो उनको विवश होकर हड़ताल करनी पड़ी। उनकी हड़ताल को कुचलने के लिये गोरों ने गोलियां चलायीं। पिछले दिनों उन लोगों ने गांधी और

नेहरूजी के फोटो काटकर कप्तान की केबिन पर लगाये थे। वे कांग्रेस के नेता ही हैं ? उनकी टैक्सी आगे बढ़ गई। वह भौंचक्का-सा जनता की उस अपार भीड़ को देख रहा था जिसमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख आदि सब फिरकों के लोग थे। सड़कों पर बाबू, दूकानदार, मज़दूर और विद्यार्थी सबके सब उमड़े चले आ रहे थे। लोगों के हाथों में तिरंगे, हरे और लाल झण्डे थे। देश प्रेम में बावली जनता सड़कों पर साम्राज्यवाद का अन्त करने का नारा लगा रही थी। कोने-कोने से, छोटी-छोटी सड़कों से जलूस निकल रहे थे। नारों से धरती कांप उठती थी। लोग पागल से बाग़ी जहाजियों का साथ देने के लिये अपने घर-बार, नाते-रिश्ते तोड़कर आये थे। ऐसा अपूर्व समारोह पहले कभी नहीं दीख पड़ा था। उसका मन खुशी से फूल उठा। उसे विश्वास हो गया कि वह आजादी की सुबह थी। वे विद्यार्थी कालेजों में जा रहे थे। सब जगह उसने एक ही-सा उत्साह पाया। हरएक आगे बढ़ने के लिये उत्सुक था। सबका विश्वास था कि वे साम्राज्यशाही को मिटाकर दम लेंगे। उस बगावत ने एक नई रोशनी लायी थी।

वर्षों से मध्यवर्ग के परिवार परेशान थे। राशन की दुकानों के आगे खड़े-खड़े वे थक जाते थे। अब चोर-बाजार से सौदा खरीदने की शक्ति चूक गई थी। मातायें क्यू में बच्चों के लिये दूध लेने के लिये खड़ी-खड़ी कमजोरी के कारण बेहोश हो जाती थीं। कण्ट्रोल का सड़ा-गल्ला खाते-खाते सब ऊब उठे थे। औरतें धोतियों पर चिप्पियां लगाती और कपड़ों को सीती-सीती थक गई थीं। लड़ाई खत्म होने के बाद भी चीजों के दाम बढ़ते ही चले जा रहे थे। रोजाना व्यवहार में आने वाली चीज़ें दूकानों से लापता हो रही थीं। जनता नौकरशाही के फरमानों से परेशान थी। जहाजियों की हड़ताल ने एक नया रास्ता निकालकर उनके मनों को भारी सान्त्वना दी थी। उनके विद्रोह को कुचलने की धमकी देश की जनता को गुलामी की

नई बेड़ियाँ पहनानी थीं। यह किसी को सह्य नहीं था। लोग समझ गये थे कि कल उनकी बारी आवेगी। इसलिये वे आज गोरी नौकरशाही को चुनौती देकर बाहर निकल आये थे। १९४२ का जो विद्रोह उनके हृदय की भीतरी तह में एक चिनगारी की भाँति दब चुका था आज 'भारत छोड़ो' की वही ज्वालामुखी भभक रही थी। परिवारों की आर्थिक भित्ति नष्ट हो चुकी थी। युद्धकाल में लाखों परिवार उजड़ चुके थे। आजाद हिन्द फ़ौज के नेताओं की रिहाई के लिये उन्होंने प्रदर्शन कर उपहार स्वरूप गोलियाँ खाई थीं। अब भूख और रोजाना तकलीफें असह्य हो चुकी थीं। अब उनको अपनी गुलामी अखरने लगी थी, जनता ने इसीलिये सिर उठाया था। वे स्वयं अपना नेतृत्व करना चाहते थे। उनको किसी राजनीतिक दल की सहानुभूति की लालसा नहीं थी।

वह नाविक उन विद्यार्थियों के साथ घूम रहा था। वह अब विद्यार्थियों के एक जलूस के बीच खड़ा था। एक विद्यार्थी गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा था, "साथियों, फोट के पास गोरी मिलिटरी पुलिस ने मजदूरों पर हमला कर दिया है। मजदूरों ने भी उसका तेजी से जवाब दिया। उनकी लारियां जला दीं। फिर तो फौजियों ने अंधाधुंध गोलियां मशीनगनों तथा ब्रेनगनों से लोगों पर चलायीं। वे पागल शिकारी कुत्तों की भांति जनता पर हमला कर रहे थे। अब हमें नौकरशाही की सबसे मजबूत फौज का मुकाबला करना है। वे बाग़ी जनता को कुचलना चाहते हैं। पर आजाद हिन्दुस्तान ने अपना सिर झुकाना नहीं सीखा है। जय हिंद !"

अब वे लोग लाल बाग पहुँच गये थे। पुलिस मजदूर चालों पर गोलियां बरसा कर चली गई थी। कुछ वालंटियर घायलों को अस्पताल

पहुँचा रहे थे। लारियों के मुसलमान ड्राइवरों की तत्परता देखकर उसे अचम्भा हुआ। उसने जहाज पर गोरों से सुना था कि हिन्दुस्तानी आपस में झगड़ते हैं, दंगा करते हैं; अंग्रेज चला जाय तो देश नेस्तोनाबूद हो जायगा। उसे याद आया कि बूढ़े खलासी ने जब जिन्ना साहब की तसवीर केबिन पर लगाने की कोशिश की थी तो कई साथियों ने मना किया था। आखिर उस बूढ़े की बात कोई काट न सका। वे मुसलमान ड्राइवर अपने हिन्दू भाइयों की मदद कर रहे थे। अभी घायल ठीक तरह से हटाये भी नहीं जा सके थे कि गोरों की एक लारी आ पहुँची। पागलों की भांति वे रायफल और टामीगन से गोलियां छोड़ने लगे। औरतें-बच्चे चीख उठे। कई घायल हुए और बहुत से मर गये। अब वे गोरे उतरकर पास की गलियों में अंधाधुन्ध गोलियां चलाने लगे।

जवाहर घायलों की सेवा कर रहा था। वे विद्यार्थी उसके साथ थे। उनकी टैक्सी के टायरों पर गोलियों के सूराख बन गये थे। वे वहाँ बड़ी देर तक रहे। शाम को लौट रहे थे तो मालूम हुआ कि बम्बई की सड़कों पर गोरी पलटनें खड़ी हैं। उनके पास टैंक, ट्रक, ब्रेनगन कैरियर भी हैं। सड़कों पर बच्चों तथा औरतों की चीख और घायलों के कराहने के शब्द सुनाई पड़ रहे थे। किसी के सीने, तो किसी के सर, किसी के पाँव......सब ही अंगों पर गोलियाँ लगी थीं। मिलिटरी वालों के ट्रक सड़कों पर एक कोने से दूसरे कोने तक दौड़ रहे थे। बन्दूक और मशीनगनों के मुंह खोल दिये गये थे। जिधर भी लोग खड़े मिलते थे, उधर ही हमला शुरू हो जाता था। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वे सब गोरे सिपाही ही थे। आज अंग्रेजों को हिन्दुस्तानी सिपाहियों पर कोई भरोसा नहीं रह गया था। उनको यह डर था कि हिन्दुस्तानी फौजें अब जनता के आदेश पर चलती हैं, मालिकों के नहीं। फिर भी जनता उस फौज का मुकाबला कर रही थी। गोली का भय जनता के दिलों से उड़ गया था। चारों ओर दूकानें बन्द थीं।

खाली ट्राम और बसें खड़ी थीं। लोग नारे लगा रहे थे। गोली खाकर, 'जय हिन्द' के साथ वे अन्तिम हिचकी लेते थे। सड़कों पर मुर्दे दीखने लगे मानो कि वहां महा श्मशान हो। वे ऊँची-ऊँची वैभवशाली इमारतें मूक-सी खड़ी उन वीरों का अभिनन्दन कर रही थीं। कलकत्ते की सड़कों पर निकम्मी नौकरशाही ने कुछ साल पहले भूख से तड़पा-तड़पाकर देशवासियों को खूब मारा था। आज बम्बई की सड़कों पर भारतवासी उसकी गोलियों के शिकार हो रहे थे।

सितारे लगे हरे झण्डे वाली दो लारियां उधर से गुजरीं। वे कुछ देर रुकी रहीं। मुर्दों को देखकर वह पहचानने लगे कि मुसलमान तो नहीं हैं। अब कोई माइक्रो-फोन पर से बोला, "मुस्लिम लीग का ऐलान है कि इस हड़ताल में मुसलमान शामिल न हों।"

मुसलमान विद्यार्थी हंस पड़े। मुस्लिम नेशनल गार्ड वाले चले गये थे। वे केवल मुसलमान जख्मियों तथा मुर्दों को उठाने के लिये आये थे। जवाहर ने मन ही मन सोचा कि इन लोगों में यह भेद क्यों है। जहाज का बूढ़ा खलासी उनको कुरानशरीफ सुनाया करता था। वह अपने मजहब का पक्का था। वह भी तो एक गरीब किसान का ही बेटा था। मज़हब से बढ़कर उसने इन्सान को प्यार करना सीखा था। जब पहले-पहल जवाहर जहाज पर बीमार पड़ा तो उस बूढ़े ने रात-दिन एक करके उसकी सेवा की थी। खुदा से दुआ मांगी थी कि उसे चंगा करदे। वह उसके सिरहाने बैठकर कुरानशरीफ़ पढ़ा करता था। उस बूढ़े ने खुद ही वह सितारे वाला हरा झण्डा लगाया था। तीनों झण्डों को फहराता देखकर उसकी आंखों पर अजीब चमक आई थी। वह बोला था कि साठ साल की गुलामी काटकर आज उसे आजादी मिली है। पांच साल की अवस्था में जागीरदार के यहां हुक्का भरने की नौकरी की थी। फिर पंखा खींचा। शहर में एक छापाखाने में कम्पोजिंग सीखा और पिछली जर्मनी की लड़ाई में फौज में भरती हुआ था वह खलासी जिस आज़ादी की

बात सोचता है; उसे शायद वे लोग नहीं जानते हैं। वह बूढ़ा उस सितारे वाले झण्डे की शान के लिये आसानी से मर सकता है। जब ट्रक पर फहराते हुए उस झण्डे का कोई विशेष महत्व नहीं है।

अब वे चुपचाप एक गली को पार करके आगे बढ़ गये। वह बहुत थक गया था। एक सुरक्षित स्थान पर पहुँचकर वे रेस्तोरां में घुसे। वहां खासी चहल-पहल थी। लोग सुना रहे थे कि दादर में कुछ राह चलती औरतें भी गोलियों की शिकार हुईं। खबर गरम थी कि हवाई जहाजों से गोलियां छोड़ी गई हैं। लोग गुस्से से उमड़ रहे थे। वह चुपचाप चाय पी रहा था! एक बिस्कुट का टुकड़ा उसने दांतों से तोड़ लिया। एक बार उसने दूकान पर सजी हुई चीज़ों पर नजर डाली। वे विद्यार्थी तो लोगों के साथ बातें कर रहे थे। गोलियों की बातें, लोगों की हत्यायें, बच्चों की जानों का मिट जाना। सबके मन में भारी घृणा उमड़ रही थी। वे नेताओं को कोस रहे थे, जिन्होंने हड़तालियों से अपने को अलग रखने की चेष्टा की थी। वे जनता की बहादुरी के किस्से सुना रहे थे। एक सड़क पर जनता सौ सिपाहियों से तीन घण्टे तक मोरचा लेती रही। पुलिस वाले भाग गये थे। शहर के कोने-कोने से दर्दनाक समाचारों को सुन कर सबका दिल दहल उठता था। नागरिकों ने मिलिटरी का ऐसा पागलपन पहली बार देखा। अस्पताल घायलों से भरे हुए थे। मुर्दा-घरों में लाशों के अम्बार लगे थे। सड़कें खून से लथपथ थीं।

जवाहर घूँट-घूँट करके चाय पी रहा था। एक पारसी सज्जन एक विद्यार्थी को बता रहे थे कि मिलिटरी ने 'दमदम' गोलियाँ चलायी थीं। वैसी गोली शरीर के भीतर घुसकर बड़ा सूराख बना देती हैं। वे बड़ी खतरनाक होती हैं।

लेकिन वे विद्यार्थी चुपचाप उठ गये थे। तभी बाहर शोर-गुल सुनायी पड़ा। एकाएक गोलियाँ चलने लगीं, तभी रेस्तोरां के भीतर भी

वे फायर करने लगे। लोग घायल हुए। एक गोली जवाहर के हाथ पर भी लगी और प्याला वहीं छूट गया। कुछ देर के बाद गोलियों का चलना बन्द हुआ। जवाहर ने हँसकर रूमाल से अपना घाव बांध लिया। उसपर से खून टपक रहा था। वह सावधानी से उठा और पानी के नल के पास खड़ा होकर उसे धोता हुआ बोला कि गोली आर-पार निकल गयी है, डर की कोई बात नहीं। उसने एक साहब से रेशमी टाई मांग कर उसे जला लिया और उसकी राख घाव पर भरकर रूमाल से उसे बांध दिया। लड़के दंग रह गये ! दूकान से निकलकर उन्होंने एक टैक्सी पकड़ी और चुपचाप अपने बोर्डिंग की ओर रवाना हो गये। रात हो चुकी थी। सड़कों पर मिलिटरी लरियाँ दौड़ रही थीं। जवाहर आंखें फाड़-फाड़कर चारों ओर देख रहा था। उसकी समझ में वह स्थिति नहीं आई। प्रत्येक के हृदय में एक नयी उमंग और हूक उठ रही थी। वह अपने उस उत्साह पर स्वयं कुछ नहीं सोच पा रहा था।

अब वह चुपचाप एक कमरे में लेटा हुआ था। उसका सारा बदन दुखने लगा, हाथ के बासी घाव में भारी पीड़ा हो रही थी। उसे बेहोशी-सी आने लगी। तभी उसने सपना देखा कि वह साहूकार अपनी वसूली करने आया है। पटवारी के नौकर ने उसके सारे गाय, बैल, भैंस और घर के सामान का नीलाम कर लिया है। उसकी मां और पत्नी एक ओर खड़ी रो रही थीं। वह वसूला लेकर गुस्से में उसपर कूद पड़ा। किन्तु एकाएक उसकी नींद टूट गई। उसका घाव दुख पड़ा। वह चीख उठा। अब एकाएक उसे समुद्र की यात्राएँ याद आने लगीं। छोटी-छोटी घटना तक चमकने लगी। वह उसकी प्रेयसी, वे नाविकों की पत्नियां ! वह परिवार नाविकों का आतिथ्य करता है। नाविकों की दुर्बलताओं से वे भली भांति परिचित हैं। वे उसे सब अपने-से लगे थे मानो कि वह उनको वर्षों से जानता हो। वे उसकी छोटी-छोटी बात की

फिक्र रखते थे। ऐसा अपनपा उसने आज तक कहीं नहीं पाया था। कभी एक दिन वह उस युवती से मिलने के लिये जरूर जायेगा। उसके छोटे भाई तो तीन दिन में ही उससे बहुत हिल-मिल गये थे। उसे वह गृह-स्वामिनी भी याद आई। आज वह उसे क्षमा नहीं कर सकता है। आज वह भली भांति समझता है कि उसने तनख्वाह न देने के लिये ही दस्तबन्द खोने का झूठा बहाना बनाया था। वह गृहस्वामी से कहेगा कि चुपचाप उसको सौ रुपये दे दें। अन्यथा वह सेंध लगवाकर वहां चोरी करवा देगा! आज उसके मन में प्रेम और घृणा की दो धाराएं साफ साफ बह रही थीं। जो अपने थे उनके लिये प्यार, मोह और ममता के बन्धन खुले हुए थे, जबकि दूसरों के लिये क्रोध उमड़ पड़ता था।

वे लड़के चुपचाप उसके पास बैठे हुए थे। वह उनको जानता नहीं, पहचानता नहीं। बैरिकों में लौटकर वह जायेगा तो सब बातें सुनायेगा। क्या वहां भी घमासान लड़ाई हुई होगी? उसे वहां का कुछ ज्ञान नहीं है। वह विशाल समुद्र और उसकी लहरें भी उसकी आंखों के आगे नाचने लगीं। रह-रहकर घर की याद आ रही थी। वह अपनी पत्नी से माफी मांग लेगा। साहूकार को जमीन बेच-कर कहीं दूर देश में नौकरी करेगा। मां और पत्नी को साथ ले जायेगा। फिर उसे अपनी चार इञ्च वाली तोप की याद आई। कौन जाने, उसे चलाने की जरूरत पड़ी होगी, वह वहां पर होता तो ठीक तरह से गोले भर देता। वे हार नहीं सकते हैं। उस बूढ़े खालसी को वह नहीं भूला, जो कि अपने हिस्से का अच्छा खाना उसे खाने के लिये देता हुआ कहता था कि उसकी उम्र का एक बेटा खानसामा है। वह उसे खतरा वाला काम नहीं करने देता था। अल्लाह से दुआ माँगता था कि लड़ाई जल्द खत्म हो जाय।

अब उसे नींद आ गई थी। सुबह को नींद टूटी तो आठ बज गये थे। एक लड़का चाय बना रहा था, दूसरा अख़बार पढ़ता हुआ अपने साथी से

गुस्से में कह रहा था, "नेताओं ने जहाजियों के साथ गद्दारी की है। सरदार पटेल की बात मानकर आत्मसमर्पण किया गया है। नेताओं ने नेतृत्व से किनाराकशी की इसी से जहाजियों की हिम्मत टूट गई। जब बम्बई की सड़कों पर घमासान युद्ध मचा हुआ था और जनता मिलिटरी के ट्रकों और मशीनगनों से मोर्चा ले रही थी, कॉंग्रेस के नेता हड़ताल तोड़ने की कोशिश कर रहे थे।

जवाहर एकाएक उठ बैठा और उनके आगे खड़ा हो गया। उसके हाथ में अभी तक बड़ी पीड़ा हो रही थी। उसका चेहरा सफेद पड़ गया था। उसने तेजी से पूछा, "क्या जहाजियों ने हथियार डाल दिये हैं?"

सब अवाक् से उसकी ओर देखते रहे। वह आंखें फाड़-फाड़कर अख़बार की ओर देख रहा था। उसके चेहरे पर मौत की-सी मायूसी छा गई। तभी एक ने सावधानी से कहा, "पटेल और जिन्ना दोनों ने यही सलाह दी है।"

वह चुपचाप चारपाई पर जाकर लेट गया, मानो कि उसकी कमर टूट गयी हो। फिर वह उठा और गुस्से में बोला, "आप झूठ बोल रहे हैं। हड़ताल कभी नहीं टूट सकती है।" उसकी आंखों में आंसू भर आये। वह फूट-फूटकर रोने लगा। फिर उसकी आंखें मुंद गईं। वह बेहोश हो गया था।

तभी एक विद्यार्थी बोला, "नेताओं ने जहाजियों के हाथ-पांव बांधकर उन्हें दुश्मनों को सौंप दिया है। देश को ऐसा ही शर्मनाक समझौता भगत सिंह को फांसी चढ़ाते समय करना पड़ा था। यह राजनीतिक चाल और जनता के साथ सरासर धोखेबाजी है।"

शहर में कर्फ्यू था। जहाजियों की हड़ताल टूट चुकी थी। पर जनता पीछे हटने के लिये तैयार नहीं थी। उनके दिलों में

विद्रोह की आग सुलग रही थी। वे नेताओं की बात मानने के लिये तैयार नहीं थे। जवाहर चुपचाप बड़ी देर तक लेटा ही रहा। जब उसे होश आया तो उसने अपने को अकेला पाया। वे विद्यार्थी न जाने कहाँ चले गये थे। उसे बड़ी प्यास लग रही थी, वह बाहर निकला और नल पर जाकर भर पेट पानी पिया। उसका सारा बदन दुख रहा था। वह समझौते वाली बात उसके मन में चक्कर काट रही थी। फिर सोचा उसने कि अब वहां लौटकर नहीं जायेगा, उस गुलामी में, वे अफसरों की गालियाँ......! अब वह सड़क पर पहुँच गया था। वहां वही गोरे फौजी तैनात थे। लेकिन वह तो नशे में-सा जनता की उस भीड़ में मिल गया, जो कि आजादी के नारे लगा रही थी। वह उस नये प्रवाह में बह गया। कुछ लोग दो मिलिटरी ट्रकों को तोड़ रहे थे। वह भी एक नये जोश के साथ उनके साथ हो लिया। तभी सामने से कई ट्रक आते हुए दिख पड़े। वे सब किनारे की छोटी-छोटी सड़कों पर चले गये। उस चौड़ी सड़क पर फट-फट फट करके मशीनगन के चलने की आवाज आ रही थी। जनता पागल हो गयी थी। उनका अपने प्राणों का कोई मोह नहीं था। उसे जनता के उस जोश को देख-कर विश्वास नहीं हुआ कि जहाजियों की हड़ताल टूट गयी होगी। अखबार वाले झूठी खबरें भी तो छाप देते हैं।

वह फिर आगे चौड़ी सड़क पर आ गया। यह देखकर आश्चर्य हुआ कि फौजी मकानों के भीतर घुसकर लोगों को पकड़ रहे हैं। लोग अपने सथियों को छुड़ाने के लिये उन पर टूट पड़े। फिर मिलिटरी वालों ने गोलियां चलाईं। भीड़ किनारे वाली सड़कों के भीतर भाग गई। जवाहर को वह आंख-मिचौनी बहुत पसन्द आई। तभी उस रास्ते से एक अखबार वाला गुजरा। वह चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा था कि जहाजियों की हड़ताल टूट गई है। जवाहर ने उसे देखा और हँस पड़ा। उसने लोगों से पूछा तो सबने कहा कि यह सच्ची खबर है। वह फिर

भी उसको समझने की चेष्टा करने लगा कि वे लोग तो फौलाद की भांति मजबूत थे। अब उसे उन लोगों के साथ जाने का साहस नहीं हुआ। उसका दिल टूट गया और अपने पर से विश्वास हट गया। निराशा की एक घनीभूत पीड़ा मन में फैल गयी। वह कोई ठीक-सी बात नहीं सोच पाता था! वह तो निरुद्देश्य-सा इधर-उधर घूमता रह गया। उन फौजियों को देखकर उसका हृदय घृणा से भर जाता था।। फिर सोचता था कि अब उनको कभी भी आजादी नहीं मिलेगी। उस यूनियन जैक का फिर फहराया जाना सोचकर वह बहुत दुःखी हुआ। और वे आजादी के झण्डे...? मौत उसे गुलामी से प्यारी लगी।

लोग तितर-बितर हो गये थे। वह अकेला ही-सा रह गया। सड़कों पर इक्के-दुक्के मुर्दे पड़े हुए थे। कहीं-कहीं घायलों का कराहना भी सुनाई पड़ रहा था। एक घायल को देखकर उसका दिल पसीज गया। वह पिछले दिनों की बातें सोचने लगा। 'तलवार' से हड़ताल शुरू हुई थी। उसे तोड़ने के लिये बड़े-बड़े अधिकारी आये। उनकी अपनी मांगें थीं, अच्छा खाना और राशन दो, गोरों के बराबर वेतन दो। वह आग सब जगह फैल गयी। उन लोगों ने अधिकारियों को कैद कर लिया था। अब जहाजों पर उनका अपना राज्य स्थापित हो गया था। यदि हड़ताल टूट गई होगी तो वे सब किस भाँति फिर उन जहाजों पर लौटेंगे? उसने बार-बार निश्चय कर लिया था कि अब वह वहाँ नहीं जायेगा। फिर वह आगे जीवन के बारे में सोचने लगा। क्या वह अपने गाँव लौट जाये? पर वह उस साहूकार के आगे क्या मुँह लेकर खड़ा होगा? वह उसका अभी तक कर्जदार है। विचार करके उसने तय कर लिया कि वह गांव जायेगा। उसे साहुकार का कोई डर नहीं है। वह साफ कह देगा कि मुकदमा लड़ लो। फिर भी मन में बात उठी कि वह भगोड़ा है। गांव

में भी उसकी कोई इज्जत नहीं होगी। कौन जाने वह पकड़ लिया जाय और फिर कोर्ट मार्शल में उसे जेल हो जाय? अतएव घर जाने का सवाल ही नहीं उठता। उसके हृदय पर गहरी निराशा छा गई। लेकिन उसे याद आया कि उसके पास दो दस्तीबम हैं। वह उनसे अफसरों को मारकर कोर्ट मार्शल में खुशी से हाजिर होगा। आशा की एक सुखद बयार हृदय में बहने लगी। यह उसे अपने जीवन की सबसे बड़ी जीत-सी लगी। वह गुलामी की जिन्दगी बसर नहीं करना चाहता है। आज वह अभी तक एक स्वतन्त्र नागरिक है। वह अपनी हार कदापि स्वीकार नहीं कर सकता है। वह जिन जंजीरों को तोड़कर चला आया है, उनको टूटी ही पड़ी रहने देना चाहता है।

तभी उसने सामने आग की लपटें उठती हुई देखीं। लोगों में वही जोश था। कांग्रेस-शाँति-दल की लारियों से स्वयंसेवक चिल्ला-चिल्लाकर माइक्रोफोन पर कह रहे थे, "यह गुंडागिरी को बन्द करो। यह आजादी का सच्चा रास्ता नहीं है।"

वह चुपचाप उन लारियों पर फहराता हुआ तिरंगा झंडा देखता रहा। उनका उसने बचपन से आदर किया है। उन स्वयंसेवकों की बात उसकी समझ में नहीं आई। गोली तो अंधे फौजी चला रहे थे। वे गुंडागिरी कर रहे थे, न कि जनता? उनकी गोलियों से हजारों घायल हुए और सैकड़ों मर गये थे। महात्मा गान्धी का नाम उसने सुना था। मन में सन्देह-सा उठा कि क्या वे भी उनका साथ नहीं देंगे। गान्धीजी की कई कहानियाँ उस बूढ़े खलासी ने उसे सुनायी थीं। एक बार उस बूढ़े ने गान्धी जी को एक जल्से में बोलते हुए भी देखा था। अब वह कांग्रेस वालों की लारी भी चली गई थी। कुछ देर के बाद हरे झण्डे वाली मुस्लिम लीग वाली लारी आई। वे भी सुना रहे थे कि यह गुंडागिरी है। एक बार फिर चैतन्य हुआ। उस बूढ़े खलासी ने तो केबिन पर जिन्नासाहब का फोटो टाँगते हुए कहा था, "कायदे-आजम,

हमारी शान कायम रखना। हमने बड़ी मुसीबतें सहकर यह आजादी पाई है।"

शाम हो रही थी। वह चुपचाप सड़कों पर घूम रहा था। आगे उसे बहुत बड़ी भीड़ खड़ी हुई मिली। लेकिन एकाएक मिलिटरी लारियाँ आईं और गोरों ने उनपर गोलियाँ छोड़नी आरम्भ करदीं। खट, खट, खट करके टामीगनों से गोलियाँ बरस रही थीं। एक जवाहर की कमर पर लगी और वह ज़मीन पर गिर पड़ा। उसके पास ही कोई घायल कराह रहा था। एक बार उसने उठने की चेष्टा की पर असफल रहा। उसे गश आ गया था। फिर जैसे उसने देखा कि वह अपने गाँव पहुँच गया है। वहाँ वे लोग पटवारी और साहूकार को फाँसी देने के लिये ले जा रहे हैं। गाँव के नौजवान ढोल बजाते हुए आगे बढ़ गये। कई गाँवों के लोग उस मेले को देखने आ रहे हैं। पर एकाएक उस साहूकार का चेहरा बिगड़ गया। वह तो वीभत्स-सी हँसी हँस पड़ा। ज़वाहर को चेतना आई। एक लारी का पहिया उसके पाँव के ऊपर से निकल गया था। कहीं पास से किसी के रोने की आवाज कानों में पड़ रही थी। उसे मूर्छा आ गई।

फिर जैसे उसने देखा कि वह उस चार इञ्च वाली तोप को भर रहा है। उनका कप्तान हुक्म दे रहा है कि जल्दी-जल्दी हमला करो। सामने गोरे सिपाही खड़े हुए खिलखिलाकर हँस रहे थे। जहाज पर तिरंगा, नीला और लाल झंडे फहरा रहे थे। वह बूढ़ा खलासी उसके पास आकर कहता था, "शाबास बेटे, यह आखिरी जंग है।" अब उस खलासी के चेहरे पर खून की बूँदें चमकने लगीं। उसकी सफेद दाढ़ी भी खून से तर हो गई थी। वह बहुत डरावना लगता था। उसका सारा शरीर काँप उठा! फिर चेतना आई। केबिन से खून की धारा बह

रही थी। उसका दिल डूब रहा था। पास ही दो-तीन व्यक्ति पड़े हुए थे। वे हिलते-डुलते नहीं थे। वे मर गये थे और वह......? उसे अपने गाँव के पास बहते हुये कुदरती नालों की याद आई। सुना कि वहाँ भूत रहते हैं। भय से वह सिहर उठा। तभी कई लारियाँ एक के बाद एक करके बढ़ गयीं। कुछ देर बाद वहाँ चुप्पी छा गई। दोनों ओर की ऊँची दीवारों में भी कहीं जीवन न था। हाँ, उनको चीरती हुई छोटी-छोटी सड़कों पर से नारे सुनाई पड़ते थे, 'साम्राज्यशाही का नाश हो!' 'जहाजियों की हड़ताल जिन्दाबाद!'- 'अंग्रेजों भारत छोड़ो'!!! 'जय हिन्द......!'

जनता की एक भीड़ उधर से गुजरी। वह घायलों और मुर्दों को उठा रही थी। जवाहर ने आँखें पूरी खोलकर उनको पहचानने की चेष्टा की, पर फिर वह बेहोश हो गया। उसने एक स्वप्न-सा देखा कि नीले समुद्र में उनका जहाज बढ़ रहा है। उसका भोंपू बज रहा था। एकाएक उनके जहाज पर काली चिड़ियों के एक झुण्ड ने हमला कर दिया। फिर वे हवाई जहाज बन गईं और जहाज पर गोलियों की वर्षा आरम्भ कर दी। उसने अपनी तोप भरने की चेष्टा की पर असफल रहा। वे हवाई जहाज गोले बरसा ही रहे थे। अब तो समुद्र का पानी सूखने लगा। बड़ी-बड़ी मछलियाँ, मगर तथा अजीब-अजीब से भयंकर जानवर जहाज पर चढ़ने की चेष्टा करने लगे। उसका हाथ गोले नहीं भर पा रहा था। एक तेज सीटी की आवाज कानों पर पड़ी, वह चौंक उठा।

अब उसका शरीर थक रहा। दिल डूबने लगा। कुछ लोग उसे स्ट्रेचर पर लादकर ले जा रहे थे। फिर उसने अपने को सैकड़ों लाशों के बीच पाया। उसे फिर एक नयी चेतना आई। वह चारों ओर पड़े मुर्दों को आंखें फाड़-फाड़कर देखता रहा। किसी का सर फटा था, कोई सूजकर भयानक लगता था। एक की कनपटी पर गोली

का घाव था । वह उनको पहचान नहीं पा रहा था । एक बार उस मजदूर की याद आई……

उसका मन घबरा उठा । सांस तेज चलने लगी । उसे ज्ञात हो गया कि वह मर रहा है । घर की याद-सी आई, घर वह नहीं जा सकता है । पटवारी-महाजन ने उसे तबाह किया था । जहाज की वह नौकरी भी सुखकर नहीं थी । पर वे विद्यार्थी तो कहते थे कि नेताओं ने दगा दी, अन्यथा क्रान्ति सफल हो जाती ! उसने निरर्थक-सी उठने की चेष्टा की……

कुछ देर के बाद डाक्टर ने उस पर मुहर लगाकर उसे 'पोस्ट मार्टम' के लिये भेज दिया था ।